श्रीमद् देवचंद्र

(भाग २)

संशोधक,

सद्गत गुरुवर्य श्रीमद्—

बुद्धिसागरसूरिजी.

—⊱◈⊰—

छपावी प्रसिद्ध करनार,

श्री अध्यात्मज्ञान प्रसारक मंडळ.

हा. वकील मोहनलाल हीमचंद—पादरा.



द्वितीयावृत्ति प्रत १०००

सं० १९८५ इ. स १९२९

भावनगर-धी आनंद प्रिन्टींग प्रेस में शाह गुलाबचंद लल्लुभाइने मुद्रित किया

किंमत रु २-८-०

निवेदन.

संवत् १९६८ ना चैत्र मासमां मद्गत गुरुवर्य श्रीमद् बुद्धिसागर सूरीश्वरे मने तथा म्हारा महाध्यायी बंधुओने आग्रह-पूर्वक प्रेरणा करी के श्रीमद् देवचंद्रजी महाराजना बनावेला तमाम ग्रंथो मेळवी छपाववामां आवे तो घणो लाभ थाय. तेओश्रीनी ते सूचना शिरोधार्य करी श्रीमद् देवचंद्रजी महाराजना बनावेला ग्रंथो मेळववा प्रवृति शरु करी. घणे स्थळे पत्रो लखी माणसो मोकली जाते जइ विगेरे तजवीजथी जेटला ग्रंथो मळ्या ते तमाम श्रीमद् देवचंद्र भा. १–२ ए नामथी छपावी प्रकट कर्या. ते ग्रंथोनी तमाम नकलो टुंक वखतमां खपी जवाथी ने मागणी चालु रहेवाथी तेनी बीजी आवृत्ति बहार पाडतां हर्ष थाय छे.

प्रथम आवृत्तिनी शरुआत वखते श्रीमद् देवचंद्रजी महाराजना तमाम ग्रंथो मळेला नहिं होवाथी तेमां कोइ जातनो क्रम सचवायेलो नहि. जेम जेम ग्रंथो मळता गया तेम तेम छपाता गया. जेथी आ बीजी आवृत्तिमां ते ग्रंथोने त्रण विभागमां वहेंची प्रथम भागमां गद्य, आ बीजा भागमां पद्य, अने त्रीजामां संस्कृत ग्रंथो छपाववानी योजना राखी छे. ते मुजब प्रथम भाग जे प्रसिद्ध थइ चुक्यो छे तेमां (१) आगमसार (२) नयचक्रसार (३) गुरुगुण छत्रीशी (४) कर्मग्रंथ १ थी ५ टबार्थ (५) कर्म संवेद्य प्रकरण (६) विचार रत्नसार (७) छूटक प्रश्नोत्तर (८) कागळो, ए रीते ग्रंथो दाखल करवामां आव्या छे. आ ग्रंथो मुख्यत्वे करीने द्रव्यानुयोगना छे. आ बीजा भागमां गद्य विभाग छे. तेमां ध्यानदीपिका-चतुष्पदी (२) द्रव्य प्रकाश (३) अध्यात्मगीता (४) स्नात्रपुजा (५)

नवपद पूजा (६) वर्तमान चोवीशी (७) वीशी (८) अतित चोवीशी (९ बाहुजीन स्तवननो टबो (१०) वीर निर्वाण ढाळो (११) मुनिनी पाच भावना (१२) अष्ट प्रवचन मातानी सज्जायो (१३) साधुपद स्वाध्याय (१४) छुटक स्तवनो सज्जायो तथा चैत्यवदनो एम १४ रत्नो जेवा ग्रथोनो समावेश करवामा आव्यो छे

आ ग्रथनु कद मोटु थइ जवाथी तेमज छूटक उपयोगमां आवे ते माटे आ ग्रन्थमाथी चोवीशी–वीशी तथा गत चोवीशी छुटा पुस्तकरुपे जुदी पाका मळग छींटना पुठामा बधावी छे जेनी किंमत मात्र ०–१२–० जे पडतरथी ओछी राखवामा आवी छे

प्रथम भागनी पेठे आ बीजो भाग पण द्रव्यानुयोगनोज होवाथी गुरुगमपूर्वक वाचवामा आवे तो घणो लाभ थइ शके ए नि शशय छे सशोधनना परिणामे अत्यार सुधीमा मळेली श्रीमद्नी तमाम कृतिओ आ ग्रथोमा आवी जाय छे छता पण कोइ ज्ञानरसीक बधुने श्रीमद्नी कोइ अप्रकट कृति मळी आवे तो अमोने तेनी खबर आपवाथी ते प्रकट करवा प्रयत्न करवामा आवशे

प्रथम भागनी तेमज आ बीजा भागनी दरेकनी किमत पडतरथी ओछी मात्र रु २–८–० राखवामा आवी छे कारण के सद्गतश्रीनो तेओ उपदेश हतो अने मडळनु तेवुज धोरण छे

सद्गत मुनिवर्य, श्रीमद् बुद्धिसागर सूरिजीनी सतत प्रेरणा अने सहाय न होत तो आ ग्रथो मडळ छपावी बहार पाडी शकत नहिं तेथी तेओश्रीनो जेटलो आभार मानीए तेटलो ओछो छे

श्रीमद्ना पूर्ण भक्त अने अत्यत रागी बालुचर निवासी श्रीयुत अमरचन्जी बोथरा तरफथी श्रीदेवचद्रजीना पुस्तको मेळवी आपवामा अमने तन मन धनथी जे सहाय मळी हती ते बदल

तेमनो उपकार मान्या सिवाय अमो रही शकता नथी. तेमना पूर्ण राग प्रदर्शित करता एक पत्रमांथी नीचेनो उतारो आपीए छीए.

" आग्गु कमसे कम हजार पुस्तक छपवाइएगा ऐसा हमारा अनुमान था इसिसे १५१ पुस्तक भेजने को लिखा था लेकिन पुस्तक कम छपेगी तो पु. १५१ भेजनेकी जरुरत नहि है पुस्तक छपवानेके खर्च वावत रुपीया चार पांच रोजमें भेजेंगे.

श्रीमद् कृत समस्त ग्रंथादि छपानेके विचार है एक अक्षर भी छोडनेका इरादा नहि है लिखा सो वांचकर खुशी भये.

पूज्याचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरजी सूरिजी तपागच्छके होकर श्रीमद् देवचंद्रजी महाराज के प्रति इतनी भक्ति रखते है इह इस कालमें अपूर्व है. इस लिये श्री आचार्य बुद्धिसागर सूरिजीके चरणमें वारंवार नमस्कार हो. "

आ ग्रंथ छपाववामां परम पूज्य साध्वीजी महाराज श्रीमती ज्ञानश्रीजी—वल्लभश्रीजी महाराजना सदुपदेशथी सुरत निवासी जवेरी कल्याणचंद घेलाभाइ एमणे रु. ३५०) नी मदद आपी छे ते माटे तेमनो धन्यवाद पुर्वक आभार मानवामां आवे छे.

पादरा.
सांवत्सरीक महापर्व.
सं. १९८५

वकील मोहनलाल हिमचंद.

—※◎※—

प्रस्तावना.

"If poetry be an interpretation of life through the imagination and the feelings, its essential greatness must ultimately be judged by the greatness of the power with which it handle's life's greatest and most abiding things–the things which belong to our highest experiences and interests."

—William Henry Hudson

(भावार्थ —जो काव्य ए कल्पना अने लागणीओ द्वारा जीवननी आलोचना ज होय, तो आपणा उत्कृष्ट अनुभव अने परमार्थने लगती जीवननी सर्वोत्तम अने चीरजीवी बावतोने ते जे जोमथी चर्ची शके तेनाथी ज तेनी खरी महत्ता अकावी जोइए वी हडसन)

घणी वखत एवु बने छे के लेखक ज्यारे कवि अने गद्यकार बन्ने तरीके उत्तम होय छे त्यारे तेनु पद्य स्वाभाविक ज गद्य उपर सरसाइ भोगवे छे अने गद्य प्रमाणमा काइक सदिग्ध भासे छे श्रीमद् देवचद्रजी कवि अने गद्यकार बन्ने हता तेमनी गद्यशैली स्पष्ट अने सरळ छे, छता तेमनी कीर्ति कवि तरीके जेटली देदिप्यमान छे तेटली गद्यलेखक तरीके नथी दुनियाना कोइ पण लेखकनी कृतिओ तपासता आ सत्य तरी आवशे आ वस्तुस्थितिना घणा कारणो छे काव्य स्वभावतः ज स्हेलाइथी याद रहे तेवु, अवतरणरूपे टाकी शकाय तेवु, गेय होवाथी प्रासादिक, कर्णप्रिय अने लागणीओने वेग आपी झणझणावी मूके तेवु छे. मानव हृदयना मृदुमा मृदु अने कठोरमा कठोर भावोने

झीलवामां गद्य करतां पद्यमां एक कुशळ कळाकार वधु सप्रमाणता जाळवी शके छे; उपरान्त कल्पनानां उड्डयनो तेना बाह्यांगने ओजस्वन्तु बनावे छे.

श्रीमदे एक कवि तरीके ज साहित्यजीवनमां प्रवेश कर्यो अने सारा गद्यकार होवा छतां कवि तरीके ज तेओ जीव्या अने सीधाव्या. श्रीमद्नुं गद्यकार तरीकेनुं अवलोकन आ पुस्तकना प्रथम भागनी प्रस्तावनामां करवामां आव्युं छे, तेथी वाचक तेमना गद्य विषे परिचित छे एम मानीने मात्र तेमना कवि-जीवननो ज आ प्रस्तावनामां उल्लेख करवामां आव्यो छे. तेमनुं विस्तृत जीवन चरित्र जाणवानी इच्छावाळाए 'देव-विलास" तेमज संक्षिप्त जीवन माटे पहेला भागनी प्रस्तावना वांची लेवी.

श्रीमद् संस्कृत, व्रज, मागधी तेमज गुजराती एम चार भाषाओमां लखाण करी गया छे. प्रत्येकमां तेमनुं पांडित्य, विशाळज्ञान अने वाचनबाहुल्य प्रत्यक्ष थाय छे. कवि तरीके पण तेमनुं स्थान घणुं उंचुं छे.

तेमना कवननुं सामान्य अवलोकन करता पहेलां आ ग्रन्थमां आपवामां आवेलां पुस्तकोनुं क्रमशः विवेचन करी लइए.

श्री अध्यात्म ज्ञान प्रसारक मंडळनी नवी योजना प्रमाणे 'श्रीमद् देवचंद्र' नी द्वितीय आवृत्तिनी संकलनामां केटलाक फेरफारो करवामां आव्या छे. प्रथम भागमां मात्र गद्य साहित्य, बीजा भागमां फक्त पद्य साहित्य अने त्रीजा भागमां संस्कृत साहित्य आम त्रण भागमां श्रीमद्नी उपलब्ध बधी ज कृतिओ विभक्त करवामां आवी छे. ते योजनानुसार आ बीजा भागमां नीचेना ग्रन्थोनो समावेश थाय छेः—

(१) ध्यान दीपिका चतुष्पदी,

(२) द्रव्य प्रकाश,

(३) अध्यात्म गीता, स्नात्र पूजा, नवपद पूजा,

(४) वर्तमान जिन चोवीशी, विंशति विहरमान स्तवनो, अतीत जिन चोवीशी, परचुरण स्तवनो, थोयो, सज्झायो इत्यादि.

१ ध्यान दीपिका चतुष्पदी—श्री शुभचद्राचार्य रचित 'ज्ञानार्णव' नामना संस्कृत ग्रन्थ उपरथी चोपाइ अने सुदर ढालोमा प्राकृत भाषामा श्रीमदे आ ग्रन्थ आलेख्यो छे आ ग्रन्थनी साथे ज श्रीमद्नु कविजीवन अने आत्मजीवन शरु थाय छे तेओश्रीए वि स १७६६ मा सौथी प्रथम आ ग्रन्थ रच्यो ते वखते तेमनी उमर मात्र वीश वर्षनी हती आ कुदरतमा मारती छता अध्यात्म मार्गे वळेली युवानी जे फाल अर्पी शकी छे ते कदाच अनुभवना घडतरे घडायेलु वृद्धत्व पण न आपी शक्यु होत स्थळे स्थळे श्रीमद्नी तीव्र जाग्रतदशा अवबोधाय छे ध्यान-रसिक देवचद्र ज्या त्या झळकी उठे छे मूळ संस्कृत 'ज्ञानार्णव-'ने श्रीमद् तो घोळी, पी जइ, पचावी गया छे पण अन्य जनो अर्णवना खारने लीधे—संस्कृत भाषानी कठिनताने लीधे—तेनु जल-प्राशन न करी शक्या श्रीमदे तरतज ते जल गाळी खाराट सिवायनो नवीन अर्णव मधुरी गुर्जरीमा बनाव्यो नाम आप्यु ध्यानदीपिका चतुष्पदी लगभग बसो वर्षथी ते दीपिका अखड प्रकाश फेलावी अज्ञानी हृदयोना अधारा दूर करी रही छे

आ ग्रन्थमा ध्याननु सपूर्ण स्वरूप आलेखवामा आव्यु छे द्वादश भावना, रत्नत्रयी, पचमहाव्रत, ध्यान, ध्याता, ध्येय, प्राणायाम, मत्रसामर्थ्य, स्याद्वाद अधिकार इत्यादिकनु सूक्ष्म विवेचन छ खड अने अट्ठावन ढाळोमा युक्तिपूर्वक करवामा आव्यु

छे. ध्यान उपर जे जे पुस्तको आज सुधीमां लखायां छे तेमां आ ग्रन्थ खास भात पाडे तेवो छे.

तत्त्वज्ञाननो शुष्क विषय छतां श्रीमद् रसभरी रीते भाववाहक भाषामां उतारी शक्या छे. बाल जीवो समजी शके तेनी खास काळजी लीधी छे. सामान्य सरळता, स्पष्टता अने असंदिग्धता उपरान्त केटलीक ढाळो एवी सरस रीते योजवामां आवी छे के, वांचतां वांचतां वैराग्यना प्रशान्त रसमां गमे तेवो भोगलुब्ध मनुष्य पण लीन थाय. विषयने अनुरूपज भाषा होय, अने तेथी तत्त्वज्ञानथी भारोभार भरेलो ग्रन्थ पारिभाषिकताने लीधे कठिन लागशे एवो भय क्वचित् उत्पन्न थाय छे, छतां आंतरस्रोत अखंडित वह्य जाय छे ए निःशंशय छे.

बधी ढालो जुदा जुदा अभिनव रागोमां लखायेली छे. भाषा प्राचीन अने अर्वाचीन गुजरातीना मध्यगाळानी एटले बन्नेना गुणांशोने धारण करती होवाथी जोडणी अने रचनामां अत्यारना करतां कंइक भिन्नता छे. छतां शरुआतनी एकाद बे ढालो वांच्या पछी समजवामां अडचण आवे तेम नथी.

२ द्रव्य प्रकाश—गुजराती कविओमां कवि दयाराम व्रज भाषामां काव्यो करी गया छे. तेमना पूर्वे केटलाये दशकाओ पूर्वे श्रीमद् देवचंद्रजीए आ ग्रन्थ शिष्ट अने संस्कारी व्रज भाषामां रच्यो छे. परभाषा छतां श्रीमद्नो ते भाषा परनो काबु अजब छे. तेमांये द्रव्यानुयोग जेवा कठिन अने शुष्क विषयने आटली सुरुपता आपी श्रीमद् जे न्याय आपी शक्या छे ते तेमनी ते विषयनी सतत विचारणा अने अनुभवने आभारी छे. काव्यने माटे तद्दन अयोग्य जणाता विषय साथे काव्यदेवीए मैत्री साधी छे. मुख्यत्वे करीने "सवैया इकतीसा" मांज आखुं काव्य रचायुं छे, छतां तेमां अवैविध्य (monotony) दोष जरा पण नथी आवतो. आ

राग तेनी मधुरता तथा वेग माटे जाणीतो छे विचारोने संपूर्ण-पणे प्रदर्शित करवानो आमा पूरतो अवकाश छे. कारण तेनु चरण एटलु लांबु छे के गमे तेवा भावोना निरुपण माटे ते सुयोग्य छे

साचा देवचद्रनी प्रतिभा आ काव्यमा गुप्त नथी रहेती तेनु आत्मलाघव जोवा जेवु छे ग्रन्थ रचना माटे पोते माफी चाहे छे

" कोउ बाल मदमति चित्तमो करे उकती,
नभ के प्रदेश सब गनि देवो करसे,
" कोउ जन छीन तन पुरातन वयावीत,
वचन सो कहे एसो जुद्ध करो हरिसे,
" भूचर वामन मो सकति विनु कहे,
एसो करी भूजा में तो मेरुचूला परसो,
" तैसे में अलपबुद्धि महाशुद्ध ग्रथ मड्यो,
पडित हसेंगे निज ज्ञान के गहरसो

आटली नम्रता ज्यारा ज्ञानी महात्मा दर्शावे छे त्यारे आपणा अतर तेमना तरफना भक्तिभावथी उभराइ जाय छे, अने हालना अव्यवस्थित, मान भूख्या, गौरवनी पोकळ भावनाओमा राचता ग्रन्थकारो तरफ क्रोध नहि किन्तु खेद अने अनुकपा उत्पन्न थाय छे

द्रव्य प्रकाशमा श्रीमदे आचार्य, उपाध्याय, साधु, श्रावक वगेरेना घणा आदर्शो खडा कर्या छे एक एक आदर्श समीप हालनी जीवती जागती व्यक्तिओ कगाल अने वामनजी जेवी लागे छे आदर्श निरुपण पछी श्रीमद् वस्तुनी मीमासा तरफ वळे छे अध्यात्मरसीया देवचद्र अध्यात्मनी बाबतोनु सूक्ष्ममा सूक्ष्म वर्गीकरण करी एक सुसगत वैज्ञानिक पद्धतिथी (scientific

method) अने मानसशास्त्रनी (psychological) झीणवटथी अध्यात्मज्ञाननां कोकडां उकेले छे, अने अभ्यासक तेमज अध्यापक बन्नेनी दृष्टिए तेनी मीमांसा करे छे.

आखा काव्याभरणमां संख्याबंध उपमारत्नो सुंदर रीते जडवामां आव्यां छे. कडीये कडीये प्रासादिकता नीतरे छे. भाषा एटली मधुर छे के एक वखत ग्रन्थ हाथमां लीधा पछी पूरो कर्या सिवाय उठवानुं मन थतुं नथी: साचो विवेचक पहेली तकेज आ काव्यनी उत्तमता विषे प्रमाणपत्र आपी देशे.

मुलतान निवासी मिठुमल, भेरुदास इत्यादि अध्यात्म रुचिवंत श्रावको माटे आ ग्रन्थ रच्यो छे. तत्त्व जीज्ञासु गृहस्थ तेमज त्यागी बन्नेने माटे आ पुस्तक अत्यंत आवकारदायक छे.

३. अध्यात्म गीता वगेरे—चार अनुयोग पैकी द्रव्यानुयोगनो विषय श्रीमदे एटलो बधो हस्तगत करी लीधो छे के, तेमनुं गमे ते लखाण तपासतां अध्यात्म अने द्रव्यानुयोग सिवाय कांइज नजरे पडतुं नथी. द्रव्यानुयोग एटले जैन तत्त्वज्ञान. बीजा अनुयोगो पोतपोतानी मर्यादामां उपयोगी छे किन्तु सिद्धान्तना पाया-रुप आ अनुयोग सिवाय सत्य ज्ञान प्राप्ति नथी. अध्यात्म गीता पण एज अनुयोगने पुनः चर्चे छे, अने अध्यात्मरंगने वधु चमक-दार बनावे छे.

श्रीमद्नी स्नात्रपूजा पण तेमनी मुख्य भावनाने उज्ज्वलता आपे छे, अने प्रभु जन्मोत्सवनुं निमित्त लइ भक्तिने व्यक्त करे छे.

श्रीमद् रचित नवपदपूजा अत्यंत प्रसिद्ध छे. श्रीयशोविजय-जीना नामपर चालती नवपदजीनी पूजा ज्यारे मंदिरोमां भणावाय छे, त्यारे घणा थोडाने ख्याल हशे के, खरी रीते ते उपाध्यायजीनी सर्वांग कृति नथी. श्री यशोविजयजी प्रत्येना अत्यंत राग अने पूज्यभावने लीधे तेओना श्रीपालरासना चोथा खंडमांथी उत्तम

ढाळो चुटी काढी श्रीदेवचद्रजीए उलाला रची तेमा उमेर्या अने श्री ज्ञानविमलसूरिजीए काव्यो दाखल कर्या आम हाल प्रचलित नवपद पूजा आ त्रण महात्माओनी भेगी प्रसादी रुप छे श्रीमद्‌ना प्रख्यात उलाला आ पुस्तकमा दाखल कर्या छे

४. चोवीशी इत्यादि—श्रीमद्‌नी अत्यत लोकप्रिय अने उत्तमोत्तम कृति ते वर्तमान चोवीशीना चोवीश जीनेश्वरोनां स्तवनो जैन स्तवन साहित्यमा त्रण चोवीशीओ खास करीने अत्यत लोकप्रिय छे—श्रीमद् आनदघनजीनी, श्रीमद् यशोविजयजीनी अने श्रीमद् देवचद्रजीनी

- मात्र नानकडा चोवीश स्तवनोमा श्रीमदे जैनतत्त्वज्ञानना प्राथमिक सिद्धान्तो अति कुशळताथी चर्च्या छे बधा स्तवनोनो झीणवटथी अभ्यास करनार जोइ शकशे के, तेमा एवी सरस फुलगुथणी करवामा आवी छे के द्रव्यानुयोगनी सघळी पाखडीओ तेमाथी विकसे छे तेओश्रीए स्तवनोमा पोतानु हृदय ठालवी दीधु छे भक्तिनी प्रकृष्ट पराकाष्टामाथी जन्मेला काव्यो वाचक अने श्रोता बन्नेना दिल हरण करी ले छे, कल्पना अने भावनाओ मूर्तिमत स्वरुपे रजु थयेली होवाथी वाचनारनी ते प्रकारनी भावनाओने सतेज करे छे घणीये वखत सुमधुर स्वरे गवाता स्तवनो साभळी आपणा मस्तक डोलवा लागे छे, हृदयो नाचवा माडे छे अने आनदाश्रुओ चक्षुओनो त्याग करे छे

स्वानुभवरसिकताना पायापर रचवामा आवेला होवाथी श्रीमद्‌ना स्तवनोमा कृत्रिमता नथी आत्मप्रेम, प्रभुदर्शन इत्यादि भावनाओनी पक्वता तेमा दृष्टिगोचर थाय छे, अने ते ज कारणथी तेमाथी झरतो रस आत्माने प्रमोदकारी लागे छे

चोवीशीमा “ श्रीमद्‌नी काव्य कला कोइ वखत पाखो फफडावती गगनमडलमा विहार करे छे तो कोइ वखत सुरुपा

सुंदरीनी माफक रसिक जनोनां हृदय रंजन करती मानव भोममां विचरे छे. श्रीमद्नी कविता एकधारी अने सतत खळखळ वहेता झरणा समी मधुर रव करती चाली जाय छे. रस जमाववामां श्रीमद् एक्का छे. केटलीक ढाळो तथा स्तवनो वांचतां आपणने एमज थाय के पुनः पुनः वांच्या करीए. घणी वखत तत्त्वज्ञानथी भरपूर काव्यो समजतां वार लागे छे, छतां संदिग्धता टाळवा अने स्पष्ट थवा तेओए पूरतो प्रयत्न सेव्यो छे. श्रीमद्नी उपमाओ अत्यंत मनोहर अने मुग्ध बनावे तेवी छे. श्री नेमिनाथनुं आखुंय स्तवन श्रीमदनी आ शक्तिनी खात्री आपे छे. तेमना कवनमां ज्यां त्यां विशदता तरी रहे छे. चोवीशीनुं प्रथम स्तवन "ऋषभ जिणंदशुं प्रीतडी" पांडित्य अने कवित्वशक्तिनो उमदा नमूनो छे. आना करतांये भव्य करुण रसथी टपकतुं वीर विरहनुं व्यान करतुं 'श्री वीरप्रभुनुं स्तवन' श्रीमद्नां सर्व काव्योमां प्रथम उभे तेवुं छे. एनी स्पर्धा करी शके तेवां बीजां काव्यो साराय गुर्जर साहित्यमां गण्यां गांठ्यां ज छे. एकज काव्य श्रीमद्ने अमरता बक्षे तेम छे.

" नाथ विहुणुं सैन्य ज्यूं रे, वीर विहुणो रे संघ,
" साधे कुण आधारथी रे, परमानंद अभंगो रे—
वीर प्रभु सिद्ध थया.

" मात विहुणो बाल ज्यूं रे, अरहो परहो अथडाय,
" वीर विहुणा जीवडा रे, आकुल व्याकुल थाय रे—
वीर प्रभु सिद्ध थया.

सुंदर सरोदोथी गवातुं सांभळीने कोनी आंखोमांथी आंसु नहि टपके ? शब्दे शब्दे कारुण्य छवायुं छे. जीवनना सामान्य प्रसंगोमांथी लीधेली उपमाओ पण केटली रम्य छे ? तेमनी अध्यात्म होरी (फाग) साधकना तनमनाटथी भरेली छे.

" आत्मप्रदेश रंग थल अनोपम, सम्यग् दर्शन रंग रे ।
निज सुखके सधैया.
" तु तो निज गुण खेल वसंत रे,
निज सुखके सधैया."

('श्रीमद् देवचंद्र' प्रथम भागनी मारी प्रस्तावनामांथी)

आम श्रीमद् काव्यस्रोत वहावता, प्रभु प्रेममां झीलता, रस समाधिमां डुबकी दइ एवा तो गुम थइ जाय छे के, आपणने घणी वखते तेमना वचनामृतमांथी तेमने शोधी काढवा भारे थइ पडे छे अर्थात् काव्यना आत्मानी साथे स्वात्मानो तेओश्री एवो तो सुमेळ साधी दे छे के, तेमनु आत्मगुंजन काव्यमय बनी जाय छे

श्रीमद्नो प्रभुप्रेम अनुपम छे चोवीशामा स्तवनमां तेओ कहे छे:—

"तार हो तार प्रभु मुज सेवक भणी, जगतमा एटलु सुजस लीजे,
"दास अवगुण भर्यो जाणी पोतातणो,दयानिधि दीन पर दया कीजे

पूर्वार्धमां प्रभुने म्हेंणु मारी उत्तरार्धमा विनम्र बनी दयानी याचना करे छे. बीजे स्थळे तो तेओ प्रभु पासे दोडी जवा तलपी रह्या छे पण निरुपाय ! कारण पांखो अने आंतरचक्षु नथी.

" होवत जो तनु पांखडी, आवत नाथ हजूर लालरे,
" जो होवी चित्त आंखडी, देखत नित्य प्रभु नूर लालरे

आम छता तेमनी श्रद्धा आथळी नथी प्रभु केटले अंशे अने केवी रीते तारी शके छे तेनु तेमने साचु ज्ञान छे

"उपशम रसभरी, सर्व जन शंकरी, मूर्ति जिनराजनी आज भेटी,
"कारणे कार्य निष्पत्ति श्रद्धान छे, तेणे भवभ्रमणनी भीड भेटी

ते वखतनी सामाजीक स्थितिना पडछंडा पण श्रीमदे कोइ कोइ स्थळे पाड्या छे दाखला तरीके प्रभु भक्तिना बहाना नीचे समाजमा चालता दंभपर तेओ लखे छे के:—

"अवगुण ढांकण काज करुं जिनमत क्रिया,
"न तजुं अवगुण चाल अनादिनी जे प्रिया;
"दृष्टि रागनो पोष तेह समकित गणुं,
"स्याद्वादनी रीत न देखुं निजपणुं.

वळी आजना जेवा भ्रष्टाचारी साधुओ ते समये पण हता. श्रीमद् लखे छेः—

"पामी यतिवेष विशुद्ध, आरंभे कर्म विरुद्ध;
"अहो ए अचिरजनी वात, देषो मन चंचल जाति.
"संयम स्वाध्याय विहीना, मद राग कदाग्रह पीना;
"विषयी भंडावे वेष, पडीया शंका ने द्वेष.

बसो वर्षपर उच्चारायेलां आ वचनो हाल पण केटलां सत्य लागे छे ?

दया अने अहिंसानी चर्चा करतुं श्री बाहु जिनस्तवन खास अभ्यास करवा योग्य छे. ज्यारे उंचा प्रकारनी कवित्व शक्तिना वधु प्रमाण तरीके 'श्री महाजश जिन स्तवन' वांचवा भलामण छे.

चोवीशी उपरनी टीका श्रीमदे पोते रची छे. तेमनी आ दीर्घदृष्टि खास वखाणवा लायक छे. कारण के घणी वखत मूळ-कर्तांना आशय अने अपेक्षा समज्या विना विवेचको मारीमचडीने स्वमत्यानुसार एवो तो अर्थनो अनर्थ करी नाखे छे के, सारामां-सारा ग्रन्थ उपरनां खोटां चुंथणां वांचकने संभ्रमित बनावी दे छे अने खोटा झघडा उत्पन्न करे छे.

चोवीशीनी भाषामां अने ध्यान दीपिकानी भाषामां घणो फेर छे. चोवीशीमां जुनी गुजरातीनी लेश पण असर नथी. आने माटे बे कारणो शक्य लागे छे. कां तो चोवीशी लोकमुखे वधु प्रसिद्ध होवाथी काळबळे तेनी भाषामां विकार पेठो होय अथवा ध्यानदीपिका नानी वयमां लखायली होवाथी रुढीवशे प्रचालित

गुजराती करतां जुनी गुजरातीने पसंदगी आपी होय अने चोवीशी पाकट उंमरे तेमज गुजरातमां लांबो वखत विचर्या पछी लखाइ होवाथी भाषानी विकृति एटले नवीन गुजरातीने मान आप्युं होय

वर्तमान जिन चोवीशी, विहरमान वीशी, तेमज अतीत-जिन चोवीशीना बधा ज स्तवनो एकज ढबे अने एकधारी शैलीमां लखाया छे अन्य छूटां स्तवनो, थोयो, सज्झायो वगेरे पण श्रीमद्नुं एक सरखुं मानस रजु करे छे

तेमनुं समस्त पद्यसाहित्य द्रव्यानुयोग अने अध्यात्मना ज पडघा पाडे छे छतां तेमां सारामां सारा काव्यना गुणो होवाथी श्रीमद्नुं स्थान कवि तरीके पण घणुं उंचुं छे तत्त्वज्ञाननो विषय प्ररुपेलो होवाथी तेमनी किंमत घटती नथी कारण के विषय गमे ते होय किन्तु लेखकनी शैली ज तेनुं स्थान नक्की करे छे सुंदर भावोनुं सुंदर भाषामां निरूपण ए मुख्य जरुरियात छे पछी ए भावो तत्त्वज्ञानने लगता होय के कुदरतने लगता, विश्वप्रेमना होय के दंपती प्रेमना आ विषयपर एक अंग्रेज पंडित (William Henry Hudson) वीलीयम हेन्री हडसननुं वाक्य याद राखवा लायक छे

"We do not quarrel with any poet who offers us philosophy in the fashion of poetry We require only that his philosophy shall be transfigured by imagination and feeling, that it shall be shaped into a thing of beauty that it shall be wrought into true poetic expression, and that thus in reading him we shall always be keenly aware of the difference between his rendring of philosophic truth and any mere prose statement of it These conditions fulfilled we welcome the poet as a teacher and moralist, because we know that in his hands the truths of life and conduct will acquire a higher potensy and value "

(कोइ कवि तत्त्वज्ञानने काव्यमां गुंथे तेमां आपणने कशोज वांधो न होय. आपणे तेनी पासे एटलुं मागीए के तेनुं तत्त्वज्ञान कल्पना अने लागणीथी विभूषित होय, सुंदर रीते पेश करेलुं होय, साचा कवित्वमां व्यक्त करेलुं होय अने वांचती वखते तात्विक सत्यनी निरुपण शैली अने मात्र गद्यमय सूत्रोना भेद आपणे बराबर समजी शकीए. आटली शरतो पूरी करवामां आवे तो कविने, पछी ते शिक्षक होय के उपदेशक होय, आपणे सत्कारीये; कारण के तेना हाथमां जीवन अने आचारनां सत्यो वधु जोमदार अने किंमती थइ पडशे एम आपणे जाणीये छीये.)

ब्राउनींग पण एमज कहेतो, "Philosophy first, and poetry, which is its highest outcome, afterwards." (तत्त्वज्ञान पहेलुं अने काव्य जे तेनुं महान् अंगज छे ते पछी.)

आम होवाथी देवचंद्रजीनुं तत्त्वज्ञान तेमना कवनने बाधक नथी. किन्तु साचा काव्यनो जे हेतु मथाळानां वाक्योमां नियोजित करेलो छे तेनुं पोषक छे.

उपरनुं वक्तव्य 'श्रीमद् देवचंद्र' ना प्रवेशक तरीके पूरतुं लागे छे. जैन साहित्यमां आ पुस्तकनुं स्थान अनोखुं छे. तेनी उपयोगीता तेना विषयनी महत्ताने आभारी छे. जैन प्रजा तेनी अगत्य समजी तेनो पूरतो लाभ उठावे तोज 'अध्यात्म ज्ञान प्रसारक' मंडळनी महेनत सार्थक थइ एम कही शकाय. आटली आशा राखवी ए वधारे पडतुं तो नज कहेवाय इति ॐ.

पादरा
आषाढ कृष्ण एकादशी
गुरुवार १९८९



गुरुचरणोपासक
नागकुमार मकाती
बी. ए.



श्रीमद् देवचंद्र भाग २ जो.

अनुक्रमणिका.



शुद्धि अशुद्धि पत्रकम्



पृष्ठ.	पंक्ति.	अशुद्धि	शुद्धि.
६	२४	जगर्मे	जगमें
,,	२६	मुनिबर	मुनिवर
७	१६	भमयय	भवभय
८	२४	मातगथी	मातंगथी
९	२१	आधि	आधि
११	७	नशाबध	नशाबंध
३२	२२	मूखनो	मूर्खनो
३४	२	मनभाणी	मनमाणी
,,	८	सुमनसमी	सुमनसमें
३८	१	गतवतं	गतवंत
,,	२२	न्कूर	क्रूर
४०	११	विवक	विवेक
४३	११	काय	कोय
४५	८	ब्रर्ती	व्रती
४८	१३	वर्घे	वधे
५१	११	घन	धन
६४	१५	नाखे	भाखे
६९	२३	प०	पं०
७७	११	घीर	धीर
७८	४	घोय	धोय
८४	८	सुघा	सुधा

८८	११	भिन्नताता	भिन्नता
९७	१९	भ्रमकार	भ्रमकार
९७	१७	बीजो	बीजो
९९	६	सोघ	सोध
१०९	१३	ध्यावे	ध्यावे
१०७–१०८	१४–२	ग्यावो	ध्यावो
११६	१७	विधि	विधि
१२०	२२	नवि	नवि

द्रव्यप्रकाश.

१४८	९	पुद्गल	पुद्गल
१९८	१२	दर्व	द्रव्य
१६०	१६	पुद्गल	पुद्गल
१६२	१०	दीन	दिन
१६४	१०	परद्रव्य	परद्रव्य
१६६	४	हेयमेद	हे अमेद
१७६	१७–	तिमित	तिमिर
१७६	२४	अॅज्ञानम	अज्ञानमें
१८१	७	नव	नव
१८७	२	रजिवैकी	रीजवै की

श्रीमद् देवचंद्रजीकृत चोवीशी

पृष्ट	पक्ति	अशुद्धि.	शुद्धि
२१९	(	विभाग	विभाव
,,	२४	बीतराग	वीत्तराग
२२१	२३	पुद्गल	पुद्गल
२२४	६	श्रुताक्षा०	श्रुतक्षा०
२२९	१२	परपर्यायाश्रो	परपर्यायाश्रो

,,	२०	त्रीजा	त्रीजा
२२६	८	कर्ता....धटकार्य	कर्ता...घटकार्य
२३६	१८	भाव	भान
२३८	३	वस्तुधर्मे	वस्तुंधर्मे
२४३	६	तत्त्व	तत्त्व
,,	१६	पुद्गलनो	पुद्गलनो
२४४	२२	पुद्गला०	पुद्गला०
२४६	४	भावे	भाव
२४८	२३	थवुं	थवुं
२४९	९	सालंवन	सालंवन
२६३	८	नहीं	नहीं
२६५	६	,,	,,
२६७	२१	अतंरगं	अंतरंग
२७६	५	गुएपणुं	गुणपणुं
,,	९	छ, जे गुएने	छे, जे गुणने
,,	१४	घमनुं	धर्मनुं
,,	१९	मादेव	मार्दव
२७८	३	वीर्यांदिक	वीर्यादिक
२७९	५	विकल्परूप	विकल्परूप
,,	२२	प्रभुभी	प्रभुजी
२८२	६	एटला	एटले
,,	१६	साघे	साधे
२८३	१७	घनधाति	घनघाति
२८६	२०	अपावादें	अपवादें
२८८	१	साघन	साधन
२८९	१९	घम	धर्म
२९१	९	आत्मागुणनी	आत्मगुणनी

,,	१६	भावसेना	भावसेवना
२९५	१४	शेलेसे	शैलेसें
२९७	६	जाइ	जोइ
२९९	१२	वतिराग	वीतराग
,,	१४	पारेपाक	परिपाक
३००	१३	मम्यक	सम्यक्
,,	१९	परिगम्यो	परिणम्यो
३०२	७	श्रद्‌भुत	श्रद्‌भुत
३०३	२९	श्रामा	श्रामा
३०५	१६	प्रभुमुद्राने	प्रभुमुद्राने योग
३०६	२९	चायोपशमि	चायोपशमिक
३०७	१३	स्तवनम	स्तवनम्
३०८	५–७	श्रभिलाएय	श्रभिलाप्य
,,	५–६	श्रनभिलाएय	श्रनभिलाप्य
३०९	७	द्वतीय	द्वितीय
३१२	१६	निश्चे	निश्चैं
३१४	८	पप्पुण मिद्ध	मप्पुण सिद्धि
३१५	२–३	प्रागभावना	प्राग्भावना
३१६	१७	मागतो	मागतो
,,	१८	सर्द्वहता	सर्दहता
३१८	२३	सूर्योभे	सूर्याभे
३१९	३	कर्त्ती	कर्त्ता
३२०	१२	कार्ये	कार्य
३३०	१	देपी	देशी
३३४	२३	वहुमान	वहुमान
३३७	२२	वासपूज्य	वासुपूज्य
३३९	६	गाथार्थे	गाथार्थं

३४०	१४	धटादि	घटादि
३४३	२२	धम	धर्म
३५०	४	पर्यायमां	पर्यायमां
३५४	१०	सर्व	सर्व
३५६	२	ग्राह्क	ग्राह्क
३६४	४	पारेएम्यो	परिणम्यो
३६५	९	तुल्यत्व	तुल्यवत्
३६७	२	वाघी	वाधी
३७३	१८	पोतपोताना	पोतपोतानी
३८१	१९	धर्मघंत	धर्मवंत
३८२	५	घटकार्य	घटकार्य
३८६	४	कार्यनुं	कार्यनुं
३८७	२१	निवारण	—निरावरण
३९३	१४	०लंत्रनादि	०लंबनादि
४०४	२२	सव	सर्व
४०५	२०	प्रागभावी	प्राग्भावी
४०८	१३	सम्यक	सम्यक्
,,	१८	प्रागभाव	प्राग्भाव
४०९	२४	बीज	बीज
४२२	७	पडदो	पडहो
,,	२०	विभाग	विभाव
४२५	७	कों	कर्यो
४२६	१४	निघार	निर्धार
४३०	१४	ताना	ताता
,,	१५	घमतां	धमतां
४३१	३	कहेरो	कहेशे
४३४	१६	अन ।ो	अनूपो

४३५	८	सम्यग	सम्यग्
,,	९	गायवो	जाणवो
४३८	२	एहवो	एहवो
४४०	१२	पुद्गल	पुद्गल
४४२	१७	विभावें	विभावें
४४३	१६	सर्वं	सर्व
४४७	१७	द्यावो	ध्यावो
,,	२१	अमोध	अमोघ
४४८	१७	पुद्गलें	पुद्गलें
४४९	१३	लाद्यो	लाध्यो
४५१	१३	अनुमरते	अनुसरते
४५३	१४	अनुमवे	अनुभवे
४६०	१८	प्रभा श्री	प्रभावी
४६६	१९	भावेंम	भावमें
४७६	१२	त सतोप	ते . सतोप
,	२२	वोग	योग
४७७	८	का ाण	कारण

परचुरण स्तवनादि.

४९६	२०	पुद्गल	पुद्गल
५०१	१६	पगनुयायीपणे	परानुयायीपणे
५०२	९	तापोतानी	तापोताना
५५१	९	भनने	मनने
५५४	७	वहे	वदे
५५६	११	राखा	राखी
५७१	२०	कन्पा	कन्या
५७९	१२	सुवेविकी	सुविवेकी

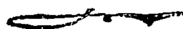
५८४	१६	धर्म	धर्म
५८८	७	व्यार्पाने	व्यापीने
५९०	१३	बरते	वरते
५९२	१५	वच्छिेदि०	विच्छेद
६०२	९-१२	साघन	साधन
६०३	४	,,	,,
६१५	९	भक्ति	मक्ति
६१८	१६	वीप	वीष
६२५	१४	लीघो	लीधो





श्रीमद्देवचन्द्रजीकृत

ध्यानदीपिकाचतुष्पदी.



श्री गुरुभ्यो नमः ।

—•※(◎)※•—

परमज्योति प्रणमुं प्रगट, सहजानंद सरूप;
वसतौ निज परिवारसुं, प्रणमुं चेतन भूप. १
श्रीजिनवाणी मन धरि, पाय नमी गुरुराज;
सारबुद्धिदाता सकल, तारण भवीयण जहाज. २
परमातम समझाविवा, भविक जीव हित काज;
ज्ञानसमुद्र अगाध गुण देषाड्यो जिनराज. ३
संस्कृतवाणी वाचणी, केइक जाणे जाण,
ज्ञाता जननें हितभणी, भाषा करू वषाण ४
गुणतां भणतां गावतां, टाली मन विपवाद;
विकथा जाणी वारज्यो, मत करो प्रमाद. ५

—•—

(ढाल चउपई)

ज्ञान सोम आलिंगन करी, आनंदित परमारथ वरी;
प्रणमुं हूं अज सहज विचार, परमातम अव्यय गुणधार. १
तीन भूवन कमलाकर सूर, धरम अमृत वर जलधर पूर;
जोग ध्यान कल्पतरुहेव, प्रणमु रिषभदेव नतदेव. २

भवभय वह्निथकी संभ्रांत, जंतु जातिने करवा सांत;
सुधासमान चंद्रप्रभुस्वामि, ज्ञानसमुद्र सोभाने ठामि. ३
सुंदर संयम पाणी वरे, तीन जगत्त पवित्र ज करे;
शांतिनाथ स्वामि हूं नमुं, सरव विघन दूरे हूं गमुं ४
श्रेय कुमुद विकसावण भणी, पूरण चंद्र समोवड गिणी;
वंदू महावीर भगवान, अक्षय लिषमि दायक दान ५
पूरण श्रुत नभ चंद्र समान, संयम लिषमि तिलक प्रधान;
नमीये इंद्रभूति अणगार, ध्यानसिद्ध योगीस उदार. ६
सांतिरूप अति ही गंभीर, विद्या सकल धाम गुणधीर;
भव्यलोक सरणागत पाल, जय जिनसासन जगत कृपाल. ७
बोधि विवेक प्रसम हित भूप, सम्यक तत्त्व कथन ए रूप;
ज्ञान ध्यान श्रुत तप ते सार, जिण निज रूप लह्यो सुषकार. ८
इण दुषको संसार असार, जामि मूंझे कुणसु विचार;
मिथ्या ज्ञान प्रभव ग्रह जेह, निग्रह दक्ष सुजन सुष गेह. ९
एहवो कहूं ज्ञाननिधि ग्रंथ, दुत्तर जेम उदधिनो पंथ;
मुझसूं ए किम कहीयो जाय, जिणमें कोविद पिण मूंझाय. १०
समंतभद्रादिक कविनी वाणि, दीपंती प्रभवे सुप्रमाण;
तिहां ज्ञानलवधर जन कहे, षजुआ परि हासो ते लहे. ११
त्रिविध कलंक जिनवाणि तणो, नासक देवनंदीथे थुणो;
जयवंतो जिनसेन वचन्न, जाण जोगी जिण निज धन्न. १२
श्रीजिनवाणि पवित्रित मती, अनेकांत नभ ससि दीधती;
भवि कलेसपीडित आतमा, जोगीपथ धरुं चितमां. १३

(दूहा.)

कवित तणौ अभिमान नहि, कीरति इच्छा कोई नाहिं.
ग्रंथ उकत जे माहरी, केवल बोधन चाहि. १४

वृथा जाणी श्रम तजी, जागे मोक्ष निमित्त;
ग्रहे राज्य समभावनों, संभाली निज तत्त. १५
वली केण उपाय करि, जन्म जात दुःष जाय;
त्रिसना विषयतणी प्रबल, प्रसमे केण उपाय. १६
पूज्य तेह गमाचिवा, कारण कहीयौ ग्रंथ;
करि उद्यम अपनो कहूं, बध मोक्षको पंथ. १७
ऊंची ध्वनि करि भविकने, गुरु धै ए उपदेश,
जिण आवै निज शुद्धता, रहइ न दुरगति लेश. १८

(वीर वषाणी राणी चेलणाजी.)

त्रिभुवन पूज्य इम उपदिशे जी, इह परलोक विशुद्ध;
शुभमती ज्ञान गुण साभली जी, कुण ग्रहै ग्रंथ अशुद्ध. १
उत्तम ग्रंथ तुमे सांभलो जी, छांडज्यो कुमतिनो पंथ;
गुरु उपदेस मनमैं धरी जी, टालि कुध्यान मनमंथ. उ० २
लघुमती मदधर जगतमे जी, निज पर वंचक रूप;
कीर्त्ति वंचक थका जग ठगै जी, तत्त्व विमुष अघकूप. उ० ३
शास्त्र तिणे सांभल्यां स्यूं हूवै जी, मन पडै जेणै भवमाहिं;
आदि मीठो फल शून्य छे जी, विषम समो विक्रिया झाझी. उ० ४
अचरिज अज्ञ मनुष्यनो जी, जे ग्रहे कुग्रह एह;
सौ गमे तासु समझावता जी, नवि तजै निज हठ तेह. उ० ५
शुद्ध नर शास्त्र ए वाचज्यो जी, दोष गुण एहना देषि;
सुमतिधर द्वेष को मत करो जी, शास्त्र ए मोक्ष फल पेष. उ० ६
ग्राव जिम अवगुण गुण भणी जी, बहिचस्ये नियत मन लोक;
दूषवै दुर्मती अतिभली जी, भारती चंद्र जिम कोक उ० ७
चंद्रमा सहु भणी सुष करै जी, सूर्य पीडा करै सर्व;
ए गुण दोष समावना जी, तथ करवो किसो गर्व. उ० ८

एह आतम महामोहसुं जी, कलंकित होइ जिण शुद्ध;
तेह मंदिर निज हित भणो जी, तेह पर ज्योति प्रतिबुद्ध. उ० ९
भुवन जम सर्प डंकित गणी जी, कुमति तजि ध्यान ग्रह लद्ध;
जन्म मरणादि दुष जाणिने जी, सम गिणइ तेहि ज सिद्ध. उ० १०
इंद्रीय रक्ष स्मर सिंहथी जी, जन्म दुःप जाणिजे जाण;
घूमीया मोह निद्राथकी जी, जागे ए कोइ सुभ नाण. उ० ११
कुमति कषाय विष मूंझिया जी, जीव सहु संत कोइ शांति;
मुक्ति लक्ष्मी मुख देषवा जी, उत्सुक तजि पर भ्रांति. उ० १२
वह्नि दुष पीडित जग गिणी जी, संत पामै भव तीर;
कर्मकलंक अनादिना जी, तुरत धोवै मतिधीर. उ० १३
कर्मकलंक बाधा विना जी, सानंद शुद्ध स्वभाव;
संत जिन मोक्ष इम वर्णवे जी, जिहां नही जनम दुषराव. उ० १४
जीवित सर्वनो सार ए जी, नरभव दुरलभ जाण;
छोडि परमाद शुभमति धरी जी, आदरौ आतम नाण. उ० १५
सठ जन काल अहिलो गमे जी, बुद्ध फल लेइ दुरस्स;
दुष ज्वाला भर्यौ गहन छै जी, एह सुष अंत विरस्स. उ० १६
काम धन जीवित चल अछै जी, वीजली जेम ए फंद;
उत्तम जे तजै ते लहे जी, राजविमल सदानंद. उ० १७

(दुहा सोरठा.)

संगी थकी विषाद, देहि छीजै रोगथी;
आपै मरण प्रमाद, आपद दिन प्रति दूहवै. १
नरक भयानक दुष, भोग सुपन सम ठग अछै;
सेवै ज्ञानी सुख, पर स्वभाव निस्पृह कौ. २
नवि पामे कल्याण, आतम तत्त्व न ओलषे;
जनम विनश्वर जाण, करमविडंबन नवि लषे. ३

षोटो बुद्धि विनोद, करि मूरष आपो ठगै,
चंचल ए आमोद, कार्याकार्य न जाणही. ४
सर्व जीव सम भालि, निर्ममता मनमैं धरे,
टाली मननो साल भाव शुद्ध मनमें धरै. ५
भविजन चित्त विचार, भाव शुद्धि कारण भावना;
मुनिजन मन आधार, कह्यो संवेग सुहामणो. ६
भाषी श्रीभगवंत, भावना बारह भावसु;
भावौ टाली भ्रांति, मुक्ति गेह सोपान सम. ७

(ढाल—आश्रव कारण ए जग जाणीयै ॥ एहनी)

भाव अनित्यपणो चित्य भाविइं, ध्यावो आतम ध्यान;
इंद्रिय अर्थ विनश्वर जाणीयै, सुष दुष असमान. भा० १
भवमें ममतां रे सगपण जे कीया, नीरस आपद थान;
देह जोवन ते रोग जरा भर्यो, धन जीवित चल मान भा० २
परभाते जे वस्तु निजर पडै, ते मध्यानें रे जाय;
संसारे सुष दुःख बे बोलतां, दुष अनत गिणाय. भा० ३
भोग भुजंग प्राणहरण कह्या, सेवंतां संसार;
वस्तु विनश्वर साव तू जांणिनै, छोडि कदाग्रहद्वार. भा० ४
षिणकपणो इम आरिज ऊचरइ, घडीयाल दृष्टांत;
घटिका जावे नावे ते फिरी, करि आतम हित षांत. भा० ५
देह अपूरव शासतजो हूवै, तो करियै अघकर्म;
पुत्र स्त्री धन बाधव कारणें, स्यू पीजे धरि भर्म भा० ६
स्त्री किण साथ न आई आवस्यै, तौ स्यौ इण स्यूं रे राग;
जे पूरव भव रिपु ते इण भवे, बाधव वधते रे राग. भा० ७
जे बांधव ते वइरी आकरा, हणवा उच्छक दुष्ट;
वनिता पासे बाध्यो तू पडै, भवकूपे वहु कष्ट. भा० ८

जे भव पाडै ते बांधव नही, बांधव हितकर साधु;
देह आयु तुटे पिण मोहथी, दीपे चित्र अगाधु. भा० ९
शीत जीवित भणी वह्निं विषाग्रहे, विषय थकी सुष नाहि;
जे काजै तुं पातक आदरै, तें वंचै तुझ साहि. भा० १०
तेह परिग्रह मूष कहि किम करै, निज गुण हाणिज थाय;
बाहिज दृष्टि कुमति प्राणीया, दुषीया नरके जाय. भा० ११
नरभव एणै तेहि जे आदरै, उभय लोक सुषकार;
वधारै विषपादप नवि करै, विहवै निज हित सार. भा० १२
रात्रे पंषी जिम नग आसरै, तिम प्राणि कुल थान;
परभाते ऊडे ते पंषीया, तिम करमवस मान. भा० १३
परभाते जिहा गहमह गीतनी, सांझे विरूई वात;
जे परभाते राज्ये थापीयौ, ते चिंता गृहे राति. भा० १४
जे अणुआ तुझ अंगे आज छे, ते पांञ्या लपवार;
एहवो पुद्गल कोइ रह्यो नही, न ग्रह्यो वपु आहार. भा० १५
देव असुर नर धन सहु चल अछे, इंद्रधनुष सम भाय;
आवै जावै जलकल्लोल ज्युं, को षाटइ को षाय. भा० १६
नदीय तरंग गयावलि बाहुडे, न थिरै जोवन प्रेम;
आऊषो करजल ज्यूं नीगमे, कमल दहै जिम हेम. भा० १७
विषय संयोग सुपन सम क्षणक छे, सुषना वंचक पेष;
कुल बल राज्य कीरति धन ए सहू, मेघघटा सम लेष्य. भा० १८
नर नारी वपु सुंदरता सहु, ते जलफेन समान;
ज्योतिचक्र ऋतुगति ज्युं थिर नही, तिम वपुना थिति मान-भा. १९
पुरव पुदगल जे वल्लभ हुता, ते दुषदायक एथ;
इंद्रजाल जिम जगमें सहु पडै, हेत न जागे तेथ. भा० २०
जे जे तीन भुवनमें वस्तु छे, चेतनथी ते भिन्न;
जे ते सगली मुनिवर उपदिसे, क्षणक विनश्वर तन्न, भा० २१

सध्या वान समो स्नीनेह छे, वादल सम योवन्न;
पिणक स्वरूप जाणी संसारनौ, विद्युतज्युं परजन्न. भा० २२

(दुहा.)

श्रीसदगुरु इम उपदिसे, सुणिज्यो भवियण लोक
अशरण भावन भावता, भवदुप कदे न होइ १

(ढाल–मेरे नदना एहनी.)

एहवो प्राणी को नहीं रे हा, जे न पडै यह फंद, अशरण भाविये
रषवालो यमसिंहथी रे हा, कोई न योगी इंद अ० १

ए संसार असार, सुर नर नागकुमार;
रहि न सके पलभार, तूटै आयु जि वार. अ० २

जीतौ जग इण एहकलै रे हां, जिण आगै हरि दीन; अ०
मूरप शोक युंही करै रे हां, ए सहु करमाधीन. अ० ३

भुवन यमसापे डस्या रे हां, वीता पुरुष प्रधान; अ०
देव उपाये नवि रहै रे हा, तौ नरकै है ज्ञान अ० ४

नित्य प्रयाणे जीवनै रे हां, यम ल्यावह निज गेह: अ०
ममयय रहित जिके अछे रे हा, धीरज धरि भजे तेह. अ० ५

जे परने ते तो भणी रे हां, सुप दूप सम करि जोइ; अ०
जिम इक तरु अनले वले रे हा, तिम वन वलस्ये सोइ. अ० ६

बाल वृद्ध धन निरधनी रे हां, जिम कायर तिम सूर; अ०
मन्त्रोपध सेना सहू रे हा, जूठी काल हजूर. अ० ७

ए नर सरलौ जां लगै रे हा, न सुणै रविसुत गाज; अ०
मन आस्या मनमैं थकां रे हां, निरदे हणे ए काज. अ० ८

जगत्त डरै गिर पडहडे रे हां, जेहना करडा नैण, अ०
ते पिण कालै संहर्या रे हा, वासे रहीया सैण. अ० ९

हरिहर हलधर रवि शशी रे हां, देव पवन अहिनाथ अ०
इत्यादिक राषे नही रे हां, साहे यम यदि हाथ. अ० १०
नासै मृगली चेतना रे हां, यमकंठीरव नाद; अ०
ते तू राषि सके नही रे हां, तौ भोगे किसी सवाद. अ० ११
सागर सुरपति गेहमें रे हां, पातले नग प्रांत, अ०
भूहरे पंजर व्रजमे रे हां, पुहचै आय कृतांत. अ० १२
इण अंतकमुष षाडमे रे हां, तीने लोक समाय; अ०
काम भोग लालच पड्या रे हां, ते नर दुरगति जाय. अ० १३
ते सरणो तकि बापडा रे हां, जिणथी भाजे चिंत; अ०
ओलष गुण तूं आपणो रे हां, शिवपुर मारग तंत. अ० १४

(दूहा.)

चोगति भमर भमै तिहां, दुष वडवानल जाल;
भमै जीव तिहां बापडा, भवसागर भय झाल, १
उपजै विणसै कर्मवसि, त्रस वलि थावर जीव,
ऐ संसारी भावना, भावो भवीय सदीव. २

(ढाल–तिणे अवसर बाजै तिहां रे, ढंढेरानो ढोल. एहनी.)

देव आयुष वसि देवता रे, पामे वैक्रिय देह;
च्यार निकाय अ कल्पना, मानै सुष ते सुसनेह रे, १
आतम गुणधारी, सगला सुष एह संसारी;
चितमे दुषरूप विचारी, मद मारी रे होइज्यो हितकारी. आ० २
चवीय पवन परिभव भमी रे, पडे नरक गतिमांहि;
जगत विडंबन ते लहे, तिहां उंच नीच कुल साहि रे. आ० ३
देव चवी कुकर हुवे रे, कुकर देव ज होइ;
श्वान हुवै श्रोत्रीया मरि, मातगथी वडव जोइ रे. आ० ४

रूप ग्रहे बल छोड ने रे, नटुआ जेम सदीव;
अति *दुष मिथ्यात्व तप्या, ए पंच प्रकारि जीव रे. आ० ५
द्रव्य चेत्र भव भावथी रे, कालादिक बहु दुक्ख;
सरव संग प्राणी लह्या, त्रस थावर करी रूप रे. आ० ६
चौगति योनि न को रही रे, को न रह्यो कुल देश;
इण प्राणी सुप दुप पणे, लाध्या अनंत प्रदेश रे. आ० ७
बंधु न को न को रिपु अछे रे, इण संसार अगाह;
राजा मरि कीटक हुवे, तिम कीटकथी नरनाह रे. आ० ८
मात सुता स्त्री अंगजा रे, भगिनी तेहि ज नार;
पिता पुत्र ते सुत पिता, ए पामे पद बहु वार रे. आ० ९
नरक दुपै षेत्रादिना रे, दीठा दुप अनेक;
भार भूप त्रिप श्रम पमे, तिर्यंचगति अविवेक रे. आ० १०
मानव उद्यम बहु करै रे, रागादिक दुप देष,
ममतां इण संसारमे ते, दीठा दुप नितमेव रे. आ० ११

(दुहा)

एण भुवन मरुदेसमे, पीडित नित दुप आग,
फिर्यो एकाकी जीवडो, पिण न धर्यो वैराग. १
कर्म शुभाशुभ भोगवै, इण देहै ए जीव;
देवादिक पिण सुप सहु, आपदरूप सदीव. २
गरम जनम मरणादि वलि, सुप दुप जोग वियोग;
जीव इकेलो भोगवै, आधि व्याधि सहु सोग. ३

(ढाल—नायक मोह नचावीओ पहनी)

भावो एकल भावना, संग न कोइ संसारो रे;
इंद्र चंद्र नागेंद्र को, अते नहि आधारो रे. भा० १

* 'ष' એ 'ખ'ના અર્થમા વપરાયેલો છે

पाप करे परजन भणी, नरक दुष तूं पामे रे;
षावणवेला सहु मिले, दुष मंडे तुझ नामे रे. भा० २
जन्म मरण तूं भोगवे, एक थको अयाणो रे;
आप सरूप जाण्या विना, जीव भमे विण नाणो रे. भा. ३
मोहवसे ए एकलौ, चंचल धन वर भ्रांतो रे;
बंधे आपोआपने, +कुलीया वड दृष्टांतो रे. भा० ४
एकपणो जे आदरै, पामी आपस्वभावो रे;
जन्म मरण दुष तो टले, तजि रागादि विभावो रे. भा० ५
कोइ दिव्य सुष भोगवै, केइ नरक दुष पावे रे,
को कर्म बांधे क्रोधथी, के सहु कर्म षपावे रे. भा० ६

(दुहा)

ए चेतन ए देहथी, ज्ञानरूप भिन्नत्व;
बंधादिक निजगुण नहीं, भावो भाव अन्यत्व. भा० ७

(पुनरपि ढाल)

पुद्गल जीव अनादिनो, बंध ज एक ज होइ रे;
कनक उपल जिम एकता, निश्चय जूआ दोय रे. ८
भावो अन्यत्व भावना. आंकणी.
रूपी चंचल देहमें, अमूरतीक ए मूंझै रे;
अणु निष्पन्न शरीरने, ज्ञानी पर करि बूझै रे. भा० ९
जन्म मरण दुष उपजे, अन्य सहू ए संगो रे;
चल पुदगलथी ऊपनो, तिणसुं केहो रंगो रे भा० १०
एह शरीर न ताहरौ, तो किम परजन धन्नो रे;
पंच द्रव्यनो संगते, चेतनथी सहू भिन्नो रे. भा० ११
मित्र स्त्री सुत संपदा, मात पिता वलि देहो रे;
ज्ञान भाव चित्तमें धरी, भिन्न गिणे सहु एहो रे. भा० १२

+ કરોળાયો.

मिथ्या वंध्यो तूं भम्यो, भवमें दुष बहु पायो रे;
निश्चल भ्रम विण शाश्वतौ, हिवे चेतन घर आयो रे. भा० १३

(दूहा)

नंदनीक मइलो सदा, अशुचिभर्यो ए देह;
शुक्रादिकथी ऊपनौ, जाणि दुगंछा गेह. १
वशा मांस लोहीभर्यो, जूनो कीकस थान;
नशावध दुरगंध ए, इणरौ किसौ वषाण २
नवे द्वार झरतां रहै, दूरभिगंध घण नीत;
रोग जरा कृमि गेह ए, इणसूं केही प्रीत. ३
जे देषै इण देहमे, तेह दुगंछा गेह;
धोवे जे जलथी तिको, सहज बिगाडे एह. ४

(ढाल–धरम हीयै धरो, एहनी.)

एह शरीर जे आपणो रे, वींछ्याउ चर्म न होइ;
तो माषी कृमि कागथी रे, राषि न सके कोयो रे. १
भावना भावीयै, भावन शिव सुष साथो रे;
गुणनिधि सम अछे, इम आपे जगनाथो रे. भा० २
देह अशुचि रोगे भरी रे, पतनसरूप शरीर;
एहनो फल एहज ग्रहो रे, धारो धर्म सधीरो रे. भा० ३
ए दुष वपुथी ऊपजै रे, देह अशुचिनो गेह;
जे भव भमतो तूं सहै रे, ते दुष कारण देहो रे. भा० ४
केसर अगरने मृगमद रे, हर चंदन कर्पूर;
मइल ग्रहै वपुसंगथी रे, देह अशुचि भरपूरो रे. भा० ५
अस्थि चरम पंजर अछे रे, कुथित्त मृतकसम वास;
जो पायम रोगादिनो रे, प्रीति धरैं नहि तासो रे. भा० ६

(दूहा)

मन वच काया जोग गुरु, कह्या ज आश्रवरूप;
ए तत्त्वज्ञानी परहरो, जाणी अघजल कूप. ७

(ढाल–तेहीज)

जिम छिद्र जल नौ ग्रहै रे, तिम योगे करि कर्म;
संयम प्रसमादिक करी रे, धरे शुभाशुभ भर्मो रे. भा० ८
कर्म वीज रागादि छे रे, जन्मादिकनो जाण;
विण व्यापारयुत ज्ञानसूं रे, सत्यवचन शुभ वाणो रे; भा.९
नंदनीक दुष पंथ छै रे पापाश्रवनौ धाम;
कुड कठोर वचन तणो रे, मतको आर्षों नामो रे. भा० १०
काउसगा तनुगुप्तथी रे, वंधायै शुभ कर्म,
आरंभ जंतु घातादिकै रे, पाप तणो भर हम्मों रे. भा० ११
क्रोध काम विषयादिकै रे, मिथ्या पंच प्रमाद;
अशुभकर्म चेतन ग्रहै रे, ते ताजि आश्रववादो रे. भा० १२

(दूहा)

आश्रव सर्व निरोधनो, संवर आख्यो एह;
द्रव्य भाव दोइ भेदथी, भवियण भावो तेह १
कर्म मुक्ति संवर कह्यो, द्रव्यथकी मुनिराय;
तजै कृपा संसारनी, संवरभाव कहाय. २
अविरतमय वाणे करी, मुनिव्रत विभेदाय;
जेम सुभट संग्राममे, निजरिपुसाम्हो जाय. ३
कर्मवंध आश्रव अछे, ते रुंधे मुनिदेव;
क्रोधादिकनै वारीयै, क्षांतादिक धर्म सेव. ४

(ढाल–वहिनी रहि न सकी तिसइजी)

तलि मिथ्या समकितथकी जी, रागादिक समयोग;
फेडे तम अज्ञानने जी, ज्ञान सूर्य उपयोग.
विवेकी संवर भावना भाव०
क्रोधादिक रिपु भांजिवा जी, एहि ज उत्तम दाव. वि० सं० १
अविरत विष त्यागै मुनि जी, विरति सुधाकर पान;
जन्म न पांमे ते सही जी, द्वारक सम जसु ज्ञान. वि० २
छोडे विकलप जालनें जी, धारै मन चिद्रूप;
तेह मुनीश्वर जाणीयै जी, संवर परम सरूप. वि० ३
मूल सुमति यम पंथ छे जी, फूल धरम सम साप;
सुंदर फल जसु भावना जी, जय संवरतरु आप. वि० ४

(दूहा)

कर्म गलै जिणथी सकल, जनम मरण अंकुर;
मुनिवर भावे भावना, निर्जर नाम सनूर. ५

(ढाल–तेहीज)

काम अकाम दुभेदनी जी, कहि निर्ज्जरा देव;
कही सकाम मुनीसनें जी, निकामेइ सहु जीव. ६
भविकजन निर्जर भावन एह,
यतन थकी पोता थकी जी, दाख्यो फलनो पाक;
तिम ही जाणै कर्मनौ जी, तजि जाणी किंपाक. भ० ७
काचन सोभै अगनथी जी, तिम चेतन तप आगिः
धीर अध्यातम तप तपै जी, जाय जन्म दुष भागि. भ० ८
षट विध बाहिज तप कह्यो जी, उपवासादि प्रधान;
प्रायश्चित्त विनयादिए जी, अंतरंग षटमान. भ० ९

पामी पदवी ज्ञाननी जी, करेय तपस्या साध;
तिम तिम तिणथी वेगला जी, नासै कर्म अगाध. भ० १०
ध्यान अगनि कर बालीयै जी, पूरव करम समूह;
तद प्राणी उज्जल हुवै जी, जाणे सोवन व्यूह. भ० ११
तां लगि तप प्राणी करै जी, ध्यान धरै तां सीम;
कर्म षपावी ते लहै जी, ज्ञान परम सुष नीम. भ० १२

(दूहा)

जेण थकी तनु सुचि हुवे, धरै ज्योति तिहां तेह;
धरमकल्पतरु ते नमो, दया भावनो गेह. १
चिह्न धरमरा दस भला, दाष्या श्रीजिनराय;
जासु अंस सेव्यां थकां, शिव पामे मुनिराय. २
मिथ्याती न कही सकै, तेहनो सुद्ध स्वभाव;
हिंसा पोषक जेहनो, सहू ग्रंथनो राव. ३
चिंतामणि निधि कल्पतरु, कामधेनुइं इत्यादि;
सेवक सगला तासु जिण, लाध्यो धर्म अनादि. ४
नर अहि असुर नराधिपति, पदवी आपे एह;
पूजनीक त्रय भुवन जे, ते लिषमीनो गेह. ५

(ढाल—रमणि आठे अति भलि एहनी.
जिनप्रतिमा जिनसरीषी वंदनीक.)

जे पक्ष्या विसनै धर्मरइ, इण चराचर जगमांहि;
ते सुष अमृत पूरीयो, पोषे जगत उछाह.
भवियण भावसूं धर्म धरो धरि हेत. आंकणी. १
घन वायु सूरज चंद्रमा, षोणी समुद्र सुरेंद्र;
ए जगत उपगारी कह्या, रक्षक धर्म नरेंद्र. भ० २

ए सहू जनने पालिवा, दापींया अधिके तेज;
उपगारी निश्चय कर्यो, जिनवर धरमसुं हेज. भ० ३
जगमांहि भुक्ति अरु मुक्तिनो, कारण कह्यौ इक धर्म;
पाय नमै धर्मातिणा, देवादिक गति धर्म भ० ४
गुरु मुक्ति स्वामी बंधु धर्म, सरणौ अनाथां नाथ;
ए नरक पडंता जीवने, काढे घाली बाथ. भ० ५
पडतां थकां प्राणी भणी, नरकांधकूप मझार;
ए धर्म अवलंबन अछे, शुद्ध स्वरूप उदार. भ० ६
ए धर्म अतिशय बहु भर्यो, कल्याणमाला गेह;
सर्वज्ञ वैभव दे सही, ए नर विघन अछेह. भ० ७
सार्थे रहै ए एह हित, छै एह रद्यावत;
ऊधरे जन्म कर्दमथकी, थापै पंथ महंत. भ० ८
जिनधर्म सरिषो को नहि, भवमांहि सुपनो ठाम,
आनदपंकजरूप ए, पूजनीक हितधाम. भ० ९
अहि अनल विष व्याघ्रादिथी, गजराज राक्षस चोर;
ए धर्म टालै सहु भणी, राजादिक भय घोर. भ० १०
ए धर्मशक्ति न कही सकै, सुरपति अहिपति कोइ,
मुढ्ढे थकी धर्म सहु कहे, तत्त्व न जाणै न लोइ. भ० ११
क्षांत्यादि दसविध धर्म ए, गत वच तन मन दोष;
मत बुरो वांछे परभणी, एहि ज धरमनौ पोष; भ० १२
नागेंद्रनगरी सुपकरू, ए धर्म नरभव सार;
देवलोक सुपनो गेह ए, ए शिवसुप दातार. भ० १३
जो नरकदुपथी ऊभगे, देवलोक सुपनी चाह;
जो मुगत सुप वांछा करे, तो करि धर्म उच्छाह. भ० १४

(दूहा.)

जिणमें सगला भाव छे, चेतन जड बे थोक;
तेह लोक षट द्रव्यनो, थानक शेष अलोक. १
वींट्यो पवन त्रिलोकमय, तालरूप आकार;
न कर्यौ न धर्यौ नाश नहि, शाश्वत सहु साधार. २
अनादिकालनों सास्वतो, अंतर हित विण नाथ;
जीव पदारथथी भर्यौ, सर्व द्रव्य जसु आथ. ३
वित्रासन आकार तल, मध्ये झालरि जेम;
अंते मादल सारिषौ, लौक रह्यो छै एम. ४
तिहां कर्म वसि जीवडो, उपजे विणसे सर्व;
जिहां उतपत्ति विनाशयुत, छए रह्या छे दर्व. ५
सर्व वस्तु परिपूर्ण ए, सिद्ध अनादि पुराण;
तजि उपाधि समभाव ग्रहि, भावना लोक वषाण. ६

(ढाल—भरतनृप भावस्युं ए एहनी.)

दुष दोहग पीडित सदा ए, नरक तणी गति जोइ;
बोधि दुरलभ अछे ए, थावरमांहि भमे वली ए.
करमवसै त्रस होइ, दुरलभ समकित अछै ए. दु० १
संज्ञी पर्यापति हूवो ए, पंचेंद्री तिर्यंच; दु०
नव नव गति प्राणी लहे ए, पाप पुण्यने संच. दु० २
नरभव कुल जात्यादिकें ए, पामे उत्तम योग; दु०
काकताली न्याये लह्यो ए, आउ बुद्धि अ सोग. दु० ३
विषय तजे सम आदरे ए, पूरव पुण्य प्रमाण; दु०
निश्चय तत्त्व जो भवि ग्रहे ए, तो सुष सम सहु जाण. दु० ४
अति दुरलभ जिन धर्म लही ए, म करि प्रमादनी तात; दु०
रतन त्रय मारग लही ए, मूरष ग्रहि मिथ्यात. दु० ५

पाप भ्रष्ट परने करे ए, मत पापंड देपालि; दु०
तजि विवेक माणिक समो ए, आदरे अघनी चाली. दु० ६

अवर सासण मिथ्या अछे ए, अणजाण्या रमणीक; दु०
ज्ञान विना इंद्रीदमे ए, विण लाधे धर्म ठीक. दु० ७

विरत भवउदधिमें ए, नरनें सोहिलो नाहि; दु०
रयणउदधि पडयो आवणों ए, दोहिलो जेम कहाय. दु० ८

सुगम सकल वस्तु जगतनी ए, अहि-सुर-नर पति राज;दु०
कुल बल स्त्री सुप सोहिला ए, दुरलभ बोधि समाज दु० ९

ज्ञानी भावना क्रीडतो ए, पामै अविचल राज, दु०
मोह रागादिक घय गया ए, ज्ञान भाव सुखि गाज. दु० १०

एहवी द्वादश भावना ए, निश्चय शिव दातार; दु०
जे शिव संगम लालची ए, ते करे भावना प्यार. दु० ११

प्रसन्न हृदय जोगीतणो ए, भावना करै उदार; दु०
शुभचंद्राचारिज कह्यो ए, भावनानो अधिकार. दु० १२

देवचद्र कहे रंगस्युं ए, शास्वतणे सहि नाण; दु०
साहाय्य कुंभकरण वर्णी ए, खड चल्यो परमाण. दु० १३

(इति श्रीज्ञानार्णवे योगप्रदीपाधिकारे पंडितदेवचद्रविरचिते ढाल-भाषाबंध-द्वादशभावनाप्ररूपक-प्रथमखडः सपूर्णः ॥ १ ॥)



अथ द्वितीयखंड.

(दूहा)

किरिया ज्ञान मिल्यां थकी, द्रव्य अने परजाय;
सोनो सुरहै गंधसूं, मिलियां शोभा थाय. १
प्रथम खंड बीय खंडसूं, मिलियां लहसी शोभ;
भवियण सुणज्यो नेह धरि, तजी क्रोधभय लोभ. २
इण अनादि संसारमें, दुरलभ नरभव एह;
काकतालीन्यायें लह्यो, सफलो कीजे तेह. ३
पुरुषारथ नर जनमफल, तेह कह्या चउ भेद;
काम धरमारथ नवनवा, चउथो मोक्ष अपेद. ४
तीन वरग व्यवहार छै, जन्मादिकना ठांम;
ज्ञानी आतम साधिवा, मोक्ष अपूरव थांन. ५
ध्वंसे कर्म मिथ्यातमल, जन्मादिक प्रतिकूल;
मोक्ष नाम तेहिज कह्यो, शुद्धातम अनुकुल. ६
दृग्वीर्यादि अनंत गुण, सहित रहित सहु क्लेश;
चिदानंदमय सासतौ, दाख्यो मोक्ष अलेश. ७
विषयहीन उपमारहित, अविच्छिन्न सुषठाण;
स्वयंसिद्ध नित सास्वतो, एह मोक्ष वषाण. ८

(ढाल—करमपरीक्षाकरण कुमर चल्यो रे—एहनी.)

आतमरूप विचारौ प्राणिया रे. ध्यानतणैं सहि नाण;
निरमल सांत कलंकविना अछै रे, सिद्ध कृतारथ भाण. आ० १
जिण कारण बहु पंडित तप तपै रे, तजी बंध भ्रमभाव;
सम्यग्ज्ञानादिक जिनवर कह्या रे, शिवसाधनना दाव. आ० २
ज्ञान सुधारस पान करी तुम्हे रे, भाजो भवदुषराजि;
भवसमुद्र तरिवाने प्राणीया रे, साहौ ध्यान जिहाज. आ० ३

करम पर्य्यांथी मोच कहै मुनि रे, तेहनौ साधन ध्यान;
छोडि कल्पना उपशमरस भजी रे, ग्रहज्यो ध्यान सुज्ञान. आ०४
संग अविद्या तजि भजि स्वस्थता रे, ज्यु पसरै शुभ ध्यान;
जन्म जलधि तारक ए आतमा रे, ध्यानरूप कर मान. आ० ५
ध्यान कहूं जो तुझ विवेकथी रे, थयौ हुवे थिर हीउ;
मोहनिंदथी जो जाग्यौ अछे रे, तौ ध्यान सुधारस पीउ. आ०६
बाहिर अंतर पर मूरछा अछे रे, विषय प्रमाद निवार;
तत्त्वरूप सुपकारण आदरौ रे, आतमध्यान उदार. आ० ७
रागादिक भ्रम जो तुझ चय गया रे, तो धरि ध्याननो व्याप;
संवेगादिक धीरज धरि धरो रे, नवमे शुद्ध ए आप. आ० ८
काम भोग वपुनी ममता टलै रे, ध्यान योग्यता थाय;
जन्म मरण दुपथी जो ऊभग्यौ रे, तौ धरि ध्यान उपाय. आ०९
चित्त पवित्र करे दे मोच्चने रे, योगी गोचर ध्यान;
ज्ञान ज रूपी साधक ज्ञाननो रे, साध्य रूप पिण ज्ञान. आ०१०
के सखेपरुचि विस्ताररुचि रे, चित्र विचित्र प्रकार;
दाप्यो सूत्रमांहि संचेपथी रे, आतम तीन प्रकार. आ० ११
पुण्य पाप उपयोगनी शुद्धता रे, दाख्या तीन प्रकार,
पुण्य शुद्धलेश्यावसि ऊपजै रे, ध्यान द्रव्य सुविचार. आ० १२
मिथ्या पाप कषाय प्रमादिथी रे, ऊपजे ध्यान अशुद्ध;
रागादिक चय आतम शांतता रे, हुवे शुद्धातम लद्धि. आ०१३
दिव्य सौख्य जन ध्यानथकी लहे रे, अनुक्रम तौ शिव थान;
दुष्ट ध्यान दुरगतिकार अछे रे, अंत कटुकफल मान. आ० १४
ज्ञान राज्य फल छे इण ध्यानरौ रे, सहज साह भ्रमसुक्त;
ध्यानसरूप कह्यौ संचेपथी रे, बंध मोच फलयुक्त. आ० १५
मिथ्याज्ञान चरित्र कुनयथकी रे, लोक भ्रमे भ्रम पामि,
छेदी ते सहु तुरत लहे भवी रे, शिवपद आनंदधाम. आ० १६

दूहा.

च्यारे प्रकारे ते कह्यौ, जिनवर पहिला ध्यान;
ते सुध करिवा दाषस्युं, गुण अवगुणनौ थान. १
अन्वय वलि व्यतिरेकथी, गुण अवगुण परपंच;
हेयादेय सुभावथी. ....
ध्याता ध्यान तदंगत्रय, दरसन ज्ञान चरित्र;
ध्येयतणा गुणओलषण, फल तसु ज्ञान पवित्र. ३
आगमथी पंडित कह्या, च्यार प्रकार ज एह;
ध्याता १ ध्यान २ सुधेय ३ फल ४, भवियण भावो तेह. ४
शांत चित्त मुनिवरजीको, संवरवंत सुधीर;
जन्म मरणथी ओसर्यौ, ध्यानी गुणे गहीर, ५

(ढाल—के केई वर लाध्यो—एहनी)

ए तो उदयकरमें घनथकी, ऊपनौ दुष अनल अथाह रे;
भवियण सुविचारौ तेण जगत दहै सहू, तिम रूंधे शिवपुर राह रे १
भवियण सुविचारौ.
दाहरूप इण जगतमें, वलि मोह अनलनौ गेह रे; भ०
मद प्रमाद छोडी करी, छुटा जोगीसर तेह रे. भ० २
पंडित जीप सकै नही, ए व्यसन पड्या ग्रहवास रे; भ०
घरमै मन नवि थिर रहै, तिण छोड घरनी आस रे. भ० ३
ए तो गृहना धंधास्युं भमै, पर आस्या ए दुषधाम रे; भ०
स्त्रीसंगे गृहवासमैं, न हुवै आतम हितकाम रे. भ० ४
ए तो नित नित चिंता नवनवी, मिथ्या अज्ञानथी अंधरे भ०
अनल समै गृहवासमै, किम थाय नित्य निज गुण संधिरे भ० ५
एतो षूता आपदपंकमें, रागज्वरपीडित एह जी; भ०
परिग्रहसाप डस्या थका, नवि पामे ज्ञान अछेह रे. भ० ६

हित अहित जाण्या विण आपनैं, वधावै गृहीय सदीवरे; भ०
बंधै निज कृत पापथी, जिम कुलियावड जीव रे. भ० ७
सेना राग वैरी तणी, विण संयम जीपै कोण रे; भ०
जिण संगे गिरवर चले, तिण आगे मन तो गौण रे. भ० ८
गगनपुष्प खरशृंग जो, गृहमें होवै तो ध्यान रे; भ०
न हुवे गृहवासे वस्यां, मिल्यां काल देश वलि थान रे. भ० ६
सुपने पण मिथ्यामती, न करी सके ध्याननी सिद्ध रे; भ०
स्वेच्छा दृष्टि विकल थकी, देषे ते द्रव्यनी रिद्ध रे. भ० १०
मत पाषड कदाग्रही, जिनलिंगी तौ पिण मूढ रे; भ०
धर्म अनेक द्रव्यां तणौ, नवि जाणे पडिया रुढि रे भ० ११
केइ अनित्य भाषे वली, केइ आपण नित्यरूप रे; भ०
मिथ्याती जाणे नहीं, ध्रुव अध्रुव लोक अनूप रे. भ० १२
भावना ध्येय जांण्या विना, दुषरूपी ध्यान अभ्यास रे; भ०
किरियावादी एकसौ असी, सतसठि अज्ञान निवास रे भ० १३
चोरासी अक्रियमत तणा, बत्रीस विनयमत धार रे; भ०
सिद्ध लाभे इक ज्ञानथी, ज्ञानवादि मतिनौ सार रे. भ० १४
के सिद्ध कहै दरसणथकी, कारण सहु वीजा छोडे रे; भ०
के चारितथी सिद्ध कहै, छोडी दे ज्ञानरी जोड रे भ० १५
केवलि कारण दोयसू, भाषे शिवप्रापति वाण रे;
कल्पै नव नव कल्पना, ते नर मिथ्याती जाण रे. भ० १६
ज्ञानहीन किरियाथकी, वाछे नर जे फल शुद्ध रे; भ०
चक्षुहीन चाहै तिकै, तरुछायाथी फल शुद्ध रे. भ० १७
अंध क्रिया पगु ज्ञान छै, श्रद्धा विण न सरे काज रे; भ०
ज्ञान क्रिया दर्शन थकी, पामे सहु आतमराज रे. भ० १८
कारकक्रम सहु लोकमें, विवहार चले छे अध रे; भ०
एकांतवादी माने नहीं, निज पचग्रहता सध रे. भ० १९

जसु मति जिनमतवादनी, ध्यान सिद्ध भणी ते योग्य रे; भ०
चंचल मन मुनि ध्यानमें, जिनवचने कह्या अयोग्य रे भ० २०
ध्यानयोग्य नही मुनिनाम जे, लिंगधारी सूत्र विरुद्ध रे; भ०
मन वच काया भिन्न जै, ते न लहे ध्यान विशुद्ध रे. भ० २१
पूज्यपणो निजमे कहै, परने लघु जाणै जेह रे; भ०
कर्म विकलतामें पडया, मतिहीन कह्या जिन तेह रे. भ० २२

दूहा.

संयम भार धरी करी, शील वीना मदवंत;
इंद्रीवश मन चल थका, ध्यान न साधे तंत. १
कीरति पूजा वंदना, जे चाहे ज्ञानविहीन,
अंतर मन निरमल विना, न लहे तत्त्व नगीन. २
ध्यान नही दूसम अरै, के कहै एहवी वाणी;
कामी मिथ्यामें पडया, साधी न सकै झाण. ३
मन चंचल अति जेहनो, पररंजन जसु ज्ञान;
मौनपणे मार्जारसम, ते साधे किम ध्यान ? ४

(ढाल—जत्तीनी व्रत नीम न साजे आणी.)

कंदर्प्पादिक पण भेद, रंज्या घर काम उमेद;
त्रिण रूंध्या इंद्रीग्राम, नवि जाणै आतमराम. १
त्रिण रूंध्या चंचलचित्त, पाम्यां त्रिण ज्ञाननिमित्त;
निरवेद संवेग विहीन, किम पामै निजगुण पीन. २
ये भोगथकी लयलीन, मन ज्ञान दयाथी हीन;
पररंजक पापी दुष्ट, किम साधे ध्यान ते श्रेष्ठ. ३
नवि रूंधे जे मन वाग, जे राता इंद्री राग;
जे भारी कर्मने भारे, ते निज गुण ध्यान न धारे. ४

जसु मनमें तीने शाल, विण कीधा आत्म निहाल;
जे चढिया कोप ने मान, ते साधि न सकै ध्यान ५
बहु पाप अनुज्ञा लीन, अज्ञानज्वरे करि भीना;
वलि मोह निद्राथी घूंज्या, अति भोग लालचिआ लूझ्या. ६
जे राता परस्त्रीरंगे, शंकित भय भीति अनंगे;
निज स्वारथ साधि न जाणे, भव साधे ध्यान अयाणे. ७
साता रस रिद्धिना लोभी, बहु पाप करै महादंभी;
निज देव भणी नवि जोवे, विणु काज ए नरभव षोवे. ८
आकर्षण वासि विद्वेष, मारण उच्चाटण पेष;
रस पाणी अनलनौ थंभ, जे साधे ए आरंभ. ९
ज्योतिष वैदिक इत्यादि, मन रंग करे नितवादि;
निज देव न देषि सके ते, वे काम पड्या बहके ते. १०
मुनिवेष धरि धनकाजे, बहु पाप करत नवि लाजे;
जिनमार्ग विराधे शस्य, त पडशे नरक अवश्य. ११
अज्ञानी मूरष संग, गृहवास आरंभी चंग;
यतिलिंगी परनें वंचे, तसु सग न कीजे रंच. १२
पामी यतिवेष विशुद्ध, आरभे कर्म विरूद्ध;
अहो ए अचिरजनी वात, देषो मन चंचलजाति. १३
भोगवीया बहु स्त्रीभोग, वलि मेली धनसयोग;
वैरी जीता बहु आय, पाम्या शिवकाज न थाय. १४
एहवा जन ध्यान न साधे, परमारथ निज विण लाधे;
तिण ध्यावौ अजर अनन्त, परमातम देव महत. १५
जिनवचनतणी रचनाथी, वापाणे देव अनाथी;
असा पंडित जन लाखे, कोडे गमे जगमें छे. १६
आनंदसुधारस भीना, भवसंभवतापविहीना;
एहवा जोगीसर राय, तीन च्यारेक वा न लहाय. १७

संयम स्वाध्याय विहीना, मद राग कदाग्रह पीना;
विषयी मंडावे वेष, पडीया शंकाने द्वेष. १८
एहवा न करी सकै ध्यान, नवि जाणै तप विज्ञान;
ग्रंथ जीरणनें साहि नाणे, मुनि देवचंद्र वाणाणे. १९

दूहा.

परमारथ निश्चय करी, वधतै मन वैराग;
इंद्री सुख निस्पृह थका, साधु इसा वड भाग. १
भावशुद्धि भवभ्रमणथी, छूटा जे जोगीस;
काम भोगथी उभग्या, तनरी स्पृहा न रीस. २
प्राण त्याग पिण ध्यानथी, छूटै नही लिगार;
परत्यागी मुनिवर तिके, ध्यानतणा आधार. ३
महा परीसह सापथी, जन निंदाथी जास;
क्षोभ न पामे मन तनक, वसता निजगुण वास. ४
राग द्वेष राक्षस थकी, भय नवि पामै जेह;
नारिथी मन नवि चले, अक्षय निजरस गेह. ५
तप दीपकनी ज्योतिथी, बाल्या कर्म पतंग;
ज्ञान राज्य त्रय लोकनो, विलसे जेह निसंग. ६
तपथी तननें पीडवे, उपशम रस भंडार;
लोक सर्व सुषकारणे, मोह अगनि जलधार. ७
निज स्वभाव आनंदमय, शांत सुधारस ठाम;
योग महागज जीपने, व्रतधारी समधाम. ८

(ढाल—तार कर तार संसारसागरथकी—एहनी.)

महा समधार, सुखकार, मुनिराय जे, ध्यान ध्यावा भणी जोग थावे;
देह आचार संसारसुख निस्पृही, तेह जोगीस निज देव पावे. १ म०

शुद्ध ज्ञानरसपानथी शांत मन, थावर जंगम दया धारी;
मेरु जिम अचल, आकाश जिम निरमला, पवन जिम संग विणु,
लोभ वारी. २ म०
भव्यसारंग सुपकार उपदेशथी, देह शोभा तजी मोच साधे;
ज्ञान शक्ति करी आतम निज ओलपे, शुद्ध निज ध्यान ते मुनि
आराधे. ३ म०
एण निज देवने मोचगृह चढणने, कही सोपानसम साधु सेवा;
ध्यान ते साधुने मोचकारण कह्यौ, विमल निरुयात निज गुण वहेवा.
॥ ४ ॥ म०
दान्त, मन विहग इंद्री भणी जे दमे, ज्ञानना गेह, पातक विडारे;
कर्मदल गंज, नै चित्त निरमल थका, एम जोगीश शिव मग
सुधारै. ५ म०
गिरि नगर कंदरा गेह शय्या शिला, चंद्रकर दीप मृग संग चारी,
ज्ञान जल, तप अदन, शांत आतमा थका, धन्य निग्रंथ सुविहित
विहारी. ६ म०
प्राण इंद्री वली देह सवर करी, रोकि संकल्प, मन मोह भंजी,
धन्य निज ध्यान आनद आलंब धरि, शुद्धपद आतमनी ज्योति
रजी. ७ म०
हेय आदेय त्रिभुवन गिणै साधु जे, चय करै पुण्यने पाप केरो;
आत्म आनंद स्याद्वादथी विपयने, विप गिणी भंजता कर्म
घेरो. ८ म०
कार्य संसारना साधता ज्ञान विण, जगतमें एहवा बहुत दीसे;
काटी भव दुप, वलि ज्ञान जल झीलता, एहवा साध दोय
तीन दीसै. ९ म०
वडे प्रासादमैं नरम पल्यंक परि, राति जै पौढता नारिसगै;
तेह गिरि कंदरा कठन शिला उपरे, रहे नित जागतां ध्यानरंगे
१० म०

चित्त थिर रागनै द्वेषनो चय करी, जीप इंद्रीय आरंभ छोडी;
ज्ञान उद्दीपना थकी आनंदमय, देखी निज देवनै कर्म मोडी. म० ११
छोडी परसंग आत्मा भणी सिद्ध समा, ध्यावतां सुमतिसुं मोह वारे;
आतमस्वभावगत जगत सहु अन्य गिणि, ज्ञाननिधि मोक्षलक्ष्मी सुधारे. १२ म०
तत्त्वचिंता करे, विषयने परिहरे, स्वहित निजज्ञान आनंद दरीयो,
सुमतिसंयुक्त तप ध्यान संयम सहित, एहवो साध चारित्र भरीयो. १३ म०
एहवा पंडित वचनरचनाथकी, नित थुणे आत्मने बहुत असा;
शुद्ध अनुभूति आनंदसूं राचीया, कटै भवपास दुरलंभ तेसा. १४ म०
एहवा योगधारी जिके मुनिवरु, ध्यान निश्चल तिकेइज राषै;
ध्याननें योग अणयोग्यनी ए कथा, ग्रंथ अनुसार मुनिचंद भाषै. ॥ १५ ॥ म०

दूहा.

सम्यग् दर्शन ज्ञान गुण, वली तीजो चारित्र;
तीन मिल्यां चेतन भणी, शिवमंदिर प्रापति. १
कर्म कठोर ज तोडिवा, कारण एहि ज तीन;
ध्यानसिद्धि गुणत्रय सहित निफल गुण त्रय हीन. २
रत्न त्रय विणु ध्यान जे, चाहै मूरष कांत;
कुसुम आकाशै सिल कमल, वंध्या सुत दृष्टांत. ३
दरसण जे रुचि तत्त्वनी, तत्त्वकथक ते ज्ञान;
शुद्ध द्रव्य श्रद्धान जे, ते समकित कहवाय. ४
सहज थकी उपदेशथी, प्रापतिकारण दोय;
क्षायक उपशम मिश्र ए, समकित त्रय विधि जोय. ५
पंचेंद्री परयापतौ, संज्ञी जीव सुभव्य;
काल लबधि पाम्या लहे, समकित श्रद्धा नव्य. ६

सात प्रकृतिनो क्षय थयां, क्षायक उपशम वीय;
उपशमीया क्षय उपशम्या, मिश्र लहे तव जीव. ७

ढाल—धरम मुणी राजा प्रतिबूधो ए ढाल.

सांभल ज्ञानी समकित वाणी, उपशम आस्तानी सहि नाणी; सां०
द्रव्य तणा गुण जाण्या पांमे, दोष पचीस भणीजै वामै. सा. १
जीवादिक सग तत्त्व पिछाणै, हेयादेयपणो जे जाणै; सां०
जीव अनंतो नित्यता धारी, एक सिद्ध बीजो संसारी. सा० २
नित्य अनंत चतुष्टय धारी, जन्म मरणरा दुष निवारी; सां०
निज आत्मीक स्वभाव वहंता, जयवंता इम सिद्ध अनंता. सां. ३
त्रस थावर आदिक बहुभेदी, जीव संसारी ए अतिषेदी; सा०
भू आदिक थिर पचधा जाणौ, वली अनेकत्रस भेद वषाणौ. सा०४
चौगति भमता बहु दुष देषै, नाम धरे बहु कर्म विशेषै; सां०
विकलेंद्री वलि पांच थावर, चित्त विना तिरि गति दुष आगर. सा०५
ज्ञान अंक संकोच विस्तारी, कर्त्ता भोक्ता ए तनुधारि; सा०
जयवंतो त्रयकाल अपंडित, जीव कहै तिण कारण पंडित. सा० ६
एक थकी मांडी दस पर्यंत, जीव भेद जाणौ मतिवंत; सा०
शुद्धनयें करि एक महंत, निज निज भावे द्रव्य अनंत. सां० ७
जीवराशि सहजे द्विप्रकारी, भव्य अभव्य लषो सुविचारी; सा०
परमातम रिद्धिनें जे वरिस्यै, भव्य कह्या ते श्रीजगदीसै. सा० ८
कबहि न जाणै आतमकाजै, तेह अभव्य कह्या जिनराजै; सां०
तीन काल ए भवमें वास, न मिटे जनम मरण दुष जास. सा०९
भव्य तिके शिवपुरनें योग, दूर करी त्रय कर्म कुरोग; सां०
अनादि सयोगी कर्मने जीव, कनकोपल जिम जाणि सदीव सां०१०
भव्य भणी भव सात अनादि, अभव्य भणी ते अनत अनादि;
जीव समास अने गुणठाण, चवदे भेद मारगणा जाण. सां० ११

गुणठाणादिक सगलि वाणि, संसारीनी दशा वपाणि; सां०
शुद्धनये करि ए सहु हेय, एक शुद्धता छै आदेय. सां० १२

दुहा.

अजीव तत्त्व बीजो हिवै, तेहना पंच प्रकार;
धर्म अधर्म नभ काल, अणु पुदगल पंचम धार. १
शुद्ध रूप पूर्वे कह्यौ, छठो चेतन दर्व;
अस्तिकाय पण काल विणु, भिन्न सहाइ सर्व. २
पांच अचेतन जीव विणु, अमुरतीक अणुहीन;
थिति उतपत्ति विनाश युत, सदाकाल स्वाधीन. ३
वरण गंध रस फरस युत, अणु स्कंध दो भेद;
थूलादिक षड भेद धर, पुदगल वसै अपेद. ४
धर्म अधर्म आकासत्रयी, थिर अक्रिय अरुप;
सर्वलोक व्यापि धरम, चलण सहाय अनूप. ५
मीन चले जीम नीरमें, जीव धर्मसु तेम;
अधर्म द्रव्य थितिकार छै, पंथीने तरु जेम. ६
जे देवे अवगाहना, ते कहीये आकाश:
अनंतप्रदेशी नित्य छे, लोकालोक निवास. ७
नव जीरण पुद्गल भणी, करै जेह ते काल;
परावर्त्तरूपी समय, व्यवहारै संभाल. ८
गत आगत वर्त्तमानता, भजै जांणि ते काल;
असंख्यात रेणुक प्रमित* अस्तिकाय विणु भालि. ९

मेघमुनि कांइ डमडोलै रे ए.

धर्म अधर्म नभ कालनें जी, एक अर्थ पर्याय;
पुद्गल जीव भणी उभै जी, व्यंजन द्रव्य गिणाय. १ म०

* कालना जे असंख्यात रेणुओ जणाव्या छे ते दिगम्बर अभिप्राये छे.

भविक जन सांभलि, तत्त्व तत्त्व स्वरूप;
जिणथी निज गुण उलसैजी, प्रगटे ज्ञान अनूप. भ० २
जीव भणी पण भाव छै जी, पुद्गलनै दोय भाव;
पारिणामिक धर्मादिनै जी, समझिज्यो मन लाव. भ० ३
धर्म अधर्म चेतनतणा जी, छे असप परदेस;
कालाणुक असंख्यात छे जी, व्योम अनंत कहेस. भ० ४
एक आदि अनता लगे जी, पुद्गल देस विचार,
व्यंजन पर्याय स्थूल छे जी, सूषिम अरथ संभारि. भ० ५
बंध तत्त्व चो भेद छे जी, थिति रस प्रकृति प्रदेस;
ज्ञानावर्णादिक कह्या जी अष्ट करम दुप देस. भ० ६
बंध हेतु पण दाखिया जी, मिथ्या अविरति योग;
कषाय प्रमाद वसै करी जी, बाधै कर्मनो रोग. भ० ७
उत्कर्षण अपकर्षणा जी, तेह प्रकृतिनो बध;
थिति ते थितिबंध जाणीयैजी, फल अनुभव रस बंध. भ० ८
आठ कर्मनी वर्गणा जी, मेलै बंध प्रदेश;
बंध तत्त्व ए हेय छै जी, शुद्धातम निज देश. भ० ९
आश्रव संवर निर्जरा जी, दाख्या भावनमांहि;
मोक्ष तत्त्व हिव वर्णवुं जी, ते सुणज्यो धरि उच्छाह. भ० १०
अष्ट गुणें करि शुद्ध छै जी, अनत ज्ञायक गुणपाणि;
नित्य अरुपी सिद्ध छै जी, साधक दस गुणठाण. भ० ११
लोकालोक देखै अछै जी, समय समयमै जेह;
थिति उतपत्ति विनाससुं जी, सिद्ध सुद्ध गुणठाण. भ० १२
द्रव्यार्थिक परज्जायथी जी, जाणि सरदहै जेह;
स्वपर विवेचन जे करै जी, समकित धारी तेह. भ० १३
समकित रतन जिणें कह्यो जी, शिव सुपनो दातार;
तप संयम श्रुत सफल छै जी, समकितरै आधार. भ० १४

समकित विन किरिया सहु जी, हेय अछै निस्संदेह;
कर्मरोग औषध अछै जी, समकित किरीया एह. भ० १५
समकितधारी जै अछै जी, शिवपुर साधक सोय;
ज्ञान चरण दरसण विना जी, सिव साधक नवि होय. भ० १६
अनुपम सुषनो गेह छै जी, भव अंभोनिधि जिहाज;
कर्मवृक्ष परसी समो जी, आपे शिवपुर राज भ० १७
हेय उपादेय जाणिनें जी, जाणिइ निजगुण जेह;
नित्य अबाधित पामिसै जी, देवचंद पद तेह. भ० १८

दूहा.

गुण पर्याय अनंत युत, अछै ज्ञान उपयोग;
तीनकाल गत भावनें, जांणै जेह असोग. १
कर्मदाहने टालिवा, करिवा निज गुण ध्यान;
लोकालोक प्रकास कर, जिनवर दाष्यौ ज्ञान. २
मति श्रुति अवधि पर्याय मन, केवलज्ञान वखांणि;
तीन सतक छतीस विध मति ज्ञान तूं जांणि. ३
अंगादिक बहुभेदथी, शब्द रूप श्रुति देषि;
देव नरकनें भवजनित, अवधिज्ञान संपेष. ४
गुण प्रत्यय नरतिरियमे, छव्विह अविधि अपेद;
ऋजुमति विपुलमती गिणौ, मनपर्यय दुय भेद. ५

ढाल—चुघलै योवन झिलरयौ एहनी ॥

अनंत द्रव्य पर्यायसुं, प्रगट क्षायिक गुण धार; भवियण
स्वपर प्रकाशक नित्य छै, निरमल ज्योति अपार. भ० १
शुद्ध ज्ञान आदेय छै, ज्ञायकता गुणगेह: भ०
भ्रांतिविना गत कल्पना, निजस्वरुपी गतदेह. भ० शु० २

लोकालोक समस्त ए, जास अनंतम अंस; भ०
तिण आगै रवि चंद्रनी, ज्योति सहु निस्रस. भ० शु ३
भवदुप संकट टालिवा, कारण समकित ज्ञान; भ०
ज्ञान विना सहु अंध छै, ज्ञान जगतगुरु मानि. भ० शु० ४
ज्ञानमंत्रथी वसि हुवे, चल इंद्रीय मन नाग; भ०
मोहशत्रु हणिवा भणी, ज्ञान कह्यो *वडयाग. भ० शु० ५
तजि निद्रा आलस सहू, मूनिवर तप जप लीन भ०
साधै केवलज्ञाननें, अनुभवरससुं भीन भ० शु० ६
अज्ञानी आश्रव करै, ज्ञानी सवरवंत; भ०
कोटि भवार्जित कर्मनौ, क्षणमाहि आणै अंत. भ० शु० ७
तप जप ध्यान क्रिया जिका, ज्ञान विना सहू झुठ; भ०
ज्ञानी ज्ञानबलै करी, देवै कर्मने पूठ. भ० शु० ८
शिवमंदिर पिण ज्ञान छै, दुरित तिमिर रवि एह; भ०
व्यसन विषय घन वायु ज्युं, तत्त्व दीप गुणगेह. भ० शु० ९
भव वनमय बन्धन पड्या, क्रोधादिकथी भीम; भ०
मोहनीन्द अज्ञानथी, रडवडै चौगत सीम भ० शु० १०
ज्ञानउदय निज गुण लहै, भजी कर्म नरिंद्र, भ०
शुद्धनीति शिव निग्रहै, देवचंद्र सुपकंद भ० शु० ११

दूहा.

हिव चारित गुण वरणवु, जसु साधे मुनिवृंद;
परपुद्गलनी त्याग मति, ग्रहिवा निजगुण चंद. १
सामायिक पण ग्रहभेदथी, चरित कह्यौ जिणचंद;
पंच महाव्रत सुमति पिण, तीन गुपति गुणवृंद. २
हिंसाऽनृत चोरि विरति, मैथुन परिग्रह त्यागि;
व्रत पचे जिनवर कहे, अक्षय शिवपुरमाग. ३

---

* गरुड

भाषा मन काया थकी, चर थिर सगला जंत;
तेहतणी रक्षा करै, तेह अहिंसा संत. ४
तेह हण्या हणीयां विना, अज्ञानीनें बंध;
ज्ञानी संवर भाव युत, सदा हैवै निरबंध. ५
संरंभादिक तीन गिण, जोग करण त्रय वेद;
च्यार कषायथकी गुण्या, हिंसा-अठ शत (१०८) भेद. ६
तजि प्रमाद समभाव भजि, हरि हिंसा-परिणाम;
हिंसा भवभ्रमकार छे, दुष अनंतनौ धाम. ७
हिंसक जावै नरकगति, वलि निगोदे जाहि;
चमा ध्यान तप फलतणौ, नास करे तणमांहि.

ढाल-चंद्राउलीनी.

दान ज्ञान फल सहु गमें रे, हिंसारत ते जीव;
अनुमत देता कोकने रे, नरकै करस्यै रीव.
नरकै करस्यै रीव रे भाई, नव नव पीडा सहस्यै लाई;
हिंसा करतां धर्म न थाय, दुष अनंतानंत नीहाई जी. १
सांभल समकिती रे, एतौ दुरगतिना दातार;
शिव मारग वट पार, दाषी केवली रे. आंकणी.
निस्पृहता महता गमे रे, उदासीन तनु ताप,
हिंसकनै सहु धूल छै रे, ए करै कुल संताप.
कुलसंतापे कीर्ति गमावे, नित प्रति विघन कोडि उपजावे;
सुष मंगलने दूर नसावे, गति निगोद लघु आयुष पावे जी. २ सा०
शिला चाढि जल तरवा करै रे, ते मूखनो स्वामि;
धरम बुद्धि प्राणी हणे रे, कहै शास्त्रनो नाम.
कहै शास्त्रनौ नाम ते गेहुला परभवमें दुष सहसै वहुला;
चारित्र ज्ञान दया विणु निबला, नासौ हिंसाथी जिन सुकला जी.
सांभली० ३

भलो दया-अक्षर भण्यो रे, पापशास्त्र लप कुड;
जीव हणै ओषध भणी रे, शुभफलनै द्यै धूड निरंतर.
नासै शील दया शम गुण कर, मोह कपाय वधारै बहुपरि.
हिंसा जीवदया अंतर, जी० सां० ४
सर्व ग्रंथनो सार छे रे, जीवदयाव्रत एह;
जग माता जग सुपकरु रे, कृषि उपरि जिम मेह.
कृषि उपरि जिम मेह सुहावै, स्वर्ग मोक्ष सुख बीज कहावै,
व्यसन विपय दहवट्ट गमावे, जिनवरया धरम गुण गावै जी. सां० ५
सप्त द्वीप भूदानथी रे, जाय न हिंसा पाप;
स्वर्ण कोडि धनने सटै रे, प्राण तजै न को आप
प्राण तजै न को आपणो लोक, स्नेहरसै हिंसा करै फोक;
शूल चक्र असि धनुप ए थोक, रापै देव तिके युत सोकजी. सा० ६
सुर्प आपे मार्या थका रे, पामै सिवपुर वास;
तो हणि निज परिवारने रे, पामै ते सुप पास.
पामै ते सुप पास समाज, दीन अनाथ हणौ किण काज ?
हिंसाथी नभ सम दुप साज, हिंसा एह कही जिनराज जी. सा० ७
ज्ञान ध्यान तप जप तणी रे, जीवदया कही माता;
दयावंत इंद्री दमे रे, लहै ज्ञान शिव साता.
लहै ज्ञान, शिव सात, दयाथीः चित्त कठोर, मधुर रसनाथी;
ते पिण दाख्यौ हिंसक साथी; लेज्यो भविक दया जय हाथीजी.मा०८
नरक लहै, क्षप तुं दली रे, हिंसाने परिणाम,
संयमथी अधिकी अछे रे जीवदया सुपधाम.
जीवदया सुपधाम अपारु, जन्म मरण भय तणीय निवारु;
शिवपुर मारग साथ ए वारु, पर तनु पीडा दुप नीकारुजी. सां०९
मानव पिण राक्षस समो रे, जे छे हत्याकार;
जीवदया माता समी रे, विद्यानी दातार.

विद्यानी दातार ए वाणी, अभयदान द्यौ करुणा आणी;
आवे संपत जे मनभाणी, ते न कही सकै इंद्र इंद्राणीजी. सां० १०
अभयदान जंतु जिण दीयो रे, दीया दान अनेक;
जिम जिम करुणा थिर हुवै रे, आवै तेम विवेक अपारै.
कष्ट पडयां करुणा न विसारै, जीवदयाथी सुष जस सारैं;
अनेक भवार्जित कर्म निवारे जी. सां० ११
भवमें कष्ट कष्ट दोहाग जे रे, ते हिंसाथी होय;
ज्योतिषमैं रवि शशि वडा रे, सुमनसमी हरि जोय;
सुमनसमें हरि जोय सदाई, गिरि मंदिर तरु कल्प वडाई;
देवचंद्र जगनाथ कहाई, तेम दया धर्म्म सहुनी मांई जी. सां० १२

दूहा.

हिव बीजौ व्रत सांभलौ, शिवसुषनो दातार;
सत्य वचन पादप तुम्हे, पालो संजम धार. १
जीवतणी रक्षा भणी, कूड तिको पिण साच;
जीव हणाये जिण थकी, दूर टाल ते वाच. २
तपथि जे दुष नवि गमै, तेह गमावै एह;
हिंसा आकूलता रहित, सत्य वचन गुणगेह. ३
कैतो मौनपणौ भलौ, जो बोलै तो सत्य;
भव कारण वच झुठ ए, भवियण टालै नित्य. ४
मिथ्याग्रथ कदाग्रही, वदै झूठ खल लोय;
स्याद्वाद सुणि वैण जै, दावै मुनिधन सोय. ५
झुठ वचन विष सम कह्यौ, मारै भव भव एह;
अइसो सुष कोई नहीं, वधे झुठथी जेह. ६
कहिवौ सुणिवो पिण नही, वचन पापनो धाम;
धर्म विरोधक नवि वदे, गुणी वचन वेकाम. ७

धन्य तिके जे मुष थकी, सत्यवचन भाषत;
जिन शासन कारिज पडयां, मुषथी झुठ कहंत ८

ढाल—इडर आवा आवली रे एहनी

मोह वसें श्रवणे सुण्या रे, वोल्या दुषनो धाम;
ध्वज कोलक इण सगथी रे. इण भव साधे काम. १
चतुर नर परिहर वचन अलीक, ए तो दुषदायक तहतीक;
चतुर नर प० ए आंकणी.
झुठ कथकनों मुष कह्यौ रे, नगरनि छार समान,
तिरिय नरय गतिमैं भमैं रे, पामैं दुष विण ज्ञान. चतुर० २
शीतल चंदन चंद्रथी रे, मीठी वाणि सुहाय;
दव दाध्या वलि पालवै रे, वचन दाह न पमाय चतुर० ३
मधुर वचन जग प्रिय छे रे, कटुक सत्य पिण छोडिः
मधुर सत्य भाषीतणे रे, दरसणथी सुख कोडि. चतुर० ४
सुचिवादी नर जे अछे रे, सफल जनम तसु धार;
झूठा वोला मानवी रे, किम उतरे भवपार. चतुर० ५
व्रत श्रुत सजम भारनौ रे, सत्य वचन छै कोष;
देव दानव न करी सकै रे, ते ऊपरि तिल दोष. चतुर० ६
आनंद करिए चद्र ज्युं रे, पाय नमैं जसु देव;
रूप जाति धन हीन ज्यु रे, तेहनें एह ज टेव. चतुर० ७
तापस योगी मूडीया रे, नागा चीवर धार;
कूड वचन कहता थका रे, ते छे पातककार. चतुर० ८
वाधे धन परिवार जौ रे, तोय न वौलै अलीक;
अन्य पुन्य सहु तोलतां रे, तो हि न ए सम ठीक. चतुर० ९
वहिरों सठने वोबडो रे, ज्ञानहीन मुख रोग;
योनि वली पर स्वाननी रे, पामैं कूडनौ योग; चतुर० १०

सातादिक गुणगणतणो रे, कूड केर छे हांणि;
सुहणै संग न कीजियै रे, झुठ वचन दुष षांणि. चतुर० ११
वंदनीक त्रय जगमै रे, वधे द्रव्य परिवार;
सत्य वचनथी सुष लहे रे, सुचिवादि अणगार. चतुर० १२
परकारण वच झूठे रे, बोल्यां दै दुष लक्ष;
असत्यवचनथी दुष लह्या रे, वसुराजा परतक्ष. चतुर० १३
मानव दानव सुरपती रे, ग्रह खेचर जनपाल;
वंदे जिन ते पिण कहै रे, सत्य वचन व्रत पाल. चतुर० १४
सत्यवचनथी सुख लहै रे, सत्य वचन सुषषाणि;
सत्य वचन कहो प्राणिया रे, देवचंद्रनी वाणि. चतुर० १५

दूहा.

तीजो व्रत पाल्यां विना, शिवमग दुरगम होय;
शिवनी इच्छा जो करौ, मत ल्यौ परधन कोय. १
वाह्य प्राण धन जन तणा, दसे हण्या तसु प्राण;
गुण विद्या जस सह गमे, चोरी दुषरी षाणि. २
परधन परआमिष समौ, लीधां तप जप नास;
गुरू बंधव माता पिता, करै न तसू वेसास. ३

ढाल—मया मोहि दक्षिणीआणि मिलाइ एहनी.

परधन आमिष सारिषो रे, दुष द्यै पंनग जेम;
तसु वेसास न को करे रे, तो आदरीयै केम. १
चतुर नर परिहर चौरीसंग ॥
चौरीथी दुष ऊपजै रे, वलि होयै तनुनौ भंग. चतुर० २
मात पिता सुत मित्रशी रे, तूटै तेहनौ नेह;
मानवथी डरतौ रहै रे, मृग जिम भयनो गेह. च० ३

पिण एक नींद करे नही रे, मरणथकी भयअंत;
जो को मुझनै जाणसे रे, तौ करस्यै मुझ अंत. च० ४
विद्या गरूवाई गमे रे, निज रचा नवि थाय;
सज्जन पिण निंदा लहे रे, तस्कर संग पसाय. च० ५
घात करे तृणनी परे रे, चोर भणी सहु लोक;
पडित पिण मूरष हुवे रे, मुनि पिण पामे शोक. च० ६
घोर नरक दुःप दै सही रे, चोरी केरी बुद्धि;
एहनी सगति ते तजे रे, जे चाहे निज शुद्धि च० ७
नद रन परवतमें पड्या रे, परधन न लीजे साहि;
तृण सम पिण परवस्तुनी रे. मत मन धरजे चाहि. च० ८
शिव सुपनी जो चाह छे रे, रापण चाहे धर्म;
सुख चाहे इण परभवे रे, तो तजि एह कुकर्म. च० ९
विरति मूल, यम साप छे रे, संयम दल सम फूल;
पडितजन पषी अछे रे, फल ते ज्ञान अमूल. च० १०
धर्म वृच्च एहवो दहे रे,–चोरी, मत मन आणि;
परउपगारी आदरो रे, देवचदनी वाणि च० ११

दूहा.

ब्रह्मचर्य पाल्यां थकां, ब्रह्म लहे योगींद्र;
सप्रपच ते वरणवुं, धरज्यो ए व्रत चंद्र. १
ब्रह्मचर्य जगे सत्य छे, मोटी महिमावंत;
संयम जीवन एह छे, धर्मवत गुणवंत. २
दीन हीन आचार विण, रापी सके नवि तेह;
अंत विरस दु पदाय छे, दसविध मैथुन एह. ३
तनु शोभा, रस सेवना, तीजो नारिसु रंग;
अशुभ संग चिंता विपय, वली देपे स्त्रीअग ४

स्त्रीने आदरमान दे, याद करे गतवर्त;
नवमी चिंता आगमन, दसम शुक्रकोपात. ५
किंपाकफल सम भोग ए, आदि रम्य, दुष अंत;
दोष दशे च्युत भोग तजि, ब्रह्म ग्रहौ मतिमंत. ६
मैथुन कांक प्रकोपना, दोष जीप तजि नारि;
जलधारा सींच्यो थको, न बुझै कामविकार. ७
ग्रीषम रविथी पिण अधिक, अछे काम संताप;
राख करे तन मन सही, वाधारै दुष व्याप. ८
इण विष मूक्यो जग गिणी, तजी जोगी ले ध्यान;
काम सर्प मद गालिवा, ग्रहि तुं गरुड सुज्ञान. ९

ढाल—नदी युमनाके तीर उडे दोइ पंषीया. एहनी.

एह मदन महासूर जगत जीतौ जिणे,
मोटी धरतो शक्ति अवर सहु अवगिणे,
पीडे ए जगधाम काम संका नही,
एहवो कोय न दाव जाय जिणथी वही. १
कालकुट महादुष्ट भणी ओषध लगै,
कंदर्प विषनो नाश करी नवि को सके;
काम अगनि महाताप व्याप तपीया बहू,
पडे त्रीया तनु कीच बीच जग ए सहू. २
विसम धार मरुदेश समे संसारमे,
काम ताप तृष व्यापथकी तनु निगमे;
निंदनीक अति क्रूर भूरि पातीक लहै,
मदन संताप्यो जीव सदीव संकट सहै. ३
थाये ते मतिहीन दीन मन नित रहे,
पीडित कंद्रप बाण मान किहां नवि लहै;

देषत थाये अंध विबुध मूरष हवे,
पडीया कंद्रप पास दासता अनुभवे. ४
साप डस्या सगवेग पीडथी तनु जले,
काम तणा दस वेग थका चित्त नित चले;
पहिला वांधे चित बीय दरसण इच्छे,
मेन्हे तीय निसास तूर्य ज्वर आग छे. ५
पंचम दाहे अंग रगथी नवि जिमे,
सप्तम मूर्छावत कि उन्माद आठमे;
नवमे प्राणसंदेह देह दसमे गमे,
एह उदयथी चित्त तत्त्वमे नवि रमै. ६
मन संकल्प विकल्प जल्पथी ए वढे,
काम अगनि संताप हृदयपद ए कढे;
गिरवर गव्वर मूल गुहाश्रित जनतणा.
मदन उतारे मान इणे जीत्या घणा. ७
कामवशे स्त्रीदास मूंज राजा भयो,
माघ मुंडायो सीस भोज घोडो थयो;
धीरज श्रुत चारित्त घटे इण संगथी,
वालो भवियण चित्त ए कंद्रपरंगथी. ८
बेठां सूतां मित्र कुटुंब मेलापसुं,
तेह ना पामे सुख मदनने तापसुं;
धन लज्जा कुलनास मरण देषे नही,
पीडित काम विकार कार लोपे सही. ९
भूत दैत्य ग्रह दुःख जिसो नवि दे सके,
तेहवी पीडा थाय मदन प्रगटे थके;
सुंदर देषी नारी सारमति ते गमे,
काम दह्यो जहे मृत्यु धरम गुण ते वमे. १०

सूर ते कायर थाय वृद्ध लघुता लहे,
पंडित थाये मूढ कामवसि दुःष सहे;
वनिताकाजे लाज वहुत कामी करे,
कंद्रपहठथी सूर मरण रणमे वरे. ११
उषेडण धर्मवृक्ष मदन गजसम अछे,
प्रथम गमावे देह मरण पामे पछे;
चोर करे जिम कोप ओर दिन उपरे,
तिम ब्रह्मचारी देषी द्वेष कामी धरे. १२
हरि हर ब्रह्मा देव इंणे मदने नड्या,
छोडि आपणी लाज नारी पाये पड्या;
घडी मात्र पिण छेक विवक रहे नहीं,
लागा कंद्रप बाण प्राण तजस्ये सही. १३
पामी नरनो देह एह कंद्रप दमो,
छोडी विषय विकार सार निजगुण रमो;
बलतो कंद्रप ताप व्यापथी जग सुणी,
छोडे विषयासंग सरव पंडित मुणी. १४
मारी मदननो मान ध्यान आतम धरो,
पामो भवनो पार सार संयम वरो;
देवचंद नागेंद्र मदनवसि सहु पड्या,
दीठा वहुला दुःख के भवमे रडवड्या. १५

दूहा.

मदमाती ए कामिनी, जे जे साझ्झ काज.
तेहनो थोडो अंश पिण, कहि न सके कविराज. १
हृदय दुष्ट, मुष मिष्ट छे, ए नारी सहजे नीच,
वज्रझाल यमदाढसम, दुःषदायक भववीच. २

गुणसमूह जावे वही, करतां स्त्रीनी वात;
नागिण पावा दुप करे, याद कीयां स्त्रीजात. ३
अगनिदाहथी पिण अधिक, वाले नारीसग;
नीच प्रीय चित अति कुटिल, नेह सांझिनो रंग. ४
निज कुल गृह मैलो करे, धूमसमि ए नारि;
हृदय शठ इत्यादि वहु, दूषण नारी मझार. ५
पिता पुत्र पति लंघिने, रमे अन्यसुं जाय;
स्त्री आगे मंत्र यंत्र ए, सगला कूडा थाय. ६
जे कारज नारी करे, करि न सके ते कोय;
तिलभर सूष काजे सहू, कुलक्षयकारक होय. ७
दान प्रीति महता सुजस, निज हित दूरे जाय;
कुप्यो वाघ दूष नवि करे, जे नारीथी थाय. ८
नरक लहे वार्त्ता कीयां, स्त्रीआलींगन टेव;
स्त्री पिशाच छलि नवि सके, सेवति को को देव. ९
पंत्यो जग इक लीलमे, दुस्सह ज्वाला नारि;
स्त्रीचर्य्याकृत पापनो, कोय न पामे पार. १०

ढाल—पारधीयारी

वज्रपात विप वीजथी रे, दूपकारण तूं जाणि रे. ए नारी०
चित्त जुदी, जुदी कायसुं रे, बोले बीजी वाणि रे ए नारी० १
ए शिव मारग वट पारी, ए तो धूततणी धूतारी;
ए तो निज गुणनी हत्यारी, तुं तजी दे तु तजि
एहनो संग रे. ए नारी० आकणी ॥
ऊचा पिण पडसी सही रे, स्त्री संगे कुच जेम; ए नारी०
रवि शीतलता जो ग्रहे रे, तोउ न स्त्री थिर प्रेम रे. ए नारी० २

देव दानव गति जे कहे रे, ते न कहे स्त्री भास रे; ए नारी०
भावी जे जाणे तिके रे थाये स्त्रीनो दास रे. ए नारी० ३
पोत चढी सायर तरे रे, दुत्तर स्त्री आचार रे; ए नारी०
पिता पुत्र पतिने ठगे रे, संदेहे ए नारी रे. ए नारी० ४
मीनथकी, वनसिंहथी रे, चंचल छे स्त्री मन्न रे; ए नारी०
मणि मंत्र को नही जिणथकी रे, वांक तजे स्त्री मन्नरे. ए नारी० ५
सुंदर पतिने मारिने रे, वांछे दासथी भोग रे; ए नारी०
पुरुष अंक रमती थकी रे, चाहे बीयसुं योग रे. ए नारी० ६
मंत्र विना नरने ठगे रे, नारी दुषनो गेह रे; ए नारी०
अधम नीच जन जे हुवे रे, नारी ने प्रिय तेह रे. ए नारी० ७
सहस्र लक्ष योद्धा जिके रे, स्त्री आगल ते दीन रे ए नारी०
गुणवंत करिने मानिजे रे, अंते ए गुणहीन रे. ए नारी० ८
रीस करे जी जी करयां रे, गुण ऊपरि दुषकारि रे; ए नारी०
अनाचार करी ढांक ले रे, जग वंचक ए नारि रे. ए नारी० ९
दाता भोक्ता पति भणी रे, मारे नारी साहि रे; ए नारी०
विषथी जो अमृत हुवे रे, तो स्त्री मन मल जाय रे. ए नारी० १०
वंध्या सुत नभपुष्प जो रे, थाये तो स्त्री शुद्धि रे; ए नारी०
जाले दोनुं कुल भणी रे, जे मानव स्त्री लुद्ध रे. ए नारी० ११
निश्चल सुरगिरि सारषो रे, कंपावे स्त्री तेह रेह रे; ए नारी०
रोगी दुर्बल धन विना रे, छोडे पतिने एह रे. ए नारी० १२
शूलीथी अधिकी कही रे, जनमन भेदन काज रे; ए नारी०
कीध कलंकी नारिये रे, क्षय धारी ग्रहराज रे. ए नारी० १३
सूर भमे वली आथमे रे, संध्या नारी संग रे, ए नारी०
उदधि लहे नदि योगथी रे, रोदन चपल तरंग रे. ए नारी० १४
रावण पिण नरके गयो रे, लोभाणो इण नारि रे; ए नारी०
नारी भय कलि मूल छे रे, पापशोग दुषकारि रे. ए नारी० १५

नारी दोप अपार छे रे, कविजनथी न कहाय रे; ए नारी०
भववासी जन बांधवा रे, नारी रज्जु सुहाय रे. ए नारी० १६
दृष्टे देषे अवरने रे, मुष बोलावे ओर रे; ए नारी०
सांन करे किण औरने रे, मन राषे बीय ठोर रे. ए नारी० १७
सुरपति सुरगुरु नवि कहे रे, नारी दूषण छेह रे; ए नारी०
नारी दुष क्यारी गिणी रे, सुगुण तजो स्त्रीनेह रे. ए नारी० १८
तापलता दुषकाल छे रे, विषय जलधिनी वेलि रे; ए नारी०
नरकपोलि, विषनी कुडी रे, परिहरी स्त्रीनी कोलि रे. ए नारी० १९
कूडकपटनी कोथली रे, छोडो नारीनी टेक रे; ए नारी०
निजकुलमडन काहुस्यै रे, शीलवती स्त्री एक रे. ए नारी० २०
विनयवंत पडित सती रे, पृथ्वीमें स्त्री काय रे. ए नारी०
पडित निस्पृह सम धणी रे, ब्रह्मव्रती मुनिराय रे. ए नारी० २१
अनुभवस्वादी जे हुस्ये रे, ते तजिस्ये स्त्रीपास रे; ए नारी०
देवचंद्र इम जाणिने रे, मति करी स्त्री वेमाम रे. ए नारी० २२

दूहा.

कामदाह मैथुनथकी, कहे उपशमे जेह;
आगि वुझावे मूढ नर, अमृतरसथी तेह. १
नरकद्वारथी निंद्य छे, नारीनो भग एह;
मूढ काम ताप्या पडे, नारीपंके तेह २
स्त्रीसुप मनमान्यो तुम्हे, ते अते दुषगेह;
दृपद् कनकमे यो गिणे, मैथुनसुप तिम तेह. ३
रोगी जेम कुपथ्यने, कहे पथ्य तिम भोग;
फल किंपाक समा अछे, मुह मीठा वहु सोग. ४
मैथुन आचरतो थको, नर पामे स्त्री लाल;
कामी मैथुन सुप कहे, पामी जेम पजूयाल ५

अशुचि अंग नारीतणो, चाटे कूकर जेम;
कामी कष्ट बहू लहे, चय कोष्टादिक तेम. ६

ढाल—सांझ थई दिन आथम्यो एहनी.

कूड कपट घर ए त्रिया, तिनको संग निवार रे भाई;
मैथुन दुषदायक तजी, आतम गुण संभार रे भाई. ना० १
नारी संग तजो तुम्हे, नारी दुषनी षाणि रे भाई;
नारी संगे दुष हुवे, ए श्रीजिनवरवाणि रे भाई. ना० २
पूत वहे जसु देहथी, काचो व्रण वहे जेम रे भाई,
तिम स्त्रीजोनि अशुचि धरे, तिणपरे राचो केम रे भाई. ना० ३
मूत्रगेह दुरगंध छे, नारी भग दुष षाणि रे भाई;
मूरष रंग धरे तिहां, नवि राचे इसु ज्ञानि रे भाई. ना० ४
श्वान रुधिर निज जिम पीये, सुष माने मनमांही रे भाई;
कामी तिम स्त्रीसंगथी, चित्त धरे उछाह रे भाई. ना० ५
नारी योनि अशुचि अछे, नारी दुरगति माग रे भाई;
आदर न द्ये को वृद्धने, तो तरुण उपर स्यो राग रे भाई ना० ६
सहूथी जोरावर अछे, नारी अबला नाम रे भाई;
योनिद्वार दुष द्वार छे, पंडित तजिजो वाम रे भाई. ना० ७
भोगवतां तनु नारीना, लागे छे सुकुमाल रे भाई;
सूलीथी करडी अछे, उदयागत रे काल रे भाई. ना० ८
मैथुन सेवंता थका, जीव मरे लष कोडी रे भाई;
महानिसीथे दाषीया, योनिलिंगने जोडी रे भाई. ना० ९
दुरगंध मलधर भयकरुं, मंडूकी आकार रे भाई;
चरमरंध्र नारीतणे, राग किसो विण सार रे भाई. ना० १०
सर्व अशुचिमय निंद्य ए, दुरगंध नारी एह रे भाई;
राचे मूरष मानवी , पंडित विरमे जेह रे भाई. ना० ११

कुथितमृतक गंध जोनि छे, कृमिकुल पूरण एह रे भाई;
चर मूत्र झरती रहे, तिण उपर स्यो नेह रे भाई. १२ ना०
ए सरूप जाणी तजे, पंडित स्त्रीनो संग रे भाई;
मदन मोह क्षीपी लहे, देवचंद्र पदरंग रे भाई. १३ ना०

दूहा.

शिव प्राप्ति चाहे जीके, ते छोडे स्त्रीरंग;
वज्र जेम गिरि गेडवे, तिम ज्ञानी स्त्रीसंग. १
व्रती तपस्वी नारिने, संगे लहे कलक;
घोर तपीने चालवे, नारी ए निःसंक. २
व्रत तप संयम गुण सरव, स्त्रीसंगे चय थाय;
नारीरुप दरसण थकी, संयमगुण गल जाय. ३
संयम तां लगी थिर रहे, जां न मिले स्त्रीयोग,
मापणसम जनमन गले वनिता आग संयोग. ४
काम वधे स्त्रीसंगथी , ज्युं अपथ्यथी व्याधि;
श्रुतथिर मनने चालवे, नारी वडी उपाधि. ५
तत्वदृष्टि तां थिर रहे, ज्यां न लगे स्त्रीवाण,
तन मन दहे संकल्पथी, आदरियां दुपपाण. ६
सयम नासे संगथी, नरक देय स्त्रीवात;
उत्तम व्रत शिवदाय जे, स्त्रीसंगे तसु घात. ७
चित्र नारी देषी करी, मानव मवि मुझाय;
दीठी मनमांहे पछे, किंकर जिम गुणकाय. ८
प्रेमबंधथी बेहुनो, मन वाधे जिम वेलि;
पछे दूर स्मर अति करे, अंगअगमें केलि. ९
नेह वधे वालि जो गमे, चाहे तन मन भोग;
हास विलास करत नित, वधे काम वड रोग. १०

पछे वियोगे तन तपे, वाधे अधिकुं ध्यान;
तिण कारण स्त्रीसंग तजि, स्त्रीसंगति दुपथान. ११

॥ ढाल—रुडीरे रे वारण रामला पदमीनी रे. एहनी ॥

श्रुत संयम तप शील दहे सहू रे, वनिता अगनि अगाध;
स्त्रीरागे दुष को न कही सके रे, वाधे तिम मन आध. ना० १
नारीसंग तजो थे प्राणीया रे, नारी दोषनो कोप;
निच जाति छे ए वनितातणी रे, विण रागी विण रोष. ना० २
नारीसंगति चारित्र दूषवे रे, गरुवाई सवि जाय;
निच नारीसंगति मोटांतणी रे, जगमें निंदा थाय. ना० ३
चारित तरुवरने छेदण भणी रे, नारी संग कुठार;
चणमांहे सहू जग ए वश करे रे, नारीचरित अपार. ना० ४
स्त्री परि दृष्टि लगी नवि ऊतरे रे, हथिणी ज्युं वडकीच;
एक वास वाघणि हूंती भलो रे, पण स्त्रीदरसण नीच. ना० ५
देव सेव जेहनी नित साचवे रे, नारी पंख्या तेह;
लहे कलंक तजे चारित भणी रे, भंभेर्या स्त्रीनेह. ना० ६
मानवशील विनागत तेज छे रे, वूझे अगनि सम जाण;
जेहने दरशणथी जग सुष लहे रे स्त्री पंडे तसु माण. ना० ७
मोटा तपसी ध्यानी स्त्री छल्या रे, न चल्यो वल तिलमात;
जिण वेगे गज गिरवर पिण वहे रे, तो सी मृगसुत वात? ना० ८
कुरवक तिलक अशोकादिक तरु रे, स्त्रीथी लहे विकार;
एहवी चंद्रमुषी दिठां रहे रे, को जोगी अविकार. ना० ९
हाव भाव नव नव करती थकी रे, मृगमद तिलक निलाड;
तीषे लोयण मटके निरखती रे, पंडितने करे वाल. ना० १०
तां लगि थिर मन श्रुत तप ऊपरे रे, तत्वदृष्टि थिर जात;
चंचल नारी लोयण बाणथी मन तन विंध्यो जात. ना० ११

वनिता अंग वाण मारण भणी रे, धर संयम सन्नाह;
ब्रह्मचर्य थिर कारण वारज्यो रे, नट विट संगति चाह. ना० १२
काम अंध पापी वंचक जिको रे, उभय लोक दुपधाम;
पंडितन पिण ए पंडित करे रे, परी बूरी छे वाम. ना० १३
ज्ञान ध्यान तप संयम आगला रे, निसंगी गुणपाण;
ते पण नारी संगतिथी पड्या रे, बीजा के होमाण. ना० १४
देज्यो पूठ म थाज्यो साम्रुहा रे, मत देषो स्त्रीरूप,
देवचंद्र सिद्धांते दापवी रे, नारी भवदुप कूप. ना० १५

दूहा.

विद्या विनय वधारिवा, उभय लोक सुप काज;
भव समुद्र तरवा भणी, वृद्धसेवना पाज. १
विषय कषाय गमाडिवा, रोगादिक चय हेतु;
उपशम बीज पमाडिवा, वृद्धिसेवनासेतु. २
निज पर रूप पिछानके, शुद्ध बोध जिण लिद्ध;
वृद्ध ति केइज दापव्या, सितकच थया न वृद्ध. ३
वृद्ध ति के विपयादिके, जसु मानस न पलाय;
शीलवंत आतमरुची, युवा वृद्ध ते थाय ४
कोइ वृद्ध लोभीकके, ज्ञानी युवा मलीन;
वूढापै तनु वल घटै, इंद्री विपय विहीन. ५
वृद्ध वृत्तविण तरुण छे तरुण चरणयुत वृद्ध;
वृद्ध सेव माता समी; हित श्रुतकारी शुद्ध. ६
कर्मयोग माता फिरे, पिण मत शिवसुप गेह;
सत वाणि जिण नवि लही, अंध अछे नर तेह. ७
साधु मग अमृत थकी, वाधे वृच विवेक;
चित्त कमल बोधन रवी, संयमश्रीनी टेक. ८

ढाल--हरिया मन लाग्यो एहनी.

वृद्ध सेवविण जगतमें, तत्व न जाण्यो जाय रे; सेवो वृद्ध भणी०
वृद्ध सेव चारित सधे, सायर शशि करपाय रे. सेवो० १
आशा अगनि गमाडिवा, वृद्ध सेव गुणराशी रे; से०
क्रोधादिक मल अपहरे वाधे चारित वास रे. सेवो० २
विषय तृषा जाये मिटी, उत्तम संग पसाय रे; से०
ज्ञान भजे थिरता बढे कातरता दुष जाय रे. सेवो० ३
सज्जन सेवाथी लहे, कुज्ञान सागर पार रे; से०
तप श्रुत संयम ऊपरा, पीत वधे तसु सार रे. सेवो० ४
वज्र समो शुभ संग छे, भंजन गिरि मिथ्यात रे; से०
अज्ञपणो जाये सहू, न रहे तम तिलमात रे. से० ५
शुद्धातम चाहे जिके, चाहे जे भव नास रे; से०
ज्ञान वधे जग जय लहे, ते सेवे गुरु वास रे. से० ६
पुण्य वधे किरिया सधे, विनय वृद्ध निरोग रे; से०
आगम अध्यातम सधे, उत्तम गुरु संयोग रे. से० ७
ध्यान सधे गुरुसंगथी, ज्युं हेम साधक आग रे; से०
गुरुनी भय लज्जा करी, वाधे साहस भाग रे. से० ८
भोजन देह संसारथी, विषयथी विरचे तेम रे; से०
जिम जिम गुरु संगति वधे, होवे तपवृद्धि तेम रे. से० ९
नृत्य देषो केकीतणो, देषाडे निज पूठ रे; से०
गुरु संगत सेव्या विना, जप तप सघलो जूठ रे. से० १०
कामित पूरण सुरतरू, मोटां तणो य सहाय रे; से०
सुपने कुमति न ऊपजे, वलि सुगति प्रदाय रे. से० ११
गुरु पद सेवाथी लहे, जे सुख तिसो न अन्य रे; से०
मोह अंधारो टालवा, दीपसमा गुरु धन्य रे. से० १२

पापकर्म बंधन दहे, धारे तप भाव रे; मे०
विस्तारे निज ज्ञानने, गुरुसेवा शिवदाव रे. से० १३
मूकि संग परपंचथी, मोह तजी निज जाण रे; से०
गृह संयम स्वस्वरूपथी, शिव पुरुषारथ ठाण रे से० १४
सुपनिधान गृह धामनो, निकलंक सम धाम रे. से०
अविकारी जगज्ञायकू, भजि निज आतमराम रे. से० १५
धन्य २ तिके मुनि गणिवरू, श्रुतसयम भंडार रे; से०
नारी लोयण बाणथी, न भजि मन कुविकार रे. से० १६
प्रज्ञा गेह विवेकनो, उपगारी वन्न जास रे; से०
निष्कलंक चारित धरे, ध्यान करे कर्म नास रे. से० १७
ज्ञानसुधारसपानथी, शांति चित गुणधार रे; से०
काम विषय झील्यो जिणे, धन्य तिके अणगार रे. से० १८
नारी नयन कुठारथी, जसु नवि भेदे शील रे: से०
कामझाल व्यापे नहीं, ते पावे शिवलील रे. से० १९
विषय पिशाची जस गया, मोह नींद गई भाजि रे; से०
जो नारी मनथी तजी, तो निज मारग लाग रे. से० २०
काम तपावे जगतने, शील करे जसु वाणि रे; से०
देवचद्र निज ज्ञानसुं, मोडज्यो कद्रप माण रे से० २१

दूहा.

परिगृह केरे भारसु, भवसागर निवडंति,
ते परिग्रह दोय भेदथी, अंतर बाह्य करति. १
त्रिविध परिग्रह बाह्य छे, अंतरग अज्ञान,
दस प्रकार पहिलेतणा, चवद भेद बीय मान २
वसु खेत्र धन धान्य वलि, द्विपद चतुष्पद यान;
कुप्प भाड असन शयन, दसविध बाह्य पान ३

अपरिग्रही मूर्छा सहित, तेह परिग्रहवंत;
तिण कारण मूर्छा तजो, धरि निज आतम संत. ४

राग द्वेष मिथ्या दशा, हास्य कषाय त्रिवेद;
ए अंतर परिग्रह तजो, जो शिवमार्ग उमेद. ५

जती संवरी दुष लहे, आशातणे प्रसाद;
मोक्षार्थी परिग्रह तजो, छोडी सवि विषवाद. ६

गुण गाले अवगुण वधे, तिण उभय परिग्रह छोडि;
पंषी तो ऊडी सके, उभय पंषनी जोडि. ७

अंतरंगनी शुद्धि विणु, बाह्य शुद्धि वे काम ?
काम क्रोध हिंसाथकी, पामे नरक कुठाम. ८

ढाल—रागगोडी, जीव जागोरी—एहनी.

दुष कारण परसंग छे, सुण प्राणी रे, रागादिकनो हेतु.
समझी जिन वाणी रे;
सत्य क्षमा संतोषता, सु० नास करण धूमकेतु; सम० मन आणी रे;
नाणी तजी धन संग, सम० ए आंकणी. १

देह षेह दुष गेह छे, सु० पंडित जाणे असार; सम०
लोभ वधे धनवृद्धिथी, सु० वाधे कामविकार. सम० २

पर संगे विद्या घटे, सु० उषेडे सुविवेक; सम०
काम भोग अहि विष वढे, सु० परिगृहकेरे टेक. सम० ३

धन संगे तृष्णा वधे, सु० मोह गांठि द्दढ होय. सम०
उपसर्ग सहि न सके मुनी, सु० सुरते कायर सोय. सम० ४

परिग्रह संग न जे तजे, सु० निजगुण घातक तेह; सम०
संजम जप तप श्रुत घटे, सु० परिग्रहसुं जसु नेह. सम० ५

पुण्यकाज मनशुद्धिने, सु० घात करे छे एह; समः
मूढ न जाणे धर्म थकि, सु० वाधे कर्म अछेह. समः ६
शीत थाय रवि गीरगिडे, सु० तो संजर परसंग; समः
कर्मतिको किम हणी शके, सु० जे नवि तजे कुसंग. समः ७
कामराग प्रसंगनो, सु० घन जडतानो गेह; समः
लत्र धन पिण जडजन भणी, सु० लावे दोष अछेह. समः ८
निसंगि नीर्भय सदा, सु० घनधारी भयवंत; समः
भीत रहे सुत आतनी, सु० राज चौर स्त्री नित्त. समः ९
कर्म वधे धन आसथी, सु० भव भव दुष भडार; समः
निस्सगी ध्यानी परो, सु० आतम सवर धार. समः १०
घन आशा जेहनी टली, सु० ते पामे सुष पेम. समः
जे सवंध ए जन करे, सु० वाधे दुष जन तेम. समः ११
निज पाले पंषी मूयां, सु० मन आने अपसोम; समः
निस्संगी वन नगरमे, सु० निरभय रहे निरोस. समः १२
लह्यो दुषे दुष रापतां, सु० नाश हूवा दुष भूरः समः
धन काजे गुरुथी लडे, सु० भच्य काज पग कूर समः १३
हिंमारंभ कषायने, सु० करे नरकमें स्थानः समः
सुपने पिण न करी सके, सु० घनधारी निज ध्यान. समः १४
काम विषय दुष मूल छे, सु० नरक हेतु धन छोडि; समः
धरि सतोष अमद ए, सु० जो चाहे शिव थोडि. समः १५
पाप वधे धन संगथी, सु० गया वधे दुष दाह; समः
इम जाणी आशा तजे, सु० पाप ताप टली जाय. समः १६
धन पाम्यो स्थिर राखवा, सु० ते नित रहेय विचार; समः
परंतां मन दुष वधे, सु० घन दुष रूप असार. समः १७
स्त्री त्यागी बहु जन अछे, सु० धन त्यागी को एक; समः
आशा तजी आतम भजे, सु० देवचद्र धरि टेक. समः १८

दूहा.

बहि अंतरता शुचि भणी, आशा छोडे संत;
धन तन ममता ज्यां लगे, त्यां लगे मोह महंत. १
ज्यां लागि आशा नवि घटे, त्यां लागि जाय न मोह;
जो आशा दूरे गई, तो पामेस निज सोह. २
संयम श्रुत रवि उदय वली, उपसम अने विवेक;
निराशीने स्थिर रहे, शिवसुष लहे अनेक. ३
आशा विषवल्लीसमी, आशा छे दुषवास;
भवसागर तट तिण लह्यो, जिण जीती परआश. ४
आशयुत मन थिर नही, आशा तजि भजि शुद्धि;
न वधे कर्म निराशना, न हुवे तसु भववृद्धि. ५
आशा विणु सहु सत्य छे, श्रुत तप अने विवेक;
पाप तापना नवि मिटे, जो आशानल टेक. ६

ढाल—टोडरमल्ल जितो रे अथवा आदीश्वर तूठा रे. एहनी ॥

निस्पृहता अमृतथकी रे पावन करि निज चित्त
भविक मन धारो रे, परिहर आश अनित्य, सकल दुष वारो रे. १
जसु मन आशाथी टल्यो रे, तसु फलीयो तरुज्ञान;
आशाथी सुरपति दुषी रे, आश हण्या शिव मान. भ० २
सहु आशा जसु चय गया रे, तसु सिध्या सवि काम, भ०
मन कषाय इंद्री दमे रे, नीरासी सुषधाम. भ० ३
केसु कहीये अतिघणुं रे, आशा दुर निवार; भ०
निराशी जन पूज्य छे रे, उभय लोक सुषकार. भ० ४
पर आशा भवभयकरु रे, आश गया शिवसार; भ०
ए आलोची आचरो रे, जो जाणो हितकार. भ० ५
चलचितकारि जन विसरे रे, तो किम द्ये शिव एह; भ०
जाण विरति अरु त्यागनी रे, संकट घटि वटि गेह. भ० ६

अवसर लहि मुनिवर छले रे, आश पिशाची एह, भ०
सहू जग आशा जीपीयो रे, ए जीपे धन तेह. भ० ७
राजसार पाठकरि धुरे, जैनागम गुणजाण; भ०
ज्ञान धरम मानसतटे रे, राजहंस सुप्रमाण. भ० ८
तासु शिष्य इम उपदिश्यो रे, देवचंद्र सुषदाय; भ०
प्रीतिवत गुण आगरु रे, कुमकरणसु सहाय. भ० ९

इति श्रीज्ञानार्णवे योगप्रदीपाधिकारे पंडितदेवचंद्रमुनिविरचिते ढालभाषावधे ध्यानसिद्धौ रत्नत्रयपंचमहाव्रतवर्णनो नाम द्वितीयः षडः संपूर्णः ॥ २ ॥

दूहा

दरसन ज्ञान चरित्रमय, मिलियां शिवपुर जंत;
पीर खांड घृतसु मिल्यां, अनुपम स्वाद लहंत. १
तिण तिय पंड सुण्यां थका, वधस्ये आतमज्ञान;
सावधान थइ सांभलो, तजि दूरमति अभिमान. २
गुण गुरुताग्रह देवनत, ज्ञान रूप व्रत पंच;
आदरज्यो पंडित तुम्हे, अचय सुप गुण संच. ३
भावना दाषी व्रत तणी, शुद्ध भणी पचवीस;
ईर्यादिक पण समिति त्रय, गुपति कही जगदीस. ४
चैत्य देव गुरु वांदवा, जावता वड भाग;
रवि फरस्यो जन बहु वह्या, मुनि चाले तिण माग. ५
दृष्टि देषि मग चालता, उपयोगे अप्रमाद;
ईर्यासमिति तणो कह्यो, धारक मुनि आह्लाद. ६

ढाल—दान उलटे धरी दीजीये—एहनी ॥

साधुगुण एहवा सांभलो, निरदलो कर्मदल भूर रे;
चोर कामी ठग आदर्यो, ते तजो वचन अति क्रूर रे. साधु० १

दोष दस रहित मुनिजन वदे, शुद्ध भाषा भय टाल रे;
कर्कश दुष्ट कटु निष्ठुर, कोपकारी दुषकाल रे. साधु० २
दीन अतिमान अतिभय करी, भूतहिंसा करी जेह रे;
दोष दस वचनना ए तजी, सत्य भाषे गुणी तेह रे. साधु० ३
षोडश दोष उद्गमतणा, सोल उत्पादना दोष रे;
च्यार अंगार दूषण कह्या, दोष दस मलतणो पोष रे. साधु० ४
दोष छ च्यालविणु मागिने, लेय आहार अणगार रे;
कालविला निज योग्य ते, एषणासमिति सुपकार रे. साधु० ५
उपकरण शयनगृहें, देषीने वली पडिलेह रे;
साधु गुणषाणने ते कही, समितिआदान सुष गेह रे. साधु० ६
मूत्र श्लेष्मादि मल नाषतां, भूपरी सहज उपयोग रे;
समिति उत्सर्ग नीते धरे, मुनिजन नित्य निरोग रे. साधु० ७
छोडी संकल्प रागादिना, वसि करे चित्त निजसत्थ रे;
सूत्र सिद्धांतमे प्रेरवे, मनतणी ते मनोगुप्त रे. साधु० ८
संवर मौनधारी यती, गोपवे आपणी जीह रे;
स्थिर करी देह उपसर्ग सहे, कायगुप्ति मुनीसिंह रे. साधु० ९
व्रततणी आठ माता कही, संयमवृद्धिने काज रे;
एहवो चारित आदरे, शुद्धमति मुनिराज रे. साधु० १०
पंडित उपशम आदरो, पामि पांचे समवाय रे;
त्रिभुवन पूज्य भजी एह ल्यो, शुद्ध आतम सुपदाय रे. साधु० ११
मुक्तिनो हेतु हितु जीवनो, एह दाष्यो जिनराय रे;
जे गया शिव जिके जायस्ये, जाय छे तास ए दाय रे. साधु० १२
आतम गुण जाणवो ज्ञान ते, दरसण चारित्त तेह रे;
आत्म जाण्या थकी मुक्ति छे, विगर जाण्या भव गेहरे. साधु० १३
दरसण ज्ञान चारित्रनो, धाम छे ए निज देव रे;
आत्म जाण्या पछी शिव भणी, चाहवी शी परसेवरे. साधु० १४

सिव भव कारण एहनी, शुद्ध अशुद्धता चाल रे;
शेप संयोग मह्‌ कर्मना, आय मिल्या लहि काल रे साधु० १५
आत्म अनुभुतिथी सिद्ध ए, साधवा योग्य पिण एह रे;
आत्म इण जाणवाने कह्या, ग्रंथ सघला गुणगेह रे. साधु० १६
छोडी संकल्प निज रूप ग्रहे, अनुभवो निज चिदानंद रे;
इंद्रिय उपशम्यां पामस्यो, आतमदर्शी गुणचंद रे. साधु० १७
अचर शुद्ध अमूरती, देव निज सेव नितमेव रे;
दीपतो आतमज्ञानसुं, कल्पनातीत निज देव रे. साधु० १८
शुद्ध आनद चिद्देह जे, निल्य अनंत निरोग रे;
जग ताजि ए वस्तुना रागीया, तेहथी जास नही जोग रे. माधु० १९
त्रिभुवन हेय छे जेहने, हेय छे सर्व परभाव रे;
लोक अलोकने देखतो, अनुभवे निज शुद्ध भाव रे. साधु० २०
परम आतमतणे ज्ञानसुं, नवि लपे ते किसी रीत रे,
अनुभवो आत्म अनुभूतथी, परम आनंद गुणमीत रे साधु० २१
जन्मभ्रम मूक साहस धरी, धारज्यो शुद्ध गुण धाम रे,
शुद्ध निश्चय गुण आगलो, राजविमल सुप ठाम रे. साधु० २२

दूहा.

सयम उपशमने दहे, एह क्रोध वड आग;
ज्ञानादिक गुण कोमने, दुर गमावण लाग. १
संयम अमृतने करे, विप सम एह कपाय;
ज्ञानादिक गुणने दहे, एह क्रोध दुखदाय. २
क्रोध दहे निज धर्मने, दहे आगि तरु जेम;
आप तपे पर तापनें, क्रोध अध गतपेम. ३
क्रोधे मुनि नरके पडे, उभय लोक दुपवाह;
क्रोधे द्विपायन ऋपी, कीयो द्वारिकादाह ४

पाप नरक अपकारनो, कारक गुण रिपु रोष;
काल अनादि कषाय ए, राहु समो दुष पोष. ५
क्रोध जीप शम ग्रहो, लही जैनागम वाण;
क्रोध तजो समजल भजो, संयम गुणनो ठाण. ६
कीये मुनिवर क्रोधने, उभय लोक दुषगेह;
रोषपोषने टालवा, भजिज्यो भावना एह. ७

ढाल—ओलगडीनी

भावन भावन भवियण एहवी भावज्यो रे, भाजे भवदुष जेह;
करम करम पीडजे मुझनी ना गमे रे, शुद्ध मित्र मुझ तेह. भावन० १
घातक२ जे छे आतम गुणतणा रे, तीयां पोष्यां किम सुष;
उपशम२ आदरी तजि क्रोधादिने रे, जे शिवमगअभिमुष. भा०२
कुवचन२ परना मुषथी सांभली जी, मुनिवर ध्यावे एम;
न हण्यो२ मुझने जो हणीयो इणे रे, पिण न लीया गुणहेम. भा०३
संयम२ गुणने दाहे क्रोधए रे, तो सी जीवत आस;
भोगवता२ निज कीधे कर्मने रे, सुष दुःष कारण तास. भा०४
मुझने२ रोष वधे तो फेरस्यो रे, पंडित अने अजाण;
उदय२ करम आये दुष उपजे रे, रोष करे नवि जाण. भा०५
भोगवि२ पूरव दुष मन स्थिर करी रे, मत कर को आलोच;
उपसम२ नास करे अति क्रोधथी रे, अज्ञानी अति सोच. भा०६
संकट२ अति आयां रुचे नही रे; जाणि कर्मनो घेर;
कंटक२ पीड्यां जो उपशम तजे रे, तो क्रोधी स्यो फेर. भा०७
बंधन२ क्लेश मिल्यां सषरुं थयूं रे, थास्ये कर्मनो छेह;
पूरव२ उपशम ज्ञान परीषवा रे, आव्या छे दुष एह. भा०८
उपसम२ छोड भजे जे क्रोधने रे, तसु स्यो ज्ञान सुजाण;
निर्जर२ करवा सहेजे कर्मनी रे, सहो परीसह वाण. भा०९

पंडित२ क्रोध करे पर ऊपरे रे, तो स्यो मूरष दोष;
मानव२ मातो जे संसारमे रे, रागद्वेष दुष कोस. भा०१०
पर प्रति२ बोधक गुण तुममे नही रे, पिण मत मूझो आप;
परविष२ हर न सके पिण आपने रे, कोण करे विषवाप भा०११
मानव२ दोषी परी रुठा थई रे, अरु धरता उपशम भाव;
उत्तम२ सुष दायक ते ओलषी रे, आदरिज्यो धरि चाव भा०१२
तोपण २ परनेके तन धन तजे रे, रूसे किम तू आज;
उपसम २ धार्यां आतम शिव लहे रे, रोषकीया दुषराज. भा०१३
मरण २ कष्ट आया पिण साहमी रे, धरे क्षमा शिवकार;
करण २ परीक्षा कसवट ए मिली रे, इम जाणी शम धार भा०१४
उपसम २ शुद्ध ति कोइज जाणज्यो रे, क्रोध मेल जिहां नांहि;
उपसर्ग २ आयां क्रोध जिको करेरे, तसु सघलो तप जाहि. भा०१५
चंदन २ वासा सम करि जे गिणे रे, शिव साधक मुनि तेह;
कारण २ योगे उपसर्ग उपने रे, जसु मन मल न धरेह. भा०१६
पूरव २ कृत ए निर्जर थाय छे रे, कर्म शुभाशुभ रूप;
नरक २ छोडावी जे दे शिवपुरी रे, धरि ते उपसमभूप. भा०१७
करम २ सुसै भवभयसंक नमे रे, जिणथी ते धरि टेक;
दुषनी २ आगी तपे संसारमे रे, वसतां दुष अनेक. भा०१८
उपशम २ ज्ञानहिन रिपु जैनना रे, मोही निर्दय बुद्धि;
मुनिवर २ दोषी जो जन है नहीरे, तो साधु लहे किम सिद्धि. भा०१९
मुनिवर २ आतमध्यानी भव तजे रे, शुद्ध द्रव्य पिहचान;
उपशम २ भाव भजे तजि क्रोधने रे, सुष दूष मरिषा मान. भा०२०
करम २ षपावण मुनि तप बहु करे रे, दुकर कष्ट अलेप,
सहज २ उदे आया षपवा भणी रे, षमी हितकारि देष. भा०२१
धरम २ वृष दाहक दव रोष्पए रे, नामाडे मनीत;
उपसम २ भजन निश्चल करज्यो सहू रे, देवचद्र सुप्रीत. भा०२२

दूहा.

ईश्वर कुलना मद थकी, पामे नीची जात;
रतन विवेक न ले सके, जसु मन मदनी तांत. १
अहंबुद्धि गिरिशिर चढया, लोपे कुल मरजाद;
गमे विवेक शीलादिने, मान वडो परमाद. २
ज्ञान नसे अज्ञान दे, लोपावे गुरु नीत;
इच्छा चाले विनय विणु, माने उद्धत चीत. ३
निज चारित्त मैलो करे, नीचो झले काम;
गुण मानि तेहज षरो, जेह लषे निजराम. ४
आपा परघातक अछे, मान सर्वथा हेय;
रंक करे राजा भणी, देय विडंबन केय. ५
मसे मनोरथ चिंतवत, गाले कीरतिवेल;
हणि त्रिवर्ग निज गुण हणे, मानव मदनी केल. ६

॥ ढाल—एक लहरि ले गोरलो एहनी ॥

गृह अपयश शस्त्र ज्ञाननो रे, पाप षाड ए माय रे;
निजगुण शिवपुर अरगला रे, शील दाहक दुषदाय रे. १
माया ममता परिहरो रे, कुगति कुमतिनी षाण रे;
मायायुत व्रत अफल छे रे, सुपन राज जिम जाण रे. माया० २
मायायुत किरिया करे रे, राषे शिवनी चाह रे;
मायावी न टिकी सके रे, पल एक शिव मग माहि रे. माया० ३
साधु ति केइ जस लहीय रे, जेह हवे गतसाल रे;
भयकारी पंडित कह्यो रे, माया मोटो साल रे. माया० ४
अपजस दे दुरगति करे रे, उभय लोक दुषकार रे,
चितमे सोच रहे सदा रे, वाधे करम असार रे. माया० ५
संयम मारग नासवे रे, भांजे शिवनी चालि रे;
बकसम वंचक जग ठगे रे, परभवनो भय टालि रे. माया० ६

लोभ न करज्यो मानवी रे, लोभ गमावे सोभरे, "ए आंकणी"
कष्ट करी भव नीगमे रे, करतो नव नव लोभ रे. लोभ० ७
पेट भराई नवि मीले रे, तो पिण चाहे राज रे;
मात पिता गुरुने हणे रे, लोभी धनने काज रे. लोभ० ८
जे जे कारण नरकना रे, ते सब लोभथी थाय रे;
श्रुतमे लोभ बुरो कह्यो रे, निरलोभी शिवराय रे. लोभ० ९
रोष दमो उपशमथकी रे, मद दमि मार्दव सोम रे,
आर्जवथी माया दमो रे, निस्पृहताथी लोभ रे. लोभ० १०
योग मिल्यां विण नवि करे रे, क्रोधभणी ते साधु रे;
क्रोधादिक जित्या पछे रे, मोक्षमार्ग ते साधे रे. लोभ० ११
निज अनुभव प्रगट्यो हवे रे, पामे आतमसिद्धि रे;
ज्वर कषाय जीती लहे रे, देवचद्र पदऋद्धि रे. लोभ० १२

दूहा.

इंद्रिय गण जीत्या विना, नवि उपशम कषाय;
क्रोधादिक जय कारणे, अक्ष दमे मुनिराय. १
इंद्रिय विकरथाथी वधे, क्रोध गहन वड व्याधि;
जिम जिम इंद्रियसुं लहे, तेम वधे मन आधि. २
रिपु कषाय जयचाह जो, तो पहिला इंद्रिय जीति;
अक्ष कषाय निग्रह भणी, एह अपूरव रीति. ३
इंद्रिय सुष दुषमम अछे, सर्व क्लेशनी संधि;
इंद्रिय गज अव रथ थकी, जोडि ज्ञान गुण बंधि. ४
इंद्रिय अहि विष टालिवा, मत्र वीरजिन वाण;
संयमपंजरमे ठवे, इंद्रिय हरि निज नाण ५
शुद्ध बोध जसु मन अछे, तेहने न इंद्रिय जोर;
तेह न जाणु केण विधि, राचे मूरष चोर. ६

निज स्वभावथी उपना, अनंत ज्ञान सुपधार;
इस गरुड कंदर्प ए, आतम गुण भंडार. ७

पांचमतपविध सांभलो.

हिवे आतम गुण सांभलो, जिम पामो निजरूपो रे;
द्रव्य चतुष्क निज लही, वहि अंतर सुप भूपो रे. हिवे० १
लहि स्वभाव त्रय गुणतणो, जसु आवरण विनासी रे;
शुक्ल ध्यान ज्वाला बले, निज अतिशय शक्ति विकासी रे. हिवे० २
अनादि संबंधी जीवथी, त्रिविध कर्मनो बंधो रे;
तेह षपावी मूलथी, पाम्यो निजगुण सिंधो रे. हिवे० ३
अनंत चतुष्टय प्रगटीया, तम नासे जिम सूरो रे;
आतम परमातम हिवे, ए शिव तत्त्व सनूरो रे. हिवे० ४
अविरत प्रभा प्रकाशथी, दीपे जिम जग भाणो रे;
शूरवीर क्षत्रीय समो, सरव भुमिनो राणो रे. हिवे० ५
एरावण हाथी चढयो, वज्र शस्त्र धरि हाथे रे;
सुर नर सुरपति ए सही, इंद्राणीने साथे रे. हिवे० ६
सर्व जीव सुष दुष लहे, जेत्ता इण जगमांहे रे;
पुण्य पाप रचना सहू, गरुड तत्त्वने मांहे रे. हिवे० ७
गगन गोचर भूषण अछे, जय विजय भुजंगो रे;
अनंत रूप परमीस ए, नभ चाले सुचंगो रे. हिवे० ८
रोगज्वर विषकाकनी, ग्रह किन्नरने यक्षो रे;
मारि अरी द्विप हरि अनल, इत्यादिक भय लक्षो रे. हिवे० ९
यंत्र मंत्र दैत्यादिनी, टाले भीत समस्तो रे;
गारुड मुद्रारूप ए, आतम रूप प्रशस्तो रे. हिवे० १०
सरव तत्त्वनो सार ए, समय सार ए थायो रे;
कर्म नाग विष एह रे, निज अनुभव पंष वायो रे. हिवे० ११

अविनाशी अविकार ए, रतन त्रय गुण भूपो रे;
निज आतमसु ए ग्रहो, गरुड तत्त्वनो रूपो रे. हिवे० १२
चमत्कारी सहु जगतणो, कुसुमसायक ए कामो रे;
शिवकामी जे मुनि कह्यो, अंतर आतम रामो रे. हिवे० १३
चंचलभ्रूनी चालना, सुदर रूप सहाया रे;
स्त्री समूह रागी हूवे, ते ए चेतन राया रे हिवे० १४
अविनाशी नित चेतना, ज्ञान ज्योति निज नारी रे;
तसु चाहक ए आतमा, काम तत्त्व गुणधारि रे. हिवे० १५
ऋतु वसत फूली सहु, वनराय अढारह भारो रे
सरस मलय वाजीया, कदर्प्प उदयना कारू रे. हिवे० १६
सुंदर लील विलासनी, रूपवंत गुणकारी रे;
मुनिजन मनने चलाविआ, नारी धूनारी सारी रे. हिवे० १७
रोधक शिवपुरमग तणी, सहु जगनी जयकारी रे;
नारी गुणधारी थयी, काम तत्त्व गुण चारी रे. हिवे० १८
जे जे गुण छे जगतमे, जे गुण इण तनमाहे रे;
ते सहु इण आतमतणा, गुण दाख्या ग्रथ निमाहे रे हिवे० १९
तिण ए आतम दाषीयो, गुणसागर सदा स्वरूपो रे;
इंद्रियमे जे सुपतणो, तिण काम तत्त्वनो भूपो रे. हिवे० २०
देव मानव अहि शक्ति जे, जे जग विसयकारी रे;
ते सहु आतम शक्ति छे, तिण आतम ध्यान धारो रे. हिवे० २१
शक्ति अनत चेतनतणी, दाखे कूण शक्ति सरूपो रे;
नव नव ध्यान पदे चढे, कटे करमनो धूपो रे. हिवे० २२
चरणतले जग शक्ति छे, जसु ज्ञान ज्योतिने आगे रे;
जगपति जगकारण गुरु निजज्ञान करीने जागे रे हिवे० २३
कर्म मले मेलो थयो, स्वेछाइ कर्मने बधे रे;
नवि देखे निजरूपने, अज्ञान पटलथी अधे रे. हिवे० २४

राग अज्ञान वशे पड्यो, पामे भव दुष अपारो रे;
दृषद् कंचन सम न मानो तो, बंधे बहु कर्मनो भारो रे हिवे० २५
सुष दुष परिणामे लहे, इष्ट अनिष्ट प्रभावे रे;
काम अर्थ लालच लगे ए, नव नव संकट जन पावे रे हिवे० २६
काम अरथ लालच तजो, ध्यावो जिनधर्म स्वभावो रे;
निज अनुभव रस आदरो, ज्युं देवचंद पद पावो रे हिवे० २७

दूहा.

हिवे केइ यम नियम वली, आसन प्राणायाम,
प्रत्याहारने धारणा, ध्यान समाधि वसु नाम. १
यम नियमा द्वय टालिने, के अपे छे अंगः
के मुनि बीजा छे कहे, उत्साहादिक चंग. २
ए कारण मन थिर भणी, थीर मनथी दे सिद्धिः
क्लेशहीन मुनि मन दमे, यम नियमादिक लद्धि. ३
अष्ट योग मन थिर करी, शिवमग साधक थाय;
मन थिरताथी शिव लहे, भाखे श्री जिनराय. ४
मन विकार रूंध्या लहे, मुनि अक्षय सुष जोडि;
इण कारण मन वश करो, ज्युं नासे दुष कोडि. ५
चित्त दम्या निज गुण वधे, जन्म मरण भ्रम जाय,
मन विणु जीते अफल सब, मन जीते शिव थाय. ६

ढाल—नायकानी.

कुसल लाभ मन रोधथी रे, आतम तत्त्वनो लाभ रे. सुगुण नर०
आपा पर वंचे जिके रे लाल, निजमन थिरता साह रे. सुगुण० १
मन गज वस कर ज्ञानसुं रे लाल, मन वशि विण शिव नांहि रे;
सुगुण०

ध्यान सिद्ध मन शुद्धथी रे लाल, भांजे भव दुष दाह रे.
सुगुण० मन० २
तिन भुवन तसु दास छे रे लाल, जसु वशी मनमातंग रे; सुगुण०
मुक्ति गेह ते जन लहे रे लाल, जसु मन छे निःसंग रे.
सुगुण० मन० ३
जिम मननी शुद्धि हुवे रे लाल, तिम तिम वधे विवेक रे; सुगुण०
शिव चाहे मन वश विना रे लाल, मृगतृष्णा सम भेक रे.
सुगुण० मन० ४
ज्ञान ध्यान तप जप सहु रे, मन थिर कीधां साच रे; सुगुण०
जग दुष दायक मन अछे रे लाल, विषय ग्राममे राचे रे.
सुगुण० मन० ५
ज्ञान पराक्रम फोरिने रे, वश करी मन गजराज रे; सुगुण०
नव वन मन कपि जिण दम्यो रे लाल, तसु सिद्धा सवि-
काज रे. सुगुण० मन० ६
मन गज वश न करी सके रे, तसु ध्यानादिक पेह रे; सुगुण०
जे न सधे श्रुत तप थकी रे लाल, मन थिर साधे तेह रे.
सुगुण० मन० ७
अनंत कर्म चउ भेदना रे, मन थिर किधां जाय रे; सुगुण०
जसु मन वश ते शिव लहे रे लाल, दंडो स्याने काय रे.
सुगुण० मन० ८
श्रुत तप यम मन वश विना रे, तुस पंडन सम जाण रे; सुगुण०
मन वशे विणु शिव नवि लहे रे लाल मन, वशे शिव सुप ठाण रे.
सुगुण० मन० ९
मन वशे निगुण गुण लहेरे, जिण विण सहु गुण जाय रे सुगुण०
तिन भुवन जीत्या मने रे लाल, मन जयकार को थाय रे.
सुगुण० मन० १०

श्रुतधर पिण मन वश विना रे, नवि जाणे निज रूप रे; सुगुण०
शांति विषय विणु मन करी रे लाल, मुनि थाये शिव भूप रे.
सुगुण० मन० ११

स्वर्ग मृत्यु पातालमे रे, द्वीपउदधी गिरसीस रे; सुगुण०
तीन लोकमें नित भमे रे लाल, चंद कहे निशदिस रे.
सुगुण० मन० १२

दूहा.

तजे विकल्प मन थिरसु रे, शुद्धातमनो वास;
थिर मन पिण निज ज्ञानसुं, पंडे मोहने पास. १
शांत चित्त रागादियुत, भ्रमसागर निवडंति;
ते उद्यम करी बापडा, जिणथी मोह गडंति, २
रागादिक स्वभावथी, हणे ज्ञान गुणराज;
त्यागी योगी ते छले, रागादिक भवसाज. ३
शंकित कंपित मूढ चित, रागादिकथी थाय;
अति यतने करी वारता, रागादिक नवी जाय. ४
रागादिक जित्या विना, देहकष्ट वे काम;
राग द्वेषने जीपने, मुनि पामे शिवठाम. ५
मोहराग भ्रम चय गयां, मुनि देषे निजरूप;
शिव इच्छक षग ज्ञानथी, हणे मोह भव भूप. ६

॥ ढाल—मेलो थापि चल्यो वलि रावण. एहनी ॥

मोह दमो निज आतम बलथी, निश्चल मने करि सिंह रे;
ज्ञानरोह गिरथी चेतनने पाडे मोह अबीह रे. मोह० १
रागद्वेष तजि शिवसाधन भजी, मुकी जनम चय भर्म्म रे;
रागद्वेष वंच्यो ए चेतन, नवि जाणे निज ब्रह्म रे. मोह० २

रागनाश चित थिर वशिवाथी, मुनि जाणे सहू ज्ञेय रे;
वीतराग आनंदने आगे, त्रिभुवन आनंद हेय रे. मोह० ३
घटे अज्ञान राग अभावे, राग वधारे ताहि रे;
सहज आतमसुप आगले भवसुप, अनत भाग पिण नाहिरे.मोह०४
रागद्वेष अनादि महारिपु, भवदुप संतति बीज रे;
रागी बंधे हरे विरागी, जिनवच पिण एहिज रे. मोह० ५
ज्ञान भानु आतापथी सोपो, रागद्वेष ए नीर रे;
रागद्वेष अणु मात्र थका पिण, नावे ज्ञान सुधीर रे. मोह० ६
नित्यानंदमयी शिवसंतति, पामे श्रीवीतराग रे;
एक ठोड दो थाय अवश्ये, जिहा द्वेष तिहां रागरे. मोह० ७
ज्ञान राज्य चाहे मानव जे, ते छोडे रागने द्वेष रे;
पंप विना जिम पषी निवलो, तिम मन विणु रागद्वेष रे. मोह०८
रागद्वेष तरू मूल नीकंदी, वसि करि मन कपि चालरे;
मोहथी वाधे रागद्वेष तिण, मोह भणी तु टालि रे. मोह० ९
रागद्वेष तरू बीज मोह छे, दोष सेनापति मोह रे;
भवप्राणी दावानल सम ए, कर्मबंध दृढ मोह रे. मोह० १०
मोह नींद रागादिक वशथी, जीव लहे दुप कोडी रे;
लोकालोक ज्ञानी ते देपे, जे हणे मोहनी जोडी रे. मोह० ११
मोह अनल जल श्रुत उपशमथी. शम पामे चणमाहि रे;
मोह सहित ससारी कहीये, मोह विना शिवमाहि रे. मोह० १२
अज्ञानी निज पर न पीछाणे, मोहतणे वमे लागि रे;
रागद्वेष मद मोह दमो ए, निश्चय शिवपुर माग रे. मोह० १३
मोह रागादिक भव कारण ए, तजिज्यो एहनो सग रे;
देवचंद्र सुपरूप पिछाणे, निज अनुभवरस चंग रे. मोह० १४

दूहा.

मोह वह्नि उपशमविवा, उथेडण तस राग;
संयमथी थिर करणने, भजि उपशम वड भाग. १
इष्ट अनिष्ट संयोगथी, जसु मन थिर सोभंत;
काम भोग तनुराग तजि, उपशम भजि गुणवंत. २
भववागुरने छेदने, ग्रहि शिवपुरनो राज;
शम रविथी हरि राग तम, भजि आतम शिव ताज. ३
निज आत्मा निश्चय करी, जीव कर्म नित भिन्न;
ज्ञान राज्य सुष तेहने, जे शमधारी धन्न. ४
निज आतम गुण अनुभवो, तजि रागादिक भाव;
राग बाग भंजे मुनि, उपशम गजने दाव. ५
मोह राग बंधन गयां, वाधे उपशम कंति;
आश अविद्या नवि रहे, आयां उपशम शंति. ६

ढाल—पास जिणंद जुहारिये. एहनी ॥

उपशम नाव धरो मुनि, जिम छूटे कर्म अनंतो रे;
परम ध्यान संयम जिन दाष्यो, उपशम भाव महंतो रे. उप० १
शांतचित्त मुनि सुखीयो दाष्यो, ज्ञान ध्यान गुणधारो रे;
सहज सिद्धि सुष वांछे जे ते, धरस्ये उपशम सारो रे. उप० २
दोष जोग त्रय विणु निज आतम, भावे उपशम भावे रे;
अन्य द्रव्य पर्यायथी आतम, भिन्न करण समदावे रे. उप० ३
अचल सौख्य अव्यय पद तेहने, जे उपशम गुण धामी रे;
तेय जगत्रय शुभाशुभ रूपी, गृह आतम गुण स्वामी रे. उप० ४
क्रूर जंतु पण वैरि तजे निज, मुनि उपशम परसादो रे;
पशु पिण मित्राई करे, तजि मच्छर विषवादो रे. उप० ५
क्रूर जंतु भय सहु टले, सम संगे घन जिम दाहो रे;
निर निरमल मन थाये वली, आम्र जल जिम वाहो रे. उप० ६

ग्रह जच सुर नर भय टाले, सिंह सरप भय जायो रे;
रोग वैर बंधन टाले, उपशमतणे सहायो रे. उप० ७
शशि रवि धरणी वायु ए, छे जगमे उपकारी रे;
एथी पण अधिको अछे, मुनिवर शम अधिकारी रे. उप० ८
हरि हरिणी मेला रहे, तिम हंस बिलीने रगो रे;
नाग मोर मेला रहे शमधारी मुनिने सगो रे. उप० ९
के वंदे नंदे कोइक वली, के मारे को पूजे रे;
तो पिण समदृष्टि जे मुनि ते, निज स्वभावने पूजे रे. उप० १०
पुर वन कनक दृषद् अहि माला, शील शय्यादि अनेको रे;
सुष दुष बेऊ जे सम जाणे, ते समधारी छे को रे. उप० ११
गृह स्मशान निंदकने वंदक, कुंकुम कर्दम लेपो रे;
कंटक कुसुमतणी शय्या जसु, शम मुक्ताफल सीपो रे. उप० १२
दिव्यरूप नारी जग प्यारी, देषी मन नवि चाले रे;
अनुपम उपशम लीलविलासी, शुद्ध शिव निज माले रे. उप० १३
मेरु चले पण उपसर्ग योगे, न चले मन शम धारो रे;
भ्रांत मूढ सुतो मदमातो, मुनि जाणे जग सारो रे. उप० १४
सुरगुरु पिण उपशमनी महिमा, पूरण न शके दोषी रे;
पाठक राजसार गुणसागर, शुद्ध अर्थना भाषी रे. उप० १५
वाचक आगम परमागमना, ज्ञानधर्म गुणज्ञाता रे;
आतम अनुभवरस मानससर, राजहस विख्याता रे. उप० १६
शुद्धादेय अमोल अरूपी, देवचंद्र नित ध्यावो रे;
अचय निज परमातमना शिव, आनद सिंधु रस पावो रे. उप० १७

इति श्रीज्ञानार्णव योगप्रदीपाधिकारे प० देवचंद्रविरचिते ढालभाषाबंधे पंचसमितित्रिगुप्तिमोहजयवर्णनोनाम तृतीयः षंडः ॥ ३ ॥

दूहा.

दान शील तप भावसु, मीलियां जिम सुपदाय;
तिम आतम गुण साधवा, चोथो पंड कहाय. १
वसु सहज अणजाणता, जन छे अज्ञ अनेक;
आनंदी भवभय विना, दोय तीन के एक. २
अपशम मुनिने मन रह्यो, ध्यान विना थिर नांहि;
ध्यान थिरे शम थिर अछे, भेद नहीं इणमांहि. ३
शम थिर थाये ध्यानथी, कर्म कोटि कटि जाय;
धरे ध्यान समवंत मुनि, तजि विभाव पर्याय. ४
भवदव दाह शम्या विना, ध्यान षीरनिधि जेम;
ध्यान सिद्ध साधक प्रवर, दुरति काष्ट दव तेम. ५
अशुद्ध ध्यान दुष ध्यान तजि, मुक्ति बीज भजि ध्यान;
के मूरख माने इसो, नरक दायने ध्यान ? ६
काम क्रोध पीडित करे, रिपु हणवाने ध्यान;
चाहे कूडां शास्त्र कहि, निज पूजा अभिमान. ७
उभयमार्गच्युत पापमति, द्ये अशुचि उपदेश;
ध्यानी शिवधारक करे, शुद्ध ग्रंथ आदेश. ८
चिंतारोध ते ध्यान छे, अपर भावना जाण;
अनुप्रेक्षा चिंतन अरथ, लख्यो शास्त्र सहि नाण. ९
शुद्ध अशुद्ध दु भेदथी, ध्यान मोक्ष भव थान;
निज ध्यानी निराग मुनि, ध्यावे शुद्ध ज ध्यान. १०
अज्ञानि रागादियुत, ध्यावे ध्यान अशुद्ध;
आर्त्त रोद्र कुध्यान छे, धर्म शुक्ल दो शुद्ध. ११

ढाल—गौतमसामी समोसरचा. एहनी ॥

आर्त्त रौद्र तजो तुम्हे, धर्म शुक्ल धरि ध्यान रे,
चउविध एहिज ध्यान छे, प्रथम ध्यान दुष थान रे. आर्त्त० १
प्रथम अनिष्ट सयोग छे, बीजो इष्ट वियोगो रे;
राग प्रकोप तीजो दाषव्यो, तुर्य निदान सयोगो रे. आर्त्त० २
दव वन विष मातंग हरि, दुर्जन रिपु वली रायो रे;
घन तन घातक देषीने, पहिलो आरत थायो रे. आर्त्त० ३
उपज्या चर थिर भावथी, स्मृत दिठा वली दष्टो रे;
जे मन क्लेशने अनुभवे, तेही ज आर्त्त अनिष्टो रे. आर्त्त० ४
एह अनिष्ट गमाडिवा, चिंते तास उपायो रे,
प्रथम आर्त्त मन जल्पथी, जिनवर देव दिषायो रे. आर्त्त० ५
राज्य वधु स्त्री नाशथी, शोक मोह भ्रम थायो रे;
बीय आर्त्त दुःख आर्त्त ए, इष्टवियोग कहायो रे. आर्त्त० ६
कास श्वास ज्वर पित्तथी, श्लेष्म घात दुष धामो रे;
आधि व्याधिथी आर्त्त य, रोग चिंते इण नामो रे. आर्त्त० ७
स्वल्प रोग पिण उपना, चिंते बहुत उपायो रे;
चित्त षेद बहु अनुभवे, तीजो आर्त्त कहायो रे आर्त्त० ८
काम भोग स्त्री राजस्यु, अन्य मरव आनदो रे;
इंद्रिय सुष नित चिंतवे, तूर्य आर्त्त भवकंदो रे. आर्त्त० ९
जिन सुरपति पदपुण्यथी, रिपु कुल चय पण तेमो रे;
पूज्य लाभ चाहे हुवे, आर्त्त नियाणा एमो रे आर्त्त० १०
सुख काजे रिपु मारिवा, जेह दुष्टपरिणामो रे;
आर्त्त नियाणा नाम ते, दाष्यो दुषनो धामो रे. आर्त्त० ११
एम मचेपथी चोविधे, कह्यो आर्त्त जिनरायो रे,
अनत जीव परिणामथी, भेद अनत कहायो रे आर्त्त० १२
ए कुध्यान चउभेदथी, छे पांचे गुणधामो रे.
छठेमें त्रय भेद छे, नही नियाणा नामो रे. आर्त्त० १३

निंद्य लेशथी उपजे, एह दुरित दव धामो रे;
पूर्वबद्ध संस्कारथी, वली थाये दुष धामो रे. आर्त्त० १४
फल तिरिगति छे एहनो, काल महूरत मानो रे;
मिश्र भाव बल ए हुवे, दुक्ख अनंतनो थानो रे. आर्त्त० १५
शंका शोक प्रमादता, भय कलि चिंता भर्म्मो रे;
विषयोत्सुक उन्मादता, भ्रांति नींद तनु सर्म्मो रे. आर्त्त० १६
बाह्य लिंग ए आर्त्तना, दाष्या श्रुतमें एमो रे;
हेय कुध्यान करी ग्रहो, देवचंद्र गुण हेमो रे. आर्त्त० १७

दूहा.

रौद्र ध्यान चउ भेद सुणि, रौद्र चित्त दुषनीम;
क्रूराशय करुणा विना, रौद्र कार्य करी भीम. १
हिंसानंद प्रथम पय, बीये मृषा आनंद,
तीय चौर्य आनंद सुणी, तुर्य संरक्षानंद. २
पापकथक हिंसानिपुण, नास्तिक निर्दय मीत;
सहज क्रूर कपट मदी, कह्यो रौद्र दुषभीत. ३
हणे हणावे उपदिशे, चाहे शिवसुखगेह;
जीव हणे अरचे गुरु, हिंसानंदन तेह. ४
चर थिर जीव हण्या लहे, मनमे कौतक जेह;
मन चाहे रणमांहि ए, हारे जीपे एह. ५
वधवार्त्ता दीठां सुण्यां, हरषे जे दुखवाणि;
हुं मुज रिपु कदि मारिस्युं, एह रौद्रमति जाणि. ६
मुज वइरी जीइअछे, हणस्युं कलबल पामि;
हिंसानंदन रौद्रता, किता कहूं परिणामि. ७
परने दुषीयो देषीने, मन पामे संतोष;
परसुष देषी दुष लहे, एह रौद्रनो पोष. ८

दे हिंसाना उपगरण, पोषे हिंसक जीव;
बाह्य लिंग ए रौद्रना, निर्दयपणो सदीव. ९

ढाल—अधिका ताहरा हूता अपराधी एहनी ॥

चतुर नर रौद्रध्यानने छाडो, मोटो कर्म भयवामी;
बीजो रौद्र मृषा आनंदे, मूक उक्त मलवासी. चतुर० १
कूडा शास्त्र कुमत देषावी, लोका व्यसन लगावे;
हय गय रथ पुर कन्या धन वन, कूड प्रसादेय ल्यावे. चतुर०२
भोला जनने धरमथी पाडे, जूठे पंथ चलावे;
साचो जूठ करे रिपु मारे, कूड रौद्र परिभावे. चतुर० ३
व्यसन संकटमें पाडु जनने, कूड बोली धन जोडुं;
वचन युक्तिसु भव कादममे, अज्ञानीजन बोलुं. चतुर० ४
कूडो बोल अकारज साधे, निजने वक्ता माने;
मृषा आनंद रौद्र ते कहीये, जूठ जल्प सुख जाने. चतुर० ५
चोरी कर्म वपाणे दाषे, चोरीनी विधि याची;
चौर्यानंद रौद्र ते कहीये, दुष जल वापी साची. चतुर० ६
चौरी चित्त रहे नित मनने, चोरी करतो हरषे;
चौर्यानंद रौद्र कह्यो जे, तिण नित परधन निरषे. चतुर० ७
दुष्ट चौरमति करि निजमाथी, परषाव्या धन लूटे,
दसविध परिग्रह आणे चोरी, दीन मानवने चूटे. चतुर० ८
इत्यादिक चोरी विधि नव नव, नित नित मनमे ध्यावे;
तीजो रौद्र कह्यो दुषसागर, नरकनिगोद भमावे चतुर० ९
बहु आरंभ परिग्रहरातो, मातो वीकलप मोहे;
चोथो रौद्र ससारनो कारण, आठ मदे करी सोहे. चतुर० १०
रिपु पुर ग्राम हणी रिपु मारी, अति ईश्वरता वरस्युं;
जे मुझ जनपदनो तृण चोरे, तास कुलक्षय करिस्युं. चतुर० ११

मोटा सेवक धनमणिबहुला, सवि लोके शिर नाम्युं;
तरि सागरतट भेदि अरि हणि, जगत राज्य में पाम्युं. चतुर० १२
विषय प्रयोग विश्वास करीने, रिपु हणिने धन आणुं;
परिग्रह रक्षानंद इण नामे, तुर्य रौद्र दुष थाणुं. चतुर० १३
परिग्रह मेलण राषण काजे, जे मन नित आलोचे;
रौद्र करम उदयाचालि आव्या, नित भवभ्रम तो सोचे. चतुर० १४
क्रूर कठोर वंचक बचवादी, दंड दुष्ट निस्त्रंशी;
लिंग पांच ए रौद्र तणा गिण, कृष्ण लेश निस्त्रंशी. चतुर० १५
लाल नयण बांका अति भीषण, दुष्टाशय भयकारी;
मिश्र महुरत थिति छेय जसु, निच मार्ग संचारी. चतुर० १६
धर्मवृक्षमांहे दहे, ए कुध्यान सहाये;
रोगी विषय कषाय गृहीने, निंद्य ध्यान बहु थाये. चतुर० १७
दृढ संस्कार पूरवकृतयोगे, मुनिने पण प्रस्तावे;
आवे पिण निज अनुभव आगली, कायर जिम नासी जावे चतुर० १८
ध्यानयुगल कटुफल मलआगर, दुरगति कुगतिनो स्वामी;
देवचंद्र ए हेय कह्यो छे, छोडो शिव विसरामी हो. चतुर० १९

दूहा.

उपशम धरी मन वश करी, तजी भोग अनुराग;
अनुक्रमरूपे वर्णवुं, धर्मध्यान मग लाग; १
मैत्र्यादिक चउ भावना, ध्यान तणी गत शोग;
जे ज्ञानी मुनि शांतमन, तेह ध्यान ने योग. २
थावर जंगम जीव सब, के हिंसकके शांत;
के सुष के दुषकारके, के विषयी के दांत. ३
निज स्वभाव पामो सकल, सहु पामो सुष गेह;
समदृष्टीभावे मुनि, मैत्री भावन एह. ४

रोगी दीन सशोकमय, वध बंधनथी नद्ध;
भूष तृषा श्रमसुं नड्या, शस्त्रघात भग रूद्ध. ५
मरण भये पीडित भर्णी, रखानी मति जेह;
अभयदान माति निरम्ली, करुणाभावन तेह. ६
दरसन ज्ञान चरितयुत, तत्त्वलीन सम धार;
जितें कषाय तृष्णारहित, सुमति गुपति भंडार. ७
जिनशासन परि भावना, नित नित वधती देषी;
मन प्रमोद पामे अधिक, मुदीता भावन पेषी. ८
निर्दय परस्त्रीलंपट, सबभच्ची अतिदुष्ट;
मुंनिनिंदक नास्तिकमति, निजसगी गुणभ्रष्ट. ९
एहवा जनने संग परिण, रहे मध्यता साहि;
तेह उपेचा भावना, कही जिनागममाहि. १०

ढाल–धणरी बिंदली रग लाग्गो एहनी

हांरे मोरा लाल आनंद कर ए भावना, रागहीन शिवमाग मोरा लाल;
आत्मसौख्य मुनि अनुभवे, रमतो भावन बाग मोरा लाल. १
भावो जे गुणभावना, अध्यातमगुणरूप मोरा लाल;
निरविषयी ज्ञानी मुनि, परमातम सुप भूप मोरा लाल. भावो० २
हांरे० मोह मिटे ए भावता, योग ध्यान थिर थाय मोरा लाल;
परम सौख्य मुनि भोगवे, उदासीनता रोग मोरा लाल; भावो० ३
हांरे० निरागी मुनि एकता, ग्रहे ध्यान थिर काज मोरा लाल;
निच ऊंच कुण ध्यान छे, साधन ध्यान समाज मोरा लाल. भावो० ४
हांरे० ठाम दोषथी चित्त ए, तुरत थाय सविकार मोरा लाल;
तेह ठाम एकात लहि, थाये शात सुपकार मोरा लाल. भावो० ५
हांरे पाषडी मिथ्यामति, म्लेच्छ नीच जिहा राय मोरा लाल;
रौद्र भूत देवीतणो, नास्तिक मंदिर थाय मोरा लाल. भावो० ६

हांरे० वेश्या व्यभिचारी वली,जिहां कुग्रंथ वंचाय मोरा लाल;
मानी दुशीली जिहां, नट विट भेला थाय मोरा लाल. भावो० ७
हांरे० कामी भील चंडालनो, राक्षस हिंसाधाम मोरा लाल;
जूवारी मद्यपाननो, जे चीतारा ठाम मोरा लाल. भावो० ८
हांरे० नारी मनचलकारणी, वली नपुंसक गेह मोरा लाल;
नीच करम कर गेहमे, न रहे ध्यानी जेह मोरा लाल. भावो० ९
हांरे० मोह क्षोभ मनने करे, अस्थि रुधिर हुवे जेथी मोरा लाल;
भीमशब्द जीहां जीवना, ध्यानी न रहे तेथी मोरा लाल. भावो०१०
हांरे० ध्यानध्वंसना जगतमे, जिके कारण जाणि मोरा लाल;
ते निश्चयस्युं मुनि तजे, देवचंद्रनी वाणि मोरा लाल. भावो० ११

दूहा.

शेत्रुंजादिक तीर्थ शीर, वली कल्याणक ठाम;
सागर गिर वन गव्हरे, नदी तीर गढ धाम. १
तरु कोटर उद्यानमे, गुहागर्भ समशान;
जिनगृह आदिक थानके, मुनि आरंभे ध्यान. २
गतकोलाहल मन करी, निरुपद्रव सुष थान;
भुंहर मंडप शून्य गृह, मुनि आरंभे ध्यान. ३
घन तप वायु तुषारथी, जिण थानक नहि हाण;
जिहां नव धरे रागादि नित, मुनि आरंभे ध्यान. ४
काष्ट शिला भूपट्ट परि, आसन मंडे साधु;
वज्र वीर पर्यंक तिम, कायोत्सर्ग अगाधु. ५
जिन आसन मन थिर रहे, तेही ज आसन सार;
काउसग पर्यंक दो, आसन पंचम आर. ६
प्रथम संघयणी निर्भयी, थिर आसन मतिधीर;
शुद्धध्यान धरि आपणो, सिद्ध लहे मुनिवीर. ७

नवि चाले स्वभावथी, आय मिन्या अति दुप;
सहे परिषह मंवरी, निज आतम सनमुप. ८
हरि अहि हाथी असुर भय, भूमि भ्रमण विधान;
चक्र शूल दुप उपना, धीर न छोडे ध्यान. ९
निज धीरजथी मुनि मणी, भय नवि थाये कोय;
निर्विपयी संवेग धर, निज निज ध्यानी सोय. १०

ढाल--सीता अतिसोहे एहनी

थिर मन विघन निवारो, शुद्धातम ज्ञान सभारो हो०
मुनिवर ध्यान धरो १
थान आसन ए थोक, मन वश विण सघला फोक; मुनिवर०
थिर निरमल मन धीर, संवेगी ध्यायक वीर हो. मुनिवर० २
वहु जन थानक शस्य, जो एकम थाये वश्य हो; मुनिवर०
सनमुख पूरव उत्तर, ध्यानी छे सहग अतर. मुनिवर० ३
त्रिगुण सहित गतमच्छर, पहिला सिध्या वहु मुनिवर; मुनि०
मुष्य गौण मुनि भाष्या, अप्रमत्त प्रमत्त दोय दाष्या. मुनि० ४
अप्रमत्तथि काया, ते ध्याता ध्यान सुहाया हो; मुनि०
अप्रमत्त लघुज्ञानी, मुनि थाये धर्मनो ध्यानी हो. मुनि० ५
तूर्यथी सपतम ताई, धर्मध्यानतणा गुण थाई हो, मुनि०
ध्याता ध्यान त्रिभेद, लेश्याथी फलउमेद हो. मुनि० ६
मुनि आसन जयकारी, सुसमाधि अपंड विहारी हो; मुनि०
आसन चलथी चल अंग, तिण बाधे पेदनो संग हो. मुनि० ७
वात धूप अतिपाले, आसनधर मन नवि चाले हो मुनि०
लहि अभिमत थिर थाने, पर्यंकासन घरे ध्याने हो. मुनि० ८
पर्यंक मध्य उत्तान, विकमन करकमल ममान हो; मुनि०
नामाग्रदृष्टि थिर शान, निश्चल तारानी कांति हो. मुनि० ९

भ्रू चालि विकार विहीन, थिर अधर पल्लव मनमीन हो; मुनि०
सुप्तमत्स्य सर जेम, थिर वदनकमल गतप्रेम हो. मुनि० १०
थिर मन ऋजु तन धारे, चित्रामसूरति आकारे हो; मुनि०
मन मल धोय विवेके, निज ज्ञानथी राग न रोके हो. मुनि० ११
सागर जेम गंभीर, कनकाचल जिम अति धीर हो; मुनि०
शांत समस्त विकल्प, नाठी सहु भ्रमणा जल्प हो. मुनि० १२
दृषद चित्रामसम जाणे, जसु मुरति सहू सम जाणे हो, मुनि०
थिर आसन गुणगेह, शुद्धातमध्यानी तेह हो; मुनि० १३
इण विधि ध्यान जे ध्यावे, ते देवचंद्रपद पावे हो. मुनि० १४

दूहा

ध्यान सिद्ध निज शुद्धिने, मन धर प्राणायाम;
आगमरीति वर्णवुं, कारण शिवसुख ठाम. १
मन थिर प्राणायाम विणु, करि न सकेइ कोय;
पूरक कुंभक रेचके, तीन भेद सो होय. २
बाहर आंगुल पांचिनें, जे पूरिजे वायु;
पूरक पवन कह्यो तिको, पवन जाणमे रायु. ३
रुंधे थिर करि पवनमें, नाभिकमल थिर पंति;
कुंभ तणी परि तेहने, कुंभक पवन कहंत. ४
हलवे हलवे नीसरे, कोठाथी जे वायु;
चित्त शांत कारण तिको. रेचक पवन कहायु. ५
नाभिकंद हृदिपदम विचि, पवन नाथनो ठाण;
आयु शुभ फल कहे, पवन चालिना जाण. ६
जोगी पवनाभ्यास धर, जाणे चेतन चालि;
हृदयकमलमें आणीने, पवन सहित मन वालि. ७

विषयाशा मन जल्प सहु, घटे वधे निज नाण;
अव ऊपाय नासे अलग, स्वांतभावना आण. ८
किहां पवन विश्राम छे, नाडी संक्रम केथि;
कुण मंडल गति पवननी, सो हिव कहीइं एथि. ९

ढाल—प्रभु प्रणमु रे पास जिणेसर थमणो एहनी ॥

मन थिर करी रे प्राणायाम अभ्यासीये,
जिणवरतत्त्व रे प्राणायाम प्रकासीये;
प्राणायाममे रे मंडल वायु तपे करे,
तसु चित्ते रे ध्यानसिद्धि अति विस्तरे;
विस्तरे नासा विवरमांहि रच्या चारे मंडला,
जूजूया लक्षण लक्षभेदे कह्या पवनसु मंगला;
ते च्यार मडल अति हि दुरगम जासु शक्ति अपार छे,
स्वसंवेदनथकी जाणे सहु जगमे सार छे. हां मदू० १
तिहां आद्ये रे पार्थिव वीय वरुण अछे,
तीय मारुत रे चोथो वह्नि कह्यो पछे,
घर मंडल रे भूमि बीज प्रभ हेमनी,
वज्रलांछन रे चोकूणक घर पेमनी,
ते पेमनी घर अरध चद्राकार वारुणमडलो,
चंद्राभ वारुण वरुण मडित भरे अमृत अति भलो;
अति नील अलन घनमप्रभ वृत्तबिंदु समाकुलो,
अति चपल दुरगम पवन मंडल लहे पडित गुणनिलो. २
ज्वालायुत रे भीम त्रिकोण सुप्रीत छे,
वह्निमंडल रे स्वस्तिकवीज समेत छे,
पुर चोमेरे एह पवन नित सचरे,
तिणने नित रे प्रणिधान ज्ञानी अनुसरे;

ते हवे नाशाविचर पुरि उष्ण पीले रंग जे,
अति स्वस्थ हलूयो अष्ट अंगुल हृदय नासा संग जे;
अति शीघ्र शीतल श्वेतवरणे वरुण वायु वहे सदा,
अनुभवे पवन विहार जायक द्वादश अंगुलचर मुदा, ३

वहे तीर्छो रे छ अंगुल रंग श्याम ए,
शीत उन्हारे फरस पवन पुर धाम ए;
चोरंगुल रे अर्द्धवृत्त नवदवसमो,
अति उह्नोरे अग्नि तत्त्वथी मन दमो;
थिर कार्य पार्थिव तत्त्व दाख्यो वरुण उत्तम कामने,
चल मलिन काजे वायु वसिक जिनवह्नि तत्त्व सुधामने;
गज तुरग रामा राज्य धन शुभ लाभ भूतत्त्व उपदिसे,
स्त्री राज्य धन सुष सुजन अभिमत सिद्ध वरुण समादिसे. ४

भवपीडा रे शोकविघ्नपरंपरा,
इम दाषे रे वह्नि तत्त्व दुषकंदरा;
भय कलिकर रे वैरमरणदायक अछे,
वायुतत्त्वे रे सिद्ध कार्य पण क्षय गछे;
क्षय गछे षप्रवेशकाले तत्त्व चारे सुषकरू,
ते चलणवे अहित दुषकर तत्त्व च्यारे भयधरू;
ते पेसता रवि सोम नाडी सुष कारण जाणिज्यो,
जो नीकले द्वय नाडी सेती अछे दुषनी षाण तो. ५

वामनाडे रे तत्त्वभूमि जल सुष भुणे,
नीसरता रे अग्नि पवन रविथी हरणे;
चोमंडल रे गमनागमन पवनने.
तसु दाषूं रे भलो बूरो फल जन्मने;
जन्मने मध्यम वाम नाडे चलत दहन समीर ए,
जल भूमि दक्षण नाडि चलतां मध्य फल कह्या धीर ए;

शशि शूर नाडी दाहत्रय त्रय कही शस्यसुलक्षणा,
सितपक्ष वामा उदयकाले कृष्णपक्षे दक्षिणा. ६
चंद्रनाडे रे उदय अस्त रविमे भलो,
ए उधै रे पवन विपर्यय गुणनिलो;
सितपक्षे रे प्रातसमे पडिवातणे,
वामनाडे रे पवन चार सुप गण भणे;
गण भणे ते विपरीत वहती प्रथम दिन मन भय करी,
धन हाणि बीजे दिवस तीजे पंथ देशांतर चरी;
अतियुद्ध अर्थविनास विभ्रम दुःख थान विकार ए,
दे दिवस पाच लगे चलतो पवन पूठे चार ए. हां प० ७
वाम नाडे रे अमृतमय हितकारणी,
प्राणीने रे रविनाडी सुपवारणी;
वामनाडी रे अमृत जेम तनु सुप धरे,
तिम दक्षण रे सितपक्षे वर सुप करे;
सुख करे ते संग्राम भोजन सुरतकार्ये दक्षिणा,
मन इष्ट उत्तम धर्म कार्ये वाम नाडि विचक्षणा;
जे काज ग्रहगण थकी न थाये तेह वामामे रह्यो,
क्षिति वरुण तत्त्वे पवन राजा सर्व सुप साधक कह्यो. हां सर्व० ८
करलिप्रश्ने रे पूर्ण नाडि पृच्छकतणो,
जय शून्ये रे वामे पर रिपुनो गिणो;
पंडितनो रे नाम लेय निज ले पछे,
तो सीझे रे कारिज विपरीते न छे;
सम वरण ठामे नाडि वामे थित पृच्छकनो जय कह्यो,
नवि नाड वेग विषम नामे शस्त्र सपातन लह्यो;
रोगार्त्त भूतगृहीत सर्प्पे दष्टने ताजो करे,
शशि नाडि चारी ग्रहे मंत्री तो उभयनो दुप हरे. हां० उ० ९

वाम नाडी रे वायु पूर्ण जल जो वसे,
इहितनी रे सिद्धि तुरत तिहां उपदिसे;
जब जीवत रे घन तन लाभादिक बहु,
हैनिष्फल रे पवननष्टथी सुष सहु;
सुष सहु जाणे पवनसे ती पुष्प पाडे आपणो,
ते पछी जाणे मरण जीवन सुष दुषनो चांपणो;
अति शीघ्र लाभे वरुण भूमे बहु दिने कारज सरे,
ए तुच्छ लाभे पवन अग्ने सिद्धता पिण त्तय करे. हां० सि० १०
शीघ्र आवे रे जलतत्त्वे थिर भूमिमे,
वीय ठामे रे कहे पवन मृत अगानिमे;
वह्नितत्त्वे रे घोर युद्ध भय अनलमे,
भूमितत्त्वे रे युद्धे जय वली वरुणमे;
वरुणमे द्वीपे अधिक दीपे सिंधु थाये रिपुथकी,
कै शत्रुदलनो भंग थाये वधे जगमे जस वकि;
भूतत्त्वमांहे थाये वर्षा वरुणतत्त्वे अति सही,
झड थाय घन विणु पवनतत्त्वे वह्नितत्त्वे घन नही. ११
भूजलमे रे सस्य बहूत अति हे सही,
नभ पवने रे मध्य अग्निमे हे नहीं;
गुरु राजा रे बंध वृद्ध मिलवा भणी,
मने हित रे सिद्धि चाहे नारीतणी;
जो चाह नारी तणी तुजने साधि पूरण नाडिका,
रिपुयुद्ध चोरी दुष्टकाजे सहो रिक्ता नाडिका;
रिपु घाउसेती पूर्ण नाडी गात्ररत्ता जे करे,
तसु अंग बीजे शस्त्र न लगे सर्व रिपुमे जय वरे. १२
भूजलमे रे गर्भप्रश्नथी सुत लहे,
अग्नि पवने रे पुत्री गर्भने नभ दहे;

अतनाडी रे पृच्छक जो बेसे सही,
सुत पामे रे रिक्ता नाडि पुत्री कही;
कही पुत्री सुषुम्ण नाडी षंड उतपति जाणवी,
सुष्मणानाडे युगलसंक्रम गर्भहाणि वषाणवी,
श्रवण आंषी अरु नासिका मुष ढांकी अंगुष्टादिथि,
जे वामवेला चले दक्षिण अंग पीडा तो कथी. हां० अंग० १३

शशि थानकरे वाम अग्रिम नाडी कही,
रवि थानकरे दक्षिण पूठ नाडी लही;
संक्रमतो रे पवन जीव पंडित कहे,
विक्रमतो रे तेह पवन निरजीव हे;
निरजीव पवने जगत मृतसम जीव पवने जीवतो,
सुष दुख लाभालाभ फल विण कहो इण विधि दीपतो;
जे नाडि छोडे तिका रिक्ता पूर्ण संक्रम अवसरे,
पूर्णांग पग जे धरे आगे सर्व कारिज तसु सरे. हां० सर्व० १४

विष घूम्या रे जीवे चंद्र नाडी करी,
रवि नाडे रे तेह मरे विष विस्तरी;
आकर्षण रे पूरक थिर कूंभक धरे.
उथान रे रेचकथी योगी करे;
ए करे योगी सरव कारिज पवनने परभावथी,
जे करे नाडीतणो शोधन योग मारग दावथी;
अति चपल ए छे पवन दुरगम वसत भवने वाममे,
ते लषी जोगी तजी आलस करत नाडि अभ्यासमे. हां क० १५

दूहा.

हिव नाडीरी शुद्धिता, कहुं ग्रंथ अनुसार;
जसु अभ्यासे जाणिये, पवनतणो परकार. १

कला सहित इक बिंदुयुत, रेफाक्रांत हकार;
नाभिकमलमे चिंतवे, अर्हं अक्षर सार. २
शोझै तेण हकारथी, रविमग भासुरकांति;
अग्निझालयुत अग्निकण, मालाथी आक्रांत. ३
चपल बीजसम धूमथी, रुंध्या दसदिसी षंड;
इंद्र चंद्रने साध्य नहि, नभचारि ग्रह मंड. ४
शरदचंद्रसम धवलप्रभ, मंद मंद नभचार;
झरे सुधा शिशिनाडिमे, पूरे पवन उदार. ५
नाभिकमलमे आणिने, धरे पवन थिर देश;
करे चित्तथी पवनने, निक्रम अने प्रवेश. ६
नाभिकमल हृदय कुज, आणे धारे वायु;
नाडिशुद्धि करे तिहां, दहन मंडले आयु, ७
रवि नाडिथी निसरे, चंद्रे पेसे वायु;
इम नाडीशुद्धि कीजतां, सहु इच्छा क्षय जाय. ८

ढाल—योग कियो राजा भरतरी. एहनी. ॥

साढा च्यार घडी रहे, वायु एके नाडि;
पीछे बीजी नाडिमे, जाये ते छांडि छांडि. धरो० १
एकवीस सहस उच्छ्वास ए, षटसत तिहां भेली;
स्वस्थ मनुज अहोरात्रिमे, आनपान सुमेलि. धारो० २
पवन चालि जाण्या विना, न लहे निज तत्त्व;
नाडिवेध हिव चिंतवुं, चित चित्र निमित्त. धारो० ३
करि निश्चल आलस तजी, ले श्वास सुगंध;
जाती फल बहुलादिने, भूवेधनि संधि. धारो० ४
कुंकुम अगर कपूरसम, छे वरूणनो वेध;
थूल वेध ओलष करो, सूषम संवेध. धारो० ५

भ्रमर शलभ मृग पक्षिमे, नर तूरंग शरीर;
धातु पत्त पाषाणमे, भूवस तरु नीर. धारो० ६
इक मंडलथी निसरे, पेसे वीयठाम;
स्वेछाये चाले सदा, ए उत्तम धाम. धारो० ७
नवरपुरमे संचरे, ए कौतक काज;
प्राणायाम प्रसादथी, सीझे शिवकाज. धारो० ८
काम दर्प मन जय करे, सहु रोग विलाय;
तन थिरता जोगी करे, वायुतणे सहाय. धारो० ९
जन्म लक्ष कृत पापनो, क्षय करे तुरत्त;
दोय घडीमे मुनिवरु, प्राणायामनीसत्त. धारो० १०
एक विंदु जलनो पीये, मास दोयने छेह;
तो पिण प्राणायाम सम, नवि थाये तेह. धारो० ११
प्राणायामनी साधना, निश्चयथी हेय;
देवचंद्र जिनधर्ममे, ए नवि आदेय. धारो० १२

दूहा.

इंद्रिय सुषथी पाचने, शांत करे निज चित्त;
प्रत्याहार कह्यो तिके, इच्छातणी निवृत्ति. १
निस्संगी मन संवरी, कच्छ जेम दमि अक्ष,
शमधारी मुनि संवरी, धरे ध्यान सुप्रत्यक्ष. २
इंद्रिय दमि मन वश करी, धरे भाल धरी ध्यान;
तजि उपाधि मन स्वच्छ करि, चित्त धरे सम थान. ३
प्राणायाम अभ्यासथी, मन नवि पामे थान;
निज समाधि थिर साधिवा, प्रत्याहार प्रधान. ४
शांत संवेगी रागविणु, मुनि नवि साधे वायु;
आतमज्ञानी मुनि तजे, प्राणायाम उपायु. ५

वायु चालणरा दुक्ख करे, मन पामे बहु षेद;
अधिक सिद्ध पिणका नहीं, तिण न कह्या बहु भेद. ६
इंद्रि दमि सम आदरी, धर्म ध्यान थिर चित्त;
नेत्र श्रवण युग भाल मूष, नाभि हृदय सुष चित्त. ७
नासा अग्रसु लालभ्रु, इत्यादिक तन अंक;
तिहां इक थानक मन करी, धरे ध्यान उमंग. ८
शांति चित्त मुनिने वधे, ज्ञान ध्यान निज चित्त;
प्रत्याहार सुधारणा, दाषी ध्यान निमित्त. ९

ढाल-रंगीले आतम एहनी.

गुण अनंतधर जीवने, वंचे भवमे कर्म; धरो निज भावना० १
राग द्वेष मुषहिवहळ्या, शत्रु हणुं धरि ध्यान. धरो०
आत्म लषो निजज्ञानसुं, बाली कर्म अज्ञान. धरो० २
कर्म हणु तिम ध्यानसुं, जिम न पडुं भवमांहे; धरो०
भव ज्वर अज्ञाने नड्या, नवि दिठो शिव राह. धरो० ३
परमातम जगगुरु ठग्यो, नीरस विषयने संग; धरो०
सर्वज्ञ आतम नवि लष्यो, भ्रम अज्ञाने रंग. धरो० ४
आत्मरूप पिछाणवा, ज्ञानदृष्टि धरि देषि; धरो०
पंच ध्येय अरु आतमा, ज्ञान गुणे इक लेषि. धरो० ५
नित्य छतो छे सहज तो, केवल गुण मुजमांहि; धरो०
मोह दाह तिहां पिडवे, ज्ञान अमृत जां नाहि. धरो० ६
कर्म उदे चउगत भमूं, निश्चय शुद्धस्वरूप; धरो०
कर्म न भंजू केम हूं, अनंत चतुष्टय भूप. धरो० ७
तजि आशा निज शक्तिस्युं, हुं आनंदस्वभाव; धरो०
छेद अज्ञान अनादिरो, आज लह्यो निज दाव; धरो० ८

इम जाणी धीरज धरी, रागादिक मल धोय; धरो०
ध्यावे आतमशक्तिसुं, धर्म शुक्ल ध्यान दोय. धरो० ९
ध्येयादेय स्ववेद ध्यान, सत् चित् आनंद थान; धरो०
कर्महिन सर्वज्ञता, निरमल शिव भगवान. धरो० १०
जड चेतन जीवादि ए, ध्येय स्वभाव पिछाणि; धरो०
ध्यान लहो मन थिर करो, ज्ञान दयामे आणि धरो० ११
परमेसर परमातमा ध्येय अरूपी देव, धरो०
द्रव्यार्थिक नय सासतो, इक परमातम सेव. धरो० १२
दर्शन ज्ञान आनंदमय, अक्षर विगत विकार; धरो०
इंद्रिय विणु निकल गुणी, शांत जाण शिवधार. धरो० १३
भवद्रुम क्षय कर शुद्ध छे, ज्ञानथकी पर भिन्न; धरो०
जगत सकल आदर्शज्यु, जीर्ण ज्योतिमय धन्न. धरो० १४
शुद्ध अष्टगुणयुक्त छे, निर्मल अमय अमेय; धरो०
परत्यागी अक्षय गुणी, ज्ञानीने आदेय. धरो० १५
अणुथी पण जे सूक्ष्म छे, नभथी पण जे वृद्ध; धरो०
जगत पूज्य निर्भय सदा, परमातम सिध सिद्ध. धरो० १६
ध्याने कर्म सहु गले, जग गुरु अमर अनूप; धरो०
जिण जाणे सहु जाणीये, जाय अविद्या धूप. धरो० १७
तत्त्वदृष्टि निज थिर हुवे, जाणे निज अनुभूति; धरो०
ध्येय ज्ञेय आदेय ते, अंतर आतम भूत. धरो० १८
वचन अगोचर भ्रम विना, चींतवि सहज अनंत; धरो०
जास ज्ञानमे अंशज्युं, भासे द्रव्य अनत. धरो० १९
आत्मज्ञानथी आत्मने, जाण्यां थाये सिद्धि; धरो०
मुनि तन्मय गुण तिहां लहे, तजि ग्रहिक ग्राहि लद्धि. धरो० २०
लीन थई ग्रहे एकता, ध्याता ध्यान सुधेय; धरो०
परमातम अंतरातमा, एक अभिन्न अमेय. धरो० २१

कटमै कटकर्त्ता तणी, दीसे दुविधा रीत; धरो०
पिण ध्यान ध्येय ए आतमा, एथी न बीय परतीत. धरो० २२
भवमे भम्यो अज्ञानथी, विण लाधा निज नाण; धरो०
परमज्योति जग दुषहरू, तेहिज अनुभव जाणि. धरो० २३
भावे इम निज भावना, ध्यान बीज गुण धाम; धरो०
देवचंद्र सुषसागरू, ध्यान अमोलक पामि. धरो० २४

दूहा.

निज सरूप जाण्या विना, न कहे आतमरूप;
तिम आतमगुण वर्णवुं, परमपुरुष सुख भूप. १
आत्मज्ञान विन जीव सब, कर्म थकी मुंझाय;
आपा परनी भिन्नताता, सुपने पण नवि थाय. २
तिण मुनि आतम थिर करे, सर्व कल्पना मुक्त;
त्रिविधरूप ते उपदिशे, द्रव्यार्थिक गुण युक्त. ३
बहिरातम इक भेद सुणी, अंतर आतम बीय;
ध्यान ध्येय एक तत्त्व धर, परमातम प्रभुतीय. ४
आतमबुद्धि तन उपरा, पररागी गुणहीन;
सो बहिरातम जाणज्यो, मोह नींद लय लीन. ५
देहराग प्रेमराग तजि, निज आतम पहिचाण;
परमातम सम भावीवो, अंतर आतम जाण. ६
निर्विकल्प निर्लेप शिव, केवलज्ञान सुभान;
शुद्ध बुद्ध आदेय शुचि, परमातम सुषखाणि. ७
देह राग परभाव तजी, मूकि बहिर्मुख भाव;
निर्विकल्प मुनिभावयुत, सुद्धातम गुण ध्याव. ८

ढाल–म्हारे भीभलीया नयणाणो पाणी लागणो पाणी रूजी एहनी.

चेतन पुदगल भिन्न करो निज भावथी, ज्ञानीजी०
ते मुरख माने एक विवेक अभावथी; ज्ञानी०
इंद्रिय देहसुं नेह तजो पररूपसुं, ज्ञानी०
सुर नर तिरियग योनि सहू दूपकूप ए ज्ञानी० १

अज्ञानी नवि जाणे आतम अमूरती, ज्ञानी०
परमातमसम जाणे जन तन सूरती ज्ञानी०
आतमबुद्धे शून्य अचेतन दर्वने ज्ञानी० २

अज्ञानी धन पुत्र कलत्रने आपणा, ज्ञानी०
भिन्न अचेतन द्रव्यभणी निज जाणतो, ज्ञानी०
तसु लाभादिक कारण निजने ठाणतो. ज्ञानी० ३

देहभणी निज बुद्धि अज्ञान अनादिनो, ज्ञानी०
देह जीव गिण एक हठी ते वादिनो; ज्ञानी०
देहमित्र निज बुद्धि ठगे सहू लोक ए. ज्ञानी० ४

इंद्रिय विषय दमो रमो निज ज्ञानस्युं, ज्ञानी०
तजि बहिरातमराग लगो निज ध्यानस्युं, ज्ञानी०
जे तुज दीसे एह सहू पर हेय छे, ज्ञानी०
ज्ञान सरूप अनुपसुं आतमध्येय छे. ज्ञानी० ५

ज्ञानी ज्ञेय ज एह अछे निज आतमा, ज्ञानी०
तेह अज्ञानी अंध कीयो परतीतमा; ज्ञानी०
निज रागी परत्यागी ज्ञानी निर्मलो; ज्ञानी०
रज्जु नागभ्रम जेम देहममता दलो. ज्ञानी० ६

नागतणो भ्रम भागे सांकलि तिण कही, ज्ञानी०
देहबुद्धिना त्यागथी चेतना लहलही; ज्ञानी०

एक दोय बहु वचन रचनमे प्रभु नही, ज्ञानी०
ज्ञानगम्य पर ज्योति त्रिगुणमें ए सहि. ज्ञानी० ७
जिणसुरे जगसुप्त जगे जागे सहू: ज्ञानी०
निज संवेदन गम्य ए आतम गुण ग्रहू; ज्ञानी०
रागद्वेषनो नाश हवे जिण ओलषे, ज्ञानी०
नवी को मुज रिपु मीत न कोई मने लषे. ज्ञानी० ८
पूरवकृत भव रीत सुपन सम तेहने, ज्ञानी०
शत्रु मित्र सम रीत गृहे ते निज मने; ज्ञानी०
शुद्ध सीपर ज्योति सनातन जाणहूं, ज्ञानी०
अक्षय आतम देषो आतम नाणहूं. ज्ञानी० ९
ताजि बहिरातम राग भजो निज आतमा, ज्ञानी०
निरमल जाणो नित्य जिसो परमातमा; ज्ञानी०
पर संयोगे बंध, मोक्ष पर त्यागथी; ज्ञानी०
बंध मोक्षगुणी वालो मन रागथी. ज्ञानी० १०
ज्ञानी रहे अबंध कि ज्ञान प्रसादथी, ज्ञानी०
मिथ्यात्वि बंधाय अज्ञान प्रसादथी; ज्ञानी०
नव मे दीठा दुःख सहू परसंगथी, ज्ञानी०
न पडे भवमे कोय के ज्ञान उमंगथी. ज्ञानी० ११
ए आतम निज पास अछे ज्ञानी लहे, ज्ञानी०
बाहिर देषे तेह निकामे दुष हे; ज्ञानी०
सोहं सोहं आपरम्याथी जेहु रे, ज्ञानी०
ते परमेष्ठीरूप तत्त्व निज गुणवरे. ज्ञानी० १२
सिद्धांतमे पण एह एह परमीश छे, ज्ञानी०
देषणहारो एह एह जगदीश छे; ज्ञानी०
इंद्रियथी मनषर धरो निज ज्ञानमे, ज्ञानी०
निज जाण्या विना दुष अछे तप दानमे. ज्ञानी० १३

ज्ञानसुधारस शुक्त पेद दुष नवि सहे, ज्ञानी०
राग द्वेष मलहीन वीन निज गुण लहे; ज्ञानी०
निर्विकल्प मन थापी करो निज काजने, ज्ञानी०
चंचल चित्त न देषे ते निजराजने. ज्ञानी० १४
राग द्वेष अज्ञान हरो चण एकमे, ज्ञानी०
ज्ञानानंद सरूप स्व आत्मविवेकमे; ज्ञानी०
निज अज्ञानेज कर्म, जाय निज ज्ञानथी, ज्ञानी०
कर्म न तूटे तपथी ते गले ध्यानथी. ज्ञानी० १५
देह बुद्धिथी बंध मोच आतमगुणे, ज्ञानी०
तीन लिंग विणु नित्य शुद्ध आतमथुणे; ज्ञानी०
योगीने निज ज्ञानथकी परभ्रम पले. ज्ञानी० १६
अंतर तजे वहेलेह तत्त्वविण मूढथी, ज्ञानी०
शुद्धातम सुप्रत्यच्च गहे अतिशुद्धथी; ज्ञानी०
करे काज सहु अन्य तोहि मन ज्ञानमे; ज्ञानी०
भवसुख जाणे मूढ अने मुनि ध्यानमे. ज्ञानी० १७
आत्मज्ञान गुणज्योति सदा आनंद छे, ज्ञानी०
कर्म उदय वश दुःख तोहि सुख कंद छे; ज्ञानी०
दुखविको विण सुख कह्यो मुनिरायने, ज्ञानी०
ज्ञानविना अति दुःख कह्यो सुररायने. ज्ञानी० १८
ज्ञेय ध्येय निज देव जाणि संशय हरी, ज्ञानी०
देवचंद्र सुप्रीति धरो मन थिर करी. ज्ञानी० १९

दूहा

विषयथकी सुष ना हवे, तोही धरे जड प्रीति;
अति दाध्या पिण मूढथी, न लषे आतम रीति. १

परराग़ीकुं ज्ञान नहि, तिण उपदेश म देहि;
अज्ञानी जडलीन छे, ज्ञानी ज्ञानने गेह. २
जो गति निज ज्ञानसुं, जोड्यां भवत्तय जोय;
पट जिम तन जूने हुये, आतम जीर्ण न होय. ३
थीर जोगि ते जग सथिर, जाणी ते शिवजंति;
ज्ञान ज्योति जाण्या विना, बंध छेद न करंति. ४
पुद्गलगण तनु आतमसम, अज्ञानी मानंति;
आतमज्ञान विना मुगति, अस्थिरता दुपयंति. ५
स्थूल सूक्ष्म गुरु जीर्ण लघु, दीर्घ दुषी तन रंग;
ध्यान काज ज्ञानी तजे, योग चपल मनसंग. ६
गाम नगर तुज ठाम नहि, तुज थानक निज नाण;
देह राग भव राग तजि, भिन्न आतमतनु जाण. ७
चेतनथी तनु परि गिण्यां, न पलाये मुनि नाण;
जग काकर सम ते गिणे, शुद्ध ज्ञान सहिनाण. ८
तन पर दाख्यां शिव नहीं, जां नवी भेद प्रतीत;
सुपने पिण तनुराग तजि, धरी आतमगुण प्रीत. ९

ढाल—राग धन्याश्री.

भविक जन आतम ध्यान धरो, तजी संकल्प शुभाशुभ बंधक;
निज परमारथ वरो. भविक० १ प्रथम बाह्य संयम छे साधक;
निश्चय आतम परो; जन्म लिंग तन एह अनादि आतमसुं ऊपरो.
भविक० २
अंध पंगु जिम जोग अथिर छे, त्युं तन थै जीउरो,
ज्ञानि आतमज्ञानसे दीन प्रति, तन थै भिन्न खरो. भविक० ३
मदमातो निज पर नवि बूझे, त्युंजी उपज करो;
आपापर जाण्या तिनु पटणो, निफल गिण सगरो. भविक० ४

वाटि दीपसगति ह्वै दीपक, त्युं शिव यह जीउरो;
परमातम सम ध्यान आराध्यां, ह्वै चेतन उजरो. भविक० ५
वचन अगोचर यह परमातम, थिर प्रतीत अपरो;
विना यतन अनुपमपददायक, आतम गुण समरो. भविक० ६
सुपन भ्रांति जाग्यां ज्युं भांजे, त्युं पर भ्रांति हरो;
चिदानंद अविनाश अरूपी, निर्विकल्प आचरो. भविक० ७
शास्त्रजाण पिण देहनो रागी हे वधक नवुरो;
पराधीन सुख स्वाद तजो यह, ज्ञानस्वाद पकरो. भविक० ८
सुप मूल चिद तत्त्व भणो मुनि, निज शरणो अनुसरो;
चढि स्वभाव जिहां जवि भ्रमको, नीरविलधि उतरो. भविक०९
त्रिभुवन जाण तत्त्व निरुपाधि, ज्ञानानंद भर्यो;
परममुनि निज आतम ज्ञानी, निज ज्ञानने उचरो. भविक० १०
धर्म शुक्ल ध्यान ध्येय भेद यह, भाष्यो अर्थ परो;
पाठक राजसार मतिसागर, ज्ञायक निज गुणरो. भविक० ११
आतमज्ञान धरम गुणवाचक, जय इंद्री मदरो;
राजहंस जिम भेद जानघर, चेतन अर तनरो भविक० १२
अक्षर त्रय गुणसुं करि थिरता, ध्यान ज देवचंद्ररो;
आतमज्ञान आनंदसिंधूर चढि, अचय सुख वरो. भविक० १३

इति श्रीज्ञानार्णवे योगप्रदीपाधिकारे ढालभाषाबंधे पंडित-देवचंद्रमुनिविरचिते ध्यानध्येयप्ररूपणाभिधानो नाम चतुर्थः खंडः संपूर्णः ॥

दूहा.

पंच महाव्रत जिम मिन्या, शिव सुखना दातार,
जिम पंचम पंड सामन्या, अचय सुख आधार. १

मोह अज्ञान कदाग्रह तत्त्वदृष्टि न रहाय;
शुद्धातम जाणया विना, निज तत्त्व थिर नवि जाय. २
मन थीरथी साक्षात हे, शुद्धातम स्वभाव;
लक्ष थूल सालंबथी, सूक्ष्म निरालंब भाव. ३
आज्ञापाय विपाक वलि, लोकस्थिति आकार;
इसे विवेके भावना, धर्म ध्यान चौधार. ४

ढाल--वे वे मुनिवर विहरण पांगुर्या रे ए देशी.

ध्यान धरमरो धिरज धरि धरो रे, आज्ञाविजय सुनाम रे;
वसु तत्त्व सिद्धांते जे कह्या रे, ध्यावे माने थिर परिणाम रे. ध्यान १
दोय प्रमाण निक्षेपा चारथी रे, सातनये युत ए स्याद्वाद रे;
हेतु युकति करि ते हणवो नही रे, जिनवर न वदे कूडावाद रे.
ध्यान० २
स्वाभावि स्वाधीन त्रिकालमे रे, ए छे गुणपर्याय अनंत रे;
ज्ञानी सिद्ध द्रव्यने मानीतू रे, व्यय उत्पादने ध्रुगुणवंत रे.
ध्यान० ३
श्रुत ज्ञान निरमल जिनवर दाषीयोरे, शब्द अर्थ यूं नित्यचितार रे;
शुद्धाशुद्ध द्रव्य जाणे सहु रे, तेह शक्ति जिन श्रुतनी सार रे.
ध्यान० ४
पूर्वापर अविरोधी शुद्ध ए रे, निकलंक अनादि गंभीर रे;
सर्व जाण नय उपनय युक्त छे रे, गहन अरथ मुनि वंद्य
सुधीर रे. ध्यान० ५
रत्नकर जिमे शोभे अतिघणो रे, पद अधिकार रंगथी युक्त रे;
कुमति सर्प्प मिथ्यातम गालवा रे, ग्रीष्म रविसम जेहनी
सक्त रे. ध्यान० ६

त्रिभुवन पूज्य शुद्धि कर आत्मनोरे,जसु अनुयोगादिक चउ भेदरे;
द्रव्यार्थिक पर्यायनये करि रे, सादि अनादि अछे गत
छेद रे. ध्यान० ७
नय निक्षेप करी कसवटी समो रे, कुमति भुधर भंजणहार रे;
उत्तम संत मुनिने ध्येय छे रे, आगम जलधि अनंत
अपार रे. ध्यान० ८
त्रिभुवन पूज्य जन्म भय क्षय करे रे,स्यात्पद लक्षण युत ध्येय रे;
उत्पादादिक युत षट् द्रव्य छे रे, जिन भाष्यो श्रुत ए
शिव देय रे. ध्यान० ९
विबुधानंदन विद्यागेह छे रे, शिव प्रस्थान पडह सम एह रे;
तत्त्व कथक अज्ञान विना सहु रे, उत्तम भणज्यो जे श्रुत
एह रे. ध्यान० १०
कुमतिभंजक रंजक मुनितणो रे, मोह गमावी शिव दातार रे;
साधु बंध क्षय सुप द्ये जीको रे, एम जिनागम आदरि
सार रे. ध्यान० ११
आज्ञायुत निज आतम भावज्यो रे, केवल ज्ञानादिक गुण खाणि रे;
सरदहिज्यो निश्चय श्रद्धा करी रे, इम ए देवचंद्रनी वाणि रे.
ध्यान० १२

दूहा.

कर्म नाश करवा भणी, धरे मुनिसर ध्यान;
तेह अपाय विचय कह्यो, वाधारे निज ज्ञान १
स्यादवाद पाम्या विना, भवदुप लह्या अनंत;
जिनवच पोत समो कह्यो भवसायर बूडंत. २
महा व्यसन दवदान ए, भव वन भमतां आज,
आत्मज्ञान पामो तुम्हे, सीलण शिव सुख काज. ३

ढाल—लाज गमावे रे लालची. एहनी ॥

ध्यानतणी विधि सांभलो, अपाय विचय जसु नाम;
जन्मअंध कूपे पड्या, काढि द्ये शिव ठाम. ध्यानत० १

मिथ्या अविरत जोगथी, बांध्या कर्मकलंक;
ते मुज जूठे रे किणपरे, काज करूं य निसंक. ध्यानत० २

कर्मवशे किम दुःख सहु, हुं छुं सिद्धस्वरूप;
कर्मसैन्यथी वेगलो, हुं छुं निजगुण भूप. ध्यानत० ३

ध्यानि कर्म दही करी, करु हुवे आतम शुद्धि;
उपादेय निज आतमा, त्रिगुण सहित निज सिद्धि. ध्यानत० ४

आस्रवबंधनो हेतु को, कोण निर्जरा हेतु;
मुज आतमगुण निरमलो, मुक्तिरुप सुखकेतु; ध्यानत० ५

मोक्ष लहुं किण हेतुथी, सहज सुखी निरबाध;
सर्व जाण जगपूज्य ए, शुद्धातम आराध. ध्यानत० ६

सर्व जाणे एक आतमा, इण पूंठे सहु देव;
इक निज आतम जाणतां, वस्तु जाणीये सर्व. ध्यानत० ७

ज्यांलगे पर संयोग छे, त्यांलगे निज गुण हाण;
इम शुद्धातम भावतां, पामीजे शिव ठाण. ध्यानत० ८

कर्मविनाशन हेतु ए, अक्षय सिद्ध उपाय;
कर्मथकी पर जाणज्यो, शुद्धातम सुखदाय. ध्यानत० ९

तजिं प्रमाद नित्य ध्याईए, कर्म विनाशन ध्यान;
अक्षर रत्न गुणयुत लहे, देवचंद्र शुभ स्थान. ध्यानत० १०

दूहा.

कर्म चित्रता चिंतवन, तेहिज विचयविपाक;
चेतन सुख दुःख अति सहे, कर्म उदय फलपाक. १

वस्त्राशन स्त्री नृत्य सुख, मित्र पुत्र मेलाप;
सुरभि गंध बहु भोग रस, वनक्रीडादिक पाप. २
गृह गज हरि चाकर पुरि, अशन पान बहु सुख;
कर्म उदयथी ते लहे, थये पुण्य सनमुख. ३
काम भोग चेत्रादि वर, पाम्या माने सुख;
तेहिज पापतणे उदये, थाये दायक दुःख. ४
वध बंधन अरि योगथी, इष्टवियोगे शोग,
जन्म मरण भव दुप बहु, थाये पापने योग. ५
सहज रौद्र भयकार जे, चेत्रादिक दुःख थान;
बहुत शीत तप घन रहित, ते रीत शुद्ध करि मान. ६
शीत ताप वर्षा प्रबल, इति भीति दुप हेतु;
कर्म भिन्न निज भावयुत, प्रसन्न भाव सुप केतु. ७

ढाल--सुगुण सोभागी हो साहिब मारा एहनी,

कर्म विपाक विचारो इण परे, आतम भिन्न असार सोभागी;
मूल भेद आठ कर्मतणा कह्या, जन्म मरण भ्रमकार सोभागी० कर्म १
ज्ञानावर्ण कर्म अज्ञानमय, घाती पंच प्रकार; सो०
बीजो घाति नवविध कर्म छे, दर्शन ढाकणहार. सो० कर्म० २
मधुयुत असिधारा सम वेदनी, दुविध वेदनीय जाण. सो०
सुरनर उत्तम मद सुख अचना, साता उदय प्रमाण सो० कर्म० ३
आधि व्याधिथी मुंजे प्राणीयो, तेह असाता रे कर्म; सो०
दर्शन मोह हणे समकित भणी, तीन भेद बहु भर्म. सो० कर्म० ४
चारित्र मोह उदे निज भावथी, न लहे चारित्र शुद्ध; सो०
लाधो पण पाडे परमादथी, भेद पचीस विरुद्ध. सो० कर्म० ५

सुर नर तिर्यग नरक चोभेदथी, आयुकर्म हडि जेम; सो०
तीन पुण्यमे एक छे पापमे, सुख दुःख दायक तेम. सो०कर्म०६
नाम करमथी नाम बहु लहे, गति ज्ञात्यादिक भेद; सो०
भेद त्रयाणुं चितारे समो, गोत्र करम दो भेद. सो० कर्म० ७
दानादिक पण शक्ति भणी हणे, तेह करम अंतराय; सो०
उत्तरभेद कह्या अडतालसो, चेतनने दुखदाय. सो० कर्म० ८
संवरवंत मुनितप आगल, चढतागुणनी श्रेणि; सो०
कर्मबंधने मंद करे वली, क्षयकारी पिण तेण. कर्मवि० ९
लहि समवाय पपावे कर्मने, तुर्य ध्यान संयोग; सो०
ज्ञानि निर्मल कर्म पपावीने, दीपे शुद्ध निरोग. सो० कर्म० १०
कर्मचित्रता इण परि चिंतवे, जन्म मरण दुपकार; सो०
चर थिर जोग तिभावजगत्रता, चेतनथी परधार. सो कर्म० ११
कर्मउदयकरी बहुदुष जन लहे, जन्म मरण भयहानि; सो०
कर्मभिन्न इम ध्यानी ध्यावज्यो, देवचंद्रनो ध्यान सो० कर्म०१२

दूहा.

नभ अनंत जिनवर कह्यो, तामे लोकाकाश;
असंखप्रदेशी त्रिगुणमय, छहूं द्रव्यका वास. १
उर्द्ध मध्य अध भागथी, त्रिभुवन कहीये लोक;
त्रिविध वायु आधार छे, सर्व द्रव्यनो सोक. २
प्रथम घनोदधि बीय छे, घनमारुत तनवात;
लोक धर्यो निजशक्तिथी, अति ऊंचो जसु गात. ३
लोकांते घनोदधि छे, तसु तलि घन तनुवात;
अधोलोक सगराजनो, उर्द्धलोक रज्जु सात. ४
वेत्रसभा आकार अध, मध्ये झालरि जेम;
ऊरधलोक मृदंगसम, त्रिविध लोक थिर एम. ५

अधोलोक सग नरक छे, नारक पंट वसंत,
दुख क्लेश प्राणी लहे, शीततृपादि अनंत. ६
शीतवात तो सी कहूं मेरु गले जम्बू ताप;
हिंसादिक पण कारणे, नरक लहे दुखव्याप. ७
मिथ्या अविरति रौद्रता, कृष्णलेश अति क्रोध;
छेदन भेदन ताडना, लहे नरकने सोघ. ८
वंध अधोमुख अगनितल, ज्वालन पिलन यंत्र;
लोहकंटके चालवण, छेदन भेद अपत्र. ९
दुस्सह रोगप्रकोपथी, पडे उपडे तेह;
अतिदुपीया सरणो तके, पूरवकृत फल एह. १०
मित्रवंध न तिहां तिहा, निरदय पापी सर्व;
हुंडाकृति कुध्यानगत, रौद्रभुप विणु दर्व. ११
वहे पूति दुरगध अति, करे रौद्र अति कूप,
रौद्रध्यान अति चिंतवे, निज थिरताथी चूप. १२
विभंगतणे वल जाणिने. निजकृत कर्म स्वभाव;
अज्ञानी अति दुख धरे, ज्ञाता उपशमभाव. १३

ढाल—सूरजसाम्हा हो पोलि एहनी ॥

साधे मोक्ष मुनि सहो ज्ञानी, सवेगे नरभव लही; म्हारा लाल०
तजि विषया सारी महो ज्ञानी,कर्म हणे तप आदरी हो० म्हा०१
साधे इच्छित तेह, ज्ञानी० कष्ट पड्यां धर्म नवि तजे; म्हा० क०
तेहिज ज्ञाननो गेह, हो० तजि प्रमाद निजगुण भजे. म्हा०क०२
हितवत्सल गुणवंत हो० तिण मुनिने बहु दुख दीयां; म्हा० क०
तिणनु दुख पडंत हो० दुख सहित प्राणी निज कीयां म्हा०क०३
मे अज्ञानमे लाग हो० चर थिर जीव हण्या घणा; म्हा० क०
परधन परस्त्री राग हो० व्यसन पड्यो पर रागथी. म्हा० क० ४

रौद्र ध्यान वश एह हो० दुख लह्या में नरकना; म्हा० क०
इंद्रिय सुखने नेह हो० लोक ठग्या में कूडथी. म्हा० क० ५
जे ते मार्या पूठ हो० ते तूझ मारे न्यायथी; म्हा० क०
रीस म करि इहां जूठ हो० एतो वारी आपणी. म्हा० क० ६
निज हित नरभवमांहि हो० ने कीया तो हिव स्या हवे; म्हा०क०
भंझी धर्मवो राह हो० नीच करम बांध्या घणा. म्हा० क० ७
ग्राम नगर दे दाह हो० निरबल जीव हण्या घणा; म्हा० क०
ते मुझ दुप दे साही हो० कर्म छोडे वचनी परे. म्हा० क० ८
स्युं करुं जावुं केथ हो० असरण कर्मवशे पड्यो: म्हा० क०
हुं दुःख देपुं एथ हो० अणुदिठाविण पारकाए. म्हा० क० ९
पुत्र मित्र स्त्री दास हो० के किहां मे तिणकारणे: म्हा० क०
कीधा पाप विकास हो० पिण दुख देपु एकलो. म्हा० क० १०
कर्म शुभाशुभ एह हो० एथी मुझ वीय को नही; म्हा० क०
नरकथी काढे जेह हो० तेह धरम नवि आदर्यो. म्हा० क० ११
निज गुण विना सहाय हो० कोय नही त्रयकालमे;म्हा०क०
लव सुख काज उपाय हो० कीधां दुख अनंत ए. म्हा० क० १२
जैनधरम जगमांहि हो० दुख हरे सुखने करे; म्हा० क०
रंज्या परिग्रह ग्राह हो० मरणतणा भय नवि लषे. म्हा० क०१३
सागर वसे असंख्य हो० मांसाहारी नरकमे; म्हा० क०
भाजे करडि अंप हो० छेदन भेदन अति करे. म्हा० क० १४
पूरव वेर चीतार हो० लडे विडे सहु नारकी; म्हा० क०
रौद्र कृत्य भयंकार हो० क्षेत्र दोषथी नारकी. म्हा० क० १५
कूंभी अगनिने पाक हो० न मरे वैक्रियतनबले; म्हा० क०
परम अधर्मिकार हो० शतशत षंड करे तिहां. म्हा० क० १६
तातो तरूयो पान हो० फल ते मदिरापानना. म्हा० क
मांस भषे तसु आन हो० फल ते मांसाहारना. म्हा० क० १७

परस्त्रीसगे तस हो० लोहपूतली तिहां मिलै; म्हा० क०
दुप गृह नरक ए सप्त हो० निमिषमात्र पण सुख नही म्हा०क०१८
विसरयो पूरव वेर हो० चितरावे सुर पापना; म्हा० क०
भूप नरकमे ढेर हो० दुप तसु को न कही सके. म्हा० क० १९
अन्न पान तिलमात हो० न मले भूप तृपा पमे; म्हा क०
तिलसम पंड्यो गात हो० कर्मवसे वलि तसु मिले. म्हा० क०२०
देह थान भज ध्यान हो० नरके सहू दुखकार छे; म्हा० क०
अधोलोकनो थान हो० वरण्यो मध्य कहूं हिवे. म्हा० क० २१
जंबू लवण आदि हो० अंत स्वयंभूरमण छे; म्हा० क०
मंख्या तीन अनादि हो० द्विगुण प्रविस्तार छे; म्हा० क० २२
सार्द्धद्वीप चेत्र हो० मानुषोत्तर गिरथी उरइ, म्हा० क०
तीस युगलीया चेत्र हो० कर्मभूमि पनरह गिणो. म्हा० क० २३
आरिज म्लेछ दुभेद हो० जन्म मरण दुःख नरगते; म्हा० क०
पराधीन दुःख पेद हो० तिरिगतिमे दुःख बहुत छे. म्हा० क० २४
कर्मवसे उदेवासि एह हो० सवि पमे प्राणी लहे; म्हा० क०
अचरत्रय गुणगेह हो० देवचंद्र सुखसागरू. म्हा० क० २५

दूहा.

ज्योतिषीय तिण उपरा, चर थीर सुखी अपार;
रविचंद्रादि असंख पिण, तिरछे लोक मझार १
सोहमथी अच्युत लगे, उपराउपर कल्प;
ग्रैवेयक विजयादि पीण, बहुत सुपी दुःख स्वल्प. २
नहि विभाग दिनरातनो, रतन तेज दीपंत;
षड ऋतु सुख सम काल छे, नहि अति शीत तपंत. ३
ईत भीत उत्पात अहि, सिंह चोरभय नांहि;
पचरंग मणि तेजसु, दीपे भुवन उच्छाह. ४

रत्नवावडी रत्नसर, तिहां खेले सुरनारि;
कल्पवृक्ष चिंतामणि, सार वस्तु आधारि. ५
ध्वज छत्रांक विमानमे, स्त्रीसंगे सुखवंत;
क्रीडा गिरक वर्हीरमे, कवसें जेम न खंत. ६
मेहके चंपक मालती, तमे भृंगनी कोडि;
लीलावन मंदारुतले, खेले स्त्रीनी जोडि. ७
गावे देवी गीत गुण, वाये वीण मृदंग;
गीते सुरने रीझवे, अमरी मनने रंग. ८
सुखसंपद् सुरधामनी, उपमा कही न जाय;
पंचरंग मणी चैत्यगृह, वन वापि तिहां थाय. ९
गढ परिष्या तोरण सहित, पोलि चैत्यमणीरूप;
सामानिक तनुरक्षकर, सग अनीक इक भूप. १०
थिरशृंगार सुपीन कुच, शशीमुख सुरनी नारि;
कामकेलि गुणआगरु, लक्ष्मीने अनुहारि. ११
सुंदर गुण अणिमादियुत, भूषणयुत मतिधीर,
पंडित विनय सुजाण नर, जसु अम्लान शरीर. १२

ढाल—थारा म्होला उपर मेह झरूखे दामनी. हो लाल
झरूखे दामनी. एहनी ॥

नही य दुषी को रोग को तिहां दीन छे हो लाल, नको०
थिर शोभा छे जास वास सुखमे अछे हो लाल; वास०
सभ्य समानिक मंत्रलोक तनुपाल छे हो लाल, लोक०
गायन नट्टया एम विविध सुरमाल छे. विवि० १
देवलोक सुखओक सदा सुखमे रमे हो लाल, सदा०
शीलरूप गुणवंत सहज मनमे गमे हो लाल; सह०

नितानित नवनव रंग गीत जयजय सदा हो लाल, गीत०
सातधातु गुण देहरूप सुखकर मुदा हो लाल. रूप० २
अतिसुकुमाल शरीर चतुर पंडितवरू हो लाल, चतु०
दोप क्लेश भयहीन शांत जिम निशकरू हो लाल शांत० ३
महारिद्धि गुणवंत जिहा सुर अति घणा हो लाल, जिहा०
बेठा सभा मोझार इद्र सरीपा वण्या हो लाल; इंद्र०
पुण्यउदे लहे सुख सदा मन ऊमहे हो, सदा०
देवलोकनी भूमि सदा सुप गुण गहे हो लाल.सदा० ४
सेवे अमर असप कंपम नहीं हो लाल, कंप०
माने सहु जग आण ताहरी ए सहु हो लाल; ताह०
पुण्य उदयनो सुख कहे कवि केटलो हो लाल, कवि०
सुरपति आगे आय मंत्रि कहे एतलो हो लाल. मंत्रि० ५
सुरपति चेतन ताम काम ए पुण्यना हो लाल, काम०
पूरव कृत तप शील चरण वर दानना हो लाल; चरण०
पिण शिवसाधक माग एण गमे नहीं हो लाल, एण०
एह विनासी सुख दुःख गिणजे सही हो लाल. दुप० ६
तिहा समकिती देव तत्त्व निज थिर करे हो लाल, तत्त्व०
सारे जिनवरसेव जैन महिमा करे हो लाल, जैन०
कल्पवृक्ष दसभाति देय मनकामना हो लाल, देव० ७
इंद्रिय सुखकु तेथि नहि कांई मना हो लाल. नहि को०
देवलोक द्विकताइ अछे देवांगना हो लाल, अछे दे०
अच्युत लगी सुर नारि जाय छे दुख विना हो लाल, दुप० ८
उपर नहीं विकार इंद्रिय पिण को नही रे लाल, इंद्रि०
ग्रेवेका लगि चालि मिथ्यात्वीनी कही हो लाल; मिथ्या०
पंचानुत्तर देव सहित समकित अछे हो लाल, सहि०
सर्वारथसिद्ध देव एक भवभय छे हो लाल. एक० ९

चौगतिमे सुख दुख लह्यो में बहु परे हो लाल, लह्यो०
पिणमे रच्या मुझ गरज न विकासे रे हो लाल; गरज०
ध्यावो निश्चल देव सरव जगजाण हो लाल, सरव०
भमियो चवदह राज तोहि शिवठाण ए हो लाल. तोहि० १०
तिन भुवननो जाण त्रिविध गुण रवि ए हो लाल त्रिविध.
चोथो धर्म सुध्यान लोकाथिति ध्यावे ए हो लाल; लोक०
परमातम आदेय सदा थें आदरो हो लाल. सदा०
अक्षर त्रयगुणयुक्त देवमुनि मन धरो हो लाल. देव० ११

दुहा.

हिव पिंडस्थ पदस्थ वलि, रूपी रूपातीत;
ओर ध्यानविधि च्यार ए, ध्यावो धरि प्रतीत. १
तिहां पिंडस्थध्यानथी, पिण धारणा अनूप;
पार्थिव आग्नेयी पवन, वरुण तत्त्व स्वरूप. २
मुनि तत तीन छे लोकसम, जलधि जेम आकाश;
जंबूद्वीप सहस्रदल, मेरुसिंघासन भास. ३
तिहां बेठो यो सवर, ध्यावे आतमध्यान;
मन भमे ने वशी करे, सो पार्थिवगुण मान. ४
थिर अभ्यासे नाभिमे, कमल सोल दल सार;
पत्रे स्वरगण चिंतवे, अर्हं मध्य उदार. ५
तिण अर्हंथी अग्निगण, हृदय अष्टदल देह;
ऊंचे मुखे अडकर्मने, दहे बल ध्यान तेह. ६
वह्नि बीज समकीतसहीत, मंडले अग्नित्रिकोण;
धूमरहित कलधौतयुति, दहे कर्म भगौण. ७
दही कर्म ले शांतता, तृण विणु अग्नि समान;
धरे शुद्ध निज धारणा, ए आग्नेयी मान. ८

ढाल—कूमरी बुलावे कूनडो एहनी ॥

ध्यान पिंडस्थ विचारीये, शुद्धातम गुणधामो रे;
आतमशक्तिस्वभाव ए, लोकालोकनी सामो रे. ध्यान० १
आतमशक्तिस्वभावथी, कर्मधूलि उडावे रे;
ते पिंडस्थ सुध्यानथी, वायुधारणा थावे रे. ध्यान० २
करुणा धारणा ध्यावता, मेघ रुप ते ध्यावेरे;
आतमध्यान सुनीरथी, कर्ममेलने नसावे रे. ध्यान० ३
सात धातु तन मल विना, केवलज्ञाननो नाथो रे;
ज्ञानादिकअतिशयधरू, परमातम सुखसाथो रे. ध्यान० ४
भिन्नकर्म्म निरूपाधिए, देहमाहि निज देवो रे;
ध्यान पिंडस्थ हृदि चिंतवे, परमातम नितमेवो रे. ध्यान० ५
उज्ज्वल निर्मल आतमा, जिनसम कर्मविहीनो रे;
धारक (गुण) अनंतनो, ध्यावे निजगुणलीनो रे ध्यान० ६
भय ग्रह राक्षस सिंहनो, रिपु विषधर गजराजो रे;
भय पूरवकृत कर्मनो, नासे ध्यानथी आजो रे. ध्यान० ७
देहमांहि निज आतमा, सिद्धसमो जे ध्यावे रे;
निज अक्षरत्रयगुण लही, देवचंद्रपद पावे रे. ध्यान० ८

दूहा.

उत्तम पद आलंबिने, धर पदस्थ मुनीश,
नित्य वरण माला स्मरे, श्रुतज्ञान गुण ईश. १
षोडश कमले स्मरे, षोडशे स्वरनी माल;
हृदय पदम चोवीस दल, वर्ण पचीस विचाल. २
वदनकमल अठ दल तिहां, चिंते अक्षर आठ;
हरे रोग मन चिंतने, दहे कर्मवड काठ. ३

वर्ण मंत्र पद नाम ए, अर्हं अक्षर सार;
सरव देवनत सूर्यसम, हरे सर्व अंधकार. ४
कनक गतमल सिद्धसम, ध्यावे मुनि निजदेव;
ब्रह्मा हरि हर बुद्धके, जड बहु सारे सेव. ५
जैन ध्यावे जिन भणी, निश्चय आतमराम;
शिव साधिक भय क्षय करे, गुण अनंतनो धाम. ६
सर्व देहमे संचरे, थिर धारे सहु देह;
वधे सुधि कुंभक धर्या, अक्षय सुखदे एह. ७
पावे निश्चल मनथकी, अर्हं उत्तम ध्यान;
बाह्य रीत तजि दृष्टि धरि, निश्चल नासाथान; ८
धुरि अकार हं अंतपद, रेफ बिंदु शिवरूप;
ज्ञान ज्योति गुण आगलो, निकर्मा सुख भूप. ९
अन्य सरवथी षांचिने मन राषे एक ठाम;
साध्य सिद्धि एकत्व कर, साधे शिव सुख काम. १०
परम मंत्र परमातमा, साध्यां सिद्ध लहंत;
अंतर बाहिर भेदथी, ते दाषीजे मंत. ११

ढाल—आदर जीव क्षमा गुण आदर. एहनी ॥

ध्यावो ध्यान पदस्थ विचारी, अंतरंग बहूरूपी जी;
अंतरंग शिव सुखनो साधक,बाह्य पुण्य सुख भूप जी. ध्यावो० १
कामताप दुःख व्याप गमावे, ह्रीं अक्षर एहजी;
ज्ञानरूप निरमल अविनासी, ओं ए गुण गेहजी. ध्यावो० २

उक्तं च – अरिहंता असरीरा, आयरिया उवज्झाया; तहा मुणिणो, पढमरकरनिप्पन्नो; ओंकारो परमिट्ठी. १

हृदय कमल धर्यो कर्म नसावे, श्वेत वरण स्वर युक्त जी;
रक्त वर्णथी जगमे चोभे, पीते रीपुथी मुक्ति जी; ध्यावो० ३

श्याम रंग ध्याया जग मोहे, बाह्यरूप ओंकार जी;
जाणे को मुनि इणरो महिमा, बीजो न लहे पार जी. ध्यावो०४
पण परमेष्ठी ज्ञानादि त्रय, दिशे विदिशे अड पत्र जी;
विचे ओंकार रूप शुद्धातम, दुविधे न साधे त्रस जी. ध्यावो० ५
भवकिलेस सहू नासे इणथी, शुद्ध करे निज देव जी;
कृपानिधान इण सम नहीं बीजो, परम मंत्र ए सेव जी. ध्यावो० ६
इणथीने सुर थाये तिरजंच, ध्यान पुण्यनो गेह जी;
परमसिद्धिदायक ए ओंपद, सोल वरणयुत एह जी. ध्यावो० ७
दोसत ध्याने चोथफल, छठ पुण्ये इण ध्यान जी;
अर्हंत सिद्ध षड अक्षर ध्यायां, सिद्धसमो ए मान जी. ध्यावो० ८
ओंमूल पाच ह्रींपद, असिआउसा सारजी;
मन थिर ध्याया निस्संगे, जन्म मरण भय वार जी. ध्यावो० ९
चोमंगलयुत ए मंगलकर, जप्यां वरण दे सिद्ध जीः
ओं ह्रीं श्रीं अर्हंपद, नमः युत दे अतिरिद्ध जी. ध्यावो० १०
नमोसिद्धाणं कर्म विणासे, वधारे समभाव जी;

मंत्रपदानि यथा—

ओंनमो अर्हते केवलिने परमयोगिने अनंतशुद्धिपरिणाम स्फुरदुरुशुक्लध्यानाग्निनिर्दग्धकर्मबीजाय प्राप्तानंतचतुष्टयाय सौम्याय शाताय मंगलाय वरदाय अष्टादशदोपरहिताय स्वाहा इति मंत्रः ॥

इत्यादिकगुणयुतशिवसाधक, निज परमातम भाव जी. ध्यावो० ११
ओंनमो अरिहंताणं पद, ध्यावो करि थीर चित जी;
मायाबीज ध्यान ओंयुत, आपे इच्छित चित्त जी. ध्यावो १२
धूमशिखा प्रगटे छमासे, वरस वह्निनी झालजी;
इण ध्याने चूका विणु पामे, उपशमभाव विशाल जी. ध्यावो०१३

शिवविद्या ए कामतापहर, अमृतमय सुखधाम जी;
झ्रौं ए मंत्र नासाथाने निश्चल ध्यावो, उज्ज्वलगुण अभिरामजी
ओं अर्हं ध्यावो० १४
प्रथम ह्रीं प्रणव दोय, आगे विची ए अक्षर सार जी,
सःइक्ष्वीहं अंते दोय प्रणवह्रीं सेती, विद्या ए जगसारजी.
ध्यावो० १५
सिद्धचक्र ए मंत्रशिरोमणि, सहु विद्यानो सार जी;
अरिहंताणं पापक्षयंकरं, सिद्धाणं सिद्धकार जी. ध्यावो० १६
आचारिज निज गुणने चरचे, व्याधि हरे उपाध्याय जी;
साधुसुखंकर निजगुण साधे, चोचुलकपद धार जी. ध्यावो० १७
इत्यादिक उत्तमपद ध्यावे, बाह्यालंबनरूप जी;
मैत्रीभाव धर्या सहु उपर, निजगुण ग्रहो अनूप जी. ध्यावो० १८
वितराग मुनि नित प्रणिध्यानि परमसंसर्ग विहीन जी;
स्यादवाद श्रुतसार लहीने, लेवे त्रिगुण नगीन जी. ध्यावो० १९
बाह्यभावथी मगनभाव तजि, निज शुद्धातम ध्यावे जी;
अक्षरत्रय गुण लही अमोलक, देवचंद्र सुख पावे जी. ध्यावो०२०

दुहा.

हिव रूपस्थ तणी कथा, सुणो भविक चित लाय;
सर्वजाण अर्हत प्रभु, सो परमेसर ध्याय. १
जगहित थीर मंदिरसमो, ज्ञानादिक गुणगेह;
सप्तधातुविण संवरी, शिवलखमीसु नेह. २
जसु चरित्र अचिंत्य छे, जगबांधव जगजाण;
विषय कषायादिक दमी, भवदव नीरस माण. ३
देवादिक को नवि कहे, जेहनी ज्ञानविभूति;
भंजे सहु मिथ्यातगिर, स्यादवादनी रीति. ४

गुणनिधि ज्ञानी सर्वगत, परमातमपद धार;
ए ज्ञानी निज आतमा, परमातमसम सार. ५
दोष अढारे आ वर्ज्यो, जनम मरण भय व्याप्त;
ए आतम निज ज्ञानसु, ध्यावो निज सम आप्त. ६
परशासन सहु छोडीने, धारो सम्यक्त्व ज्ञानः
गुण धर गुण धर ज्ञानयुत, ते पण आतम ध्यान. ७
जसु ज्ञान आदर्शमें, छए दर्व भासंत,
लोकालोक प्रकाशकर, ध्रुवस्वभाव गुणवंत. ८
जसु ज्ञानरविज्योतिथी, भासे कुनय पद्योत;
सदा अगोचर सर्वनत, धरे अखंडित ज्योत. ९

ढाल—वाह वाह वणायो विंझणो एहनी ॥

ध्यान धरो निज धर्मनो, निज अक्षय सुखनो कार रे लाल;
जसु फरसे शुचि थाये धरा, शिवमारग दाखणहार रे लाल. ध्या० १
जितो रवि भामडले, ए देव अनाथा नाथ रे लाल;
पडतां दुःख समुद्रमें, एहिज साहिब दे हाथ रे लाल. ध्यान० २
थिति सिंहासन उपरे, धरि छत्रत्रयनी शोभ रे लाल;
सुरपति चामर विंझवे, क्षय कीधो रागने लोभ रे लाल; ध्यान० ३
पुष्पवृष्टि सुरदुंदुभि, वली वृक्षअशोके युक्त रे लाल;
अड प्रातिहारज करी, शोभे वीतराग विमुक्त रे लाल. ध्यान० ४
शुक्लध्यानी शांत छे, भवदुःख हरे गतराग रे लाल;
एक सनातन व्यक्त छे, गतकामी ए शिव मान रे लाल. ध्यान० ५
जगचक्षु जगनायक धणी, ए ज्योतिरूप आनंद रे लाल;
ईश चतुर्मुख कृष्ण ए, एहिज जिन आतम संत रे लाल. ध्यान० ६
सिद्ध सुमति जगज्येष्ट ए, मुनिवर अक्षर गुणधार रे लाल;
निरागी जिन सर्वज्ञ ए, ध्रुव अव्यय जीर्ण उदार रे लाल. ध्यान० ७

इम एकत्व प्रतीतसु, ध्यानी थावे शिवरूप रे लाल;
जिण जाण्यां मुनिवर शिव लहे, आराध्यो ते गुणभूप रे लाल. ध्या० ८
आतम अमृतस्वादथी, अक्षयपद लहे कर्म रे लाल;
भव्यकमल रविसारिषो निश्चल भजिज्यो तजी भर्म रे लाल. ध्यान० ९
आतम आतमज्ञानसु, निश्चयथी परमानंद रे लाल;
परमज्योति गुणरंजीयो, मुनि ध्यावे ध्रुगुणचंद रे लाल. ध्यान० १०
आतमज्ञान अमृतथकी, थिर मुनि नवि चूके ध्यान रे लाल;
ज्ञान राज त्रयभुवननो, ते सुख आगमनो थान रे लाल. ध्यान० ११
निरमल चित्त थया मुनि, निज आतमज्ञानथी पीन रे लाल;
निज व्यय गुणने अनुभवे, थाये तन्मय गुणलीन रे. ध्यान० १२
तन्मय आतमध्यानथी, मुनि पामे केवलज्ञान रे लाल;
परमातम शिवरूपी हवे, तिण धरी परमातमध्यान रे लाल. ध्या० १३
ए आतम निजशक्तिथी, पामे निरमल निज नाण रे लाल;
एह अज्ञानताभावमे, सहु लोक भमे विणु ठाण रे लाल. ध्यान० १४
थान पात्र भवजलाधिमे, लोकालोकनो जाण रे लाल;
ए अष्टानंतक गुण धरा, गतराग अमल गुणराण रे लाल. ध्यान० १५
ए ध्यावो कंद आनंद अमंदनो, अक्षरत्रय नाथ अनंत रे लाल;
इण परि निज रूप वि वारतां, हुवे देवचंद्र गुणवंत रे लाल. ध्यान० १६

दूहा.

वीतरागता ध्यावतां, मुनि थाये गतराग;
क्रूरकर्मने आदरे, राग तणे मल लाग. १
मंत्रादिक कुध्यान बहु, चेतनतणो विभाव;
भवदुःखकारण परिहरो, ग्रही निज थिरता भाव. २
निज समाधिगुण आदर्यां, एहिज त्रिभुवननाथ;
सौख्यहानि न कर कदे, आतमध्यान गुण साथ. ३

शुद्धमार्ग छूटां पछे, लहिवो दुकर एह,
अध्यातम सुख नासवे, उसद्ध्यान भवरेह. ४
परमानदक मार्ग तजि, झले कवण कुमाग;
आशादासकुध्यान धरि, पडे नरक धरि राग. ५
जीव कर्मनो भेद कर, ते गुण ध्येय अमेय,
छे इण साध्ये सिद्धि तिण परमातम आदेय. ६
आश ध्यानथी शिव नही, अछे ज्ञान गुण नाश;
मुनि मन चंचल नवि करे, धरे शांत रस पाश. ७
रूपस्थे थिर चित्त कर, ध्यावे रूपातीत;
शुद्ध ज्ञानमय मूर्ति विणु, ध्यावे आत्मविभूति. ८

ढाल—बूझि रे तू बूझि रे तू बूझि प्राणी एहनी ॥

ध्यान रूपातीत ध्यावो, अनुभवो निज रूप रे;
एहीज सरणो ध्यान इणरो, ए अत्तय गुणभूप रे. ध्यावो० १
आत्मज्ञानसु आत्म जोडी, ध्यानी ग्रहे सुभाय रे;
सामान्य करि सिद्धिसम सहू, व्यक्तिभेद लपाय रे. ध्यावो० २
नय प्रमाणे तत्त्व जाणे, तेह योगी शुद्ध रे,
चरम अग त्रिभाग ऊनो, शांत अच्युत सिद्ध रे. ध्यावो० ३
नीरोग निज गुणयोग निरमल, वसे जगतने सीस रे;
निकलक जगगुरु शुद्धज्ञानी, तसु आकृती किम दीस रे. ध्यावो० ४
अमूरतीक नभसमो चेतन, जसु असंप परदेश रे;
सर्व अनुपमगुणे लचित, नही मलनो लेश रे. ध्यावो० ५
आत्मगुण अभ्यासथी इम, थाय प्रभु प्रत्यक्ष रे,
सर्वदर्शी सिद्ध भवविणु, निरंजन जगचक्ष रे. ध्यावो० ६
नित्य चिन्मयमूर्त्ति मलविणु, एक परम अखेद रे;
ध्यान ध्याता ध्येय केरो, नही जीणमे भेद रे; ध्यावो० ७

रागादिक सहू रोग विणासे, जीपे इंद्री चित्त जी;
भवदुःख वारे ज्ञान सुधारे, मुक्तिस्त्रीनो मित्त जी. गुण गा० ११
मोह भंजी आतमगुण रंजी, निजपरभेदनो कार जी;
पोडी सम शिवमंदिर चढतां, धर्मध्यान तिण धार जी. गुण गा० १२

दूहा.

विगलेंद्री अक्रिय छे, ध्यान धारणा हीन;
ज्ञाता मुनि चउविधि धरे, शुक्लज्ञान गुणपीन. १
त्रय चोकडी कषायनी, क्षय अथवा उपशांत;
प्रथम दोय छद्मस्थने, केवलिने दोय अंत. २
पृथक्त्त्ववितर्क विचारयुत, प्रथम शुक्ल ते ध्यान;
एक वितर्क विचारविणु, बीय शुक्ल शिव थान. ३
शुद्ध नाम तीय शुक्लरो, सूक्ष्मक्रिय प्रतिपात;
शुद्ध साध्य शिवपद रमे, उछिनै क्रिय वात. ४
जेथ विचारे भिन्नता, ते सविचारवितर्क;
निश्चय इक निज आत्मा, जाण्या ए वितर्क. ५
व्यंजन व्यंजन अंतरे, अर्थांतरमे अर्थ;
योगादिक योगांतरे, संक्रम करण समर्थ. ६
शुद्ध द्रव्य गुणने स्मरे, ध्यानी विगतकषाय;
तीन योग दमि तीनी गुण, साधै पहिलै पाय. ७
प्रथम शुक्ल परभावथी, मुनिवर विगत अपाय;
केइ कर्मने उपशमे, किणहिरा क्षय जाय. ८
सात प्रकृतिने उपशमे, उपशम समकित थाय;
चउत्थे छे अष्टम थकी, उपशम श्रेणि चढाय. ९
सत्तायै तितली रही, उदय उपशम मोह;
केइ पडे भवने क्षये, के अद्धा क्षय लोह. १०

ढाल—सफल ससार अवतार ए हुं गिणु एहनी ॥

ध्यान निज आतमा सिद्धसम ध्याईयै,धोइये कर्ममल नित्य सुखपाईये;
दर्शन मोह त्रय चोकडी प्रथमनी. एह शम उपशम्यां ज्योति उपशम्मनी. १
पछै बीय चोकडीवले तिय चोकडी, उपशम्यां प्रकृति इम ता सु पनरह झडी;
पछै हास्यादि छ उपशमै तेहने, २
प्रथम द्वय वेदनै तेह मुनिवर वमै, पछै उदयागत वेद तसु उपशमै;
उपशमै नवमगुण संज्वलत्रिक तिहा, दशम गुण सुहम पिण लोभ उपशमै जिहां. ३
चढे इग्यारमे थान निज ज्ञानथी, थाय उपशांत जिन शुक्लनिज ध्यानथी, चरण अहक्खाय गुण पाय वसि कलनै, के मरे के पडे मोहने झालने. ४
जै मरै ते टिकै आय समकितगुणे. एग अवतार सव्वह्व सिद्धे थुणे;
जे पडे ते टिके सग छग पंचमे, कोय चउथे निये होइ पहिले रमे. ५
भाव पंचे हवे शुक्ल पहिलो स्मरे, च्यारस सहु कालने इकभवे दो करे;
सर्वश्रुतिजाण मुनि शांत मुनि संवरी, ध्यान ध्यावे तिको आतमगुण आदरी. ६
ध्यान सवितर्कथी जीप कषायने, ध्यान एकत्वसवितर्क गुण ध्यायने;
चित्त निर्मल करी ध्यान सुपृथक्त्वथी, ध्यान एकत्व ध्यावे निज सत्त्वथी. ७
शुक्ल बीय पाय ध्याने अछे चायकी, निरमल केवलज्ञाननी जसु वकी;
एक निज आतमा त्रिगुणनी एकता, ध्यान ध्यातातणी एकता थिरता. ८
द्रव्य पर्याय एकत्वथी जे धरै, निश्चल द्रव्य एकत्वथी जे धरे;
शुक्ल एकत्वता ध्यान अभ्यासथी, पामे केवल कर्मना नाशथी. ९

श्रेणि आरोहिने क्षपक कोई मुनि, करे अपूरवपणे गुण कर्मनी;
कोडि थिति घात करि महूरत थिति करे, छेदि अनंतरसभाग
अंतिम वरे. १०
चढे गुणश्रेणि असंख गुण नित वधे, कर्मदल विहचिने तास नासन धरे;
दशम गुण लोभनो क्षय करी बारमे, गुण चढी कर्म घाति भणी
ते वमे. ११
तेरमे थानके केवलज्ञानने, दरसण चरण वीरज्ज अनंतने;
पूर्व नवि लद्ध ते गुणचतुष्टय लही, देव सर्वज्ञ भगवान ते सुख मही. १२
जेहना नामथी कर्मबंधन गले, जन्ममरणादिविनु सिद्धसुखने मिले;
अगम अगोचर ज्ञानसंपद धरे, शेष अघाति चोकर्म हिव क्षय करे. १३
मास छ शेष आयुष थकां जे लहे, केवल ते समुदघात निश्चय वहे;
आयुथी वेदनीकर्म जो अधिक छे, तो समुदघातने आदरी
शिव गछे. १४
चवदह राजनो दंड पहिले समे, बीय कपाटमंथाण तीजे समे;
भुवन पूरे सहू आत्मपरदेशथी, समे चोथे जगव्यापक आपथी. १५
कर्मचतुष्कने सम करी केवली, ते वली संहर आत्मप्रदेशावली;
अनुक्रमे च्यारविधि चोसमे संहरे, अड समयमांहि त्रय समय नवि
आदरे. १६

दूहा.

कोय करे को नवि करे, समुद्घात विधि एह;
ज्ञानी धर्म वदे इशो, स्यादवाद गुणगेह. १
द्रव्य क्षेत्र काल भावथी, निजरूपे सहि अस्ति;
पर द्रव्यादिक देवता, नास्ति सहित सहु वस्तु. २
एकसमे दोउं अछे, अस्तिनास्ति तिण थाय;
अवक्तव्य चोथो तिणे, जे एकसमे न कहाय. ३

अनक्तव्ययुत भगत्रय, मेल्या भागा सात;
सूक्ष्मनिगोदथी सिद्ध लगि, सप्त भग थिर घात. ४
द्रव्यार्थिकपर्यायथी, अस्तिनास्तिता जाण;
नित्यानित्यादिकपणे, एक अनेक वखाण. ५
जिम घटमे घटअस्तिता, लकुटनास्तिता जाण;
अस्ति जीवमे चेतना, जडता नास्ति वखाण. ६
सिद्ध द्रव्यमे द्रव्य गुण, पर्याये करि होय,
अस्तिनास्तिता भंग सम, द्रव्य एकता जोय ७
द्रव्यार्थिक उत्सर्गमग, पर्याये अपवाद;
ए गुणधारक आतमा, सिद्धरूप स्याद्वाद ८

ढाल—जिनदेव तु जयकारी, एहनी
वीजी देशी—देहु देहु नणद हठीली ॥

निज जाणननय गुण जाणो. जिम आतमरूप पिछाणो रे; निज०
नैगमनय कारिज साही, संकल्पमात्रनो ग्राही रे. निज० १
कारिजनो अंश न साधे, सत्तागुणने आराधे रे; निज०
कोइक जन माणो लेवा, चल्यो वन काठ ग्रहेवा रे. निज० २
कोईक पूछे किहा जास्यो, प्रस्थलेवण तिण भास्यो रे, निज०
सुच्मनिगोदी जीव ते, दाख्यो सिद्ध सदीव रे. निज० ३
तेरम चवदम गुणधारी, ते जिन दाख्या संमारी रे; निज०
दाखी नैगमनय वाणी, सुणि संग्रहनय सहि नाणी रे. निज० ४
लचण असाधारण एको, अविरोधी परथी छेको रे; निज०
सहु गुणनो संग्रह थाये, विण दाख्ये गुण पर्याये रे. निज० ५
घट दाख्यो घट भावे घटजाति लिंग सहू आवे रे; निज०
तिम जीव चेतनगुण जाण्यो, ज्ञानादि त्रिगुण सहुठाणे रे. निज ६

द्रव्य कह्या छहकेरा, आवे गुण पर्याय भेरा रे; निज०
संग्रहनय लक्षण एह, विवहार सुणो गुणगेह रे. निज० ७
संग्रहनय दाख्यो भावे, ते विहचे करि विधि दावे रे; निज०
विहचे गुण पर्याय भेदा, ज्यां लगि अविभागी छेदा रे. निज० ८
घट दाख्ये घटनी जाति, आवें सहु न पडे भ्रांति रे; निज०
संग्रहनय भेद कहावे, चेतन जड भेद न पावे रे. निज० ९
पण जड एक चेतनवंत, संसारी सिद्ध महंतो रे; निज०
दरसण नाण चरित्र, इकना त्रय नाम पवित्रो रे. निज० १०
इत्यादिक विभजनकारि, नय व्यवहार विचारी रे;
ऋजुसूत्रे ऋजुमग साहे, गतागत काल न चाहे रे. निज० ११
विद्यमान कालनी साखे, संसारी अरु शिव आखे रे;
दाखी ऋजुसूत्रनी वाणी, हिव सांभल-शब्द कहाणी रे. निज० १२
लिंग संख्यादिक व्यभिचारो, न फरे जिहां अर्थ विचारो रे; निज०
घट अक्षर दोय भासे, तव नीर आधार प्रकाशे रे. निज० १३
जिहां चेतन शब्द कहावे, तिहां ज्ञानादिक गुण आवे रे; निज०
निशहु संज्ञाशब्दे लहीये, हिव समभिरूढनय कहीये रे. निज० १४
नाना शब्दे इक अर्थे, आरोहे नाही अनर्थे रे; निज०
इंद्र शक्र सुरईश, ए नाम भेदे कईसो रे. निज० १५
अथवा जे गुण छे जिणारा, तेहिज दाखे ते तिणारा रे; निज०
रूपी चेतन नभ नांही, नही जडता चेतनमांही रे. निज० १६
आतमना नाम अनेक, तो पिण भावार्थे एक रे; निज०
समभिरूढने गिणीये, हिवे एवंभूतनय भणीये रे. निज० १७
निज कारण पूरण साधे, यथार्थपणे आराधे रे; निज०
जल भरीयो नारीसीस, तेहीज घटरूप जगीस रे. निज० १८
अष्टानंतक धर बुधे, शिववासी कहीये सिद्धो रे; निज०
सिद्धगमन लो काल, तेम गिणे सिद्ध विचालो रे. निज० १९

एवंभूतक नय लीधो, पूरव पटनयसुं सिद्धो रे; निज०
इक इकना सत सत भेद, जाणे ज्ञानी गतखेदो रे. निज० २०
सूक्ष्म उत्तरोत्तर छे, तिमहीज कारण कारज छे रे; निज०
साते नय इक सद्दहीये, तदि सम्यग्ज्ञानी कहीये रे. निज० २१
इक इक भंगे सग नय छे, नयविण भंगा शिवमै ले रे; निज०
अक्षरत्रय गुण जब ध्यावे, तब देवचंद्रपद पावे रे. निज० २२

दूहा.

इक प्रत्यक्ष परोक्ष वन, छे प्रमाण द्वे रूप;
मति श्रुत ज्ञान परोक्ष, केवल परतिप भूप. १
मनःपर्य अरु अवधिगुण, देसत परतप जाण;
अनुमानादिक भेद सहु, जाणि परोक्ष प्रमाण. २
क्षीणमोह गुणठाणा लगि, सम्यग्ज्ञानी जीव;
छउमत्थ चोनाणी भणी, ज्ञान परोक्ष सदीव. ३
निक्षेपा चोविध कह्या, नाम थापना द्रव;
भावनिक्षेपो मुख्य छे, अशे साचो सर्व. ४
निर्गुण गुणयुत वस्तुनी, संज्ञा करवी जाय;
नामनिक्षेपो जेमको, नामे केवल थाय, ५
थापीजे ते थापना, जैनबिंब जिनरूप;
द्रव्यनिक्षेपो बाह्यरत, द्रव्यलिंगनो भूप. ६
गुण यथार्थधारी प्रवर, मुख्यादेय सदीव;
भावनिक्षेपो ते कह्या, जे चेतनलक्षण जीव. ७
नय प्रमाण निक्षेप विधि, नही सिद्धमे एह;
द्रव्यार्थिक पर्यायगुत, सिद्ध शुद्ध गुणगेह. ८

ढाल—वधावानी—अयोध्या हे राम पधारिया. एहनी ॥

परमातम निज घर आवीया, वलि पाम्या हे ज्ञानादिक गुणहेम;
कायजोग बादर दमी, वलि रुंधे हो सूक्ष्मवचने तेम. परमा० १
काययोग सूक्ष्म दमी, वलि रुंधे हो बादरमननी हो चालि;
सूक्ष्मकिरीया ध्यान जे, ते ध्यावे हो आत्मनिहालि. परमा० २
प्रकृति बहुतर कर्मनी, तिहां क्षय करि हो शैलेशीनो काज;
समुच्छिन्नक्रिय ध्यानने, ते ध्याये हो निरमल शिवसाज, परमा० ३
तेरे प्रकृति खपाविने, शिव पावे हो सहू कर्म खपाय;
निरमल शांत निरामयी, निरंजन हो शिव विगतअपाय. परमा० ४
काल वरण पण तेर हे, चवदम गुण हे तजी होय ते सिद्ध;
अष्टानंतक गुणधणी, जगनायक हो वलि परम विशुद्ध. परमा० ५
उरधगति वललोकने, शिखरे ते हो जई वसेय उल्लास;
धरम द्रव्य न अलोकमे, तिण कारण हो तेहनो तिहां वास. परमा० ६
लोकाकाश शिखरे रह्यो, ते देखे हो सहु लोक अलोक;
ते सुखनीय नवि को लखे, अतिइंद्री हो परमातम सुखओक. परमा० ७
इंद्रिय सुख त्रयकालना, जिण आगे हो अंश अनंत;
द्रव्यार्थिक पर्यायने, जाणे ते हो सहु द्रव्य महंत. परमा० ८
दोष अढारह विणु सदा, निरंजन हो नित्यानंदनो भूप;
परमेष्ठी परज्योति छे, ते जाणे हो त्रयलोकनो रूप. परमा० ९
निज स्वभाव गुण देखतो, ते देखे हो सचराचर विश्व;
गुण अनंत धारक प्रभु, निकलंकी हो नही दीरघ ह्रस्व. परमा० १०
पुरव जे नवि अनुभव्या, तेहिज सुख हो लहे सिद्ध जिनेश;
जाणे केवलज्ञानथी, वचने करि हो न कही शके लेश. परमा० ११
परतिख लोकशिरोमणि, निरद्वंद्वी हो निजसह जसवाद;
निरूपम थिर अविच्छेदतो, ते विलसे हो सुखसंग अनादि. परमा० १२

दरसण ज्ञान चारित्र वलि, सुख वीरज हो जसु प्रगट अनंत;
भवतमध्वंसा भानुज्युं,सिद्धातमे हो अतिमहिमा महंत.परमा० १३
ज्ञान सुधारससम सजे, अविकारी हो परमानदनो धाम;
देवचंद्र सुखसागरू, अचरत्रय हो गुण निजराम. परमा० १४

दूहा.

श्रीजिनशासन अगमगुण, शिवसुखनो दातार;
स्यादवाद परिणाम धरि, आतमदर्शक सार. १
मिथ्यातमभर भांजिवा, रविसम जिनमत एह,
सिद्ध शुद्ध परमात्मरस, धारक निजगुणगेह. २
सूक्ष्म निगोदि सिद्धिथिति, वहु द्रव्य पर्याय;
एकता व्ययउत्पादनी, इण विण बीय न कहाय. ३
नामजैन जन बहुत छे, तिणथी सिद्ध न काय;
सम्यग्ज्ञानी शुद्धमति, भावजैन शिवराय. ४
सिद्ध साधिवा समकिती, आराधे निज ध्यान;
तेह वखाण्यो जैनमे, अगम अपार प्रधान. ५
सोकिरे इक आखरे, में वरण्यो छे एह;
सुधासम झिलेज्यो तुरत, ग्रथ तणो गुण लेह. ६
पूरणध्यानतणी कथा, जाणे जिनवर देव;
निश्चय शिवसाधक गिणी, धरज्यो ते नितमेव. ७

ढाल—राग धन्याश्री इणपरि भाव भगत मन आणी. एहनी देशी ॥

ध्यानकथाने एह वखाणी, आतमरूप पिछाणी जी;
पूरवग्रनतणी मति नाणी,जिम दीठि तिम आणी जी.ध्यानक०१

पंडितजन मनसागर ठाणी, पूरणचंद्र समान जी;
सुभचंद्राचारिजनी वाणी, ज्ञानीजन मन भाणी जी. ध्यानक० २

भविक जीव हितकरणी धरणी, पूर्वाचारिज वरणी जी;
ग्रंथ ज्ञानार्णव मोहक तरणी, भवसमुद्र जलतरणी जी. ध्यानक० ३

संस्कृतवाणी पंडित जाणे, सरव जीव सुखदाणी जी;
ज्ञाताजनने हितकर जाणी, भाषारूप वखाणी जी. ध्यानक० ४

ढाल अठावन षड अधिकारू, शुद्धातमगुण धारू जी;
आखे अनुपम शिवसुखवारू, पंडितजन उरहारू जी. ध्यानक० ५

संवत लेश्या रसने वारो १७६६, ज्ञेय पदार्थ विचारो जी;
अनुपम परमातमपद धारो, माधवमास उदारो जी. ध्यानक० ६

कृष्णपक्ष तेरस रविवासर, ए अधिकार प्रकास्यो जी;
भणतां गुणतां सुणतां सुखकर, ज्ञानगेहमे आस्यो जी. ध्यानक० ७

खरतर आचारिज गच्छधारि, जिणचंदसूरि जयकारी जी;
तसु आदेश लही सुखकारी, श्रीमुलतानमझार जी. ध्यानक० ८

अध्यातम श्रद्धाना धारी, जिहां वसे नरनार जी;
परमिथ्यामतना परिहारि, स्वपरविवेचनकारी जी. ध्यानक० ९

निजगुणचरचा तिहांथी करतां मन अनुभवमे वरतां जी;
स्यादवाद निजगूण अनुसरतां, नित अधिको सुख धरतां जी. १०

भणसालि मिठूमल ज्ञाता, आतमसूरज ध्याता जी;
तसु आग्रह करी चउपई जोडी, सुणतां सुखनी कोडी जी. ध्यानक० ११

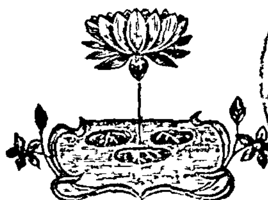
निजशुद्धातम ध्यानने ध्यावो, युगप्रधान गूण गावो जी;
श्री जिनचंद सूरनो दावो, महूरतमांहे पावो जी ध्यानक० १२

निजगुणपाठक पुण्यप्रधाना, सुमतिसागर गुणथाना जी;
आतम साधुरंग वखाना, वाचक शुभ ग्रंथाना जी. ध्यानक० १३

जयवंता पाठकगुणधारी, राजसार सुविचारी जी;
निर्मलज्ञान धरम संभारी, वाचक सहु हितकारी जी ध्यानक०१४
राजहंस सुगुरुसुपसाये, मुझ मन सुख नित पावे जी;
एह सुग्रंथ रच्यो शुभ भावे, भणतां अतिसुख पावे जी. १५
अक्षरत्रय गुणचाह सुसंगे, निजमनतणे उमगे जी,
मित्र कुम्भकरणने संगे, देवचंद्र मनरगे जी. ध्यानक० १६
ढालबंध ए ग्रंथसु कीधो, मानवभवफल लीधो जी;
आशीर्वाद एह मे दीधो, ज्ञान लहो सहु सिद्धो जी. ध्यानक० १७
ध्यानदीपिका एहवो नामो, अरथ अछे अभिरामो जी;
रविशशिलगि थिरता ए पामो, देवचद्र कहे आमो जी. ध्यानक०१८

इति श्रीज्ञानार्णवे ढालभाषाबंधे पंडितदेवचंद्रमुनिविरचिते शुक्लध्याने स्याद्वादाधिकारवर्णनो नाम षष्ठमो खंडः सपूर्णः ॥

इति श्रीध्यानदीपिकाचतुष्पदी समाप्तेयं ॥



॥ ॐ नमः सिद्धं श्रीगुरुभ्योनमः ॥

॥ अथद्रव्यप्रकाशभाषालिख्यते ॥

॥ दोहा ॥

अज अनादि अक्षयगुणी, नित्य चेतनावान् ।
प्रणमु परमानदमय, शिवसरूप भगवान् ॥१॥

॥ अथस्याद्वाद्भावको नमस्कार ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जाकै निरखत सते थिरतासु भाव धरै, वरे निज मोच्छ-पद हरे भवतावको, करमको बंध वारे मोहको विडारडारे सारे निज सकति वधारे ज्ञानदावको; एकानेकरूप जाने नित्यानित्यभाव ठानै आपा पर भेदकरी ग्रहे स्व सुभावको, अच्छर त्रिगुण इंद कर्मजालसो अफद नमतहे देवचंद स्यादवाद भावको. ॥ २ ॥

॥ अथअध्यात्ममाहात्म्यकथनम् ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

अध्यात्मभावको प्रभाव कहो कहा ताहि जाको महिमान ज्ञान जगतमें गायो हे, याहिको सभाव लहि आपा पर भेद गहि सम्यक्सुभावमहि बोधिबीज वायो हे; घातकी अघाती भेद करमको मूल छेदि वेद निजभावको परमभाव आयो हे, रिषभदेवाधिदेव अध्यातमभाव सेव अमल अखंड निज केवलको पायो हे. ॥ ३ ॥

॥ अथमोहविलासकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

लह्योते आरिजकुल गुरुको संजोग वलि पूरवके पुण्य-बल एसो जोग लह्यो हे, अध्यातमग्रंथसार सुणो कान धरी प्यार पीयो ताको रस निज तत्त्वशुद्ध ग्रह्यो हे; तौ भी यह तैरो जीव चाहत विशेस दीव भोगकी ममत्व तासौ माचि-राचि रह्यो हे, जगको जीवनहार एतो सब मोहभार मोहकी मरोरमें जगत लहलह्यो हे. ॥ ४ ॥

॥ अथप्रथमद्वार ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

प्रथम धरमद्रव्य, दूसरो अधर्मद्रव्य, तीसरो आकाश-द्रव्य, लोकालोकमान हे, चोथो कालद्रव्य एक पुद्गलद्रव्य रूपी निजनिजसत्तावंत अनंत अमान हे; पांचोह अचेतनज चेतनासरूप लीए छठो ज्ञानवान द्रव्य चेतन सुजान हे, स्यादवाद भाव लीये तीनुं अधिकार याके ग्रंथको आरंभ कीनो ग्रंथज्ञान भान हे. ॥ ५ ॥

॥ कविलघुताई ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

कोउ बाल मंदमति चित्तसो करे उकति नभके प्रदेश सब गनि देवो करसे, कोउ जन छीन तन पुरातन वयातीत वचन सो कहे एसो जुद्ध करो हरिसे; भूचर वामन सो सकति विनु कहे एसो लंबीकरि भूजा मेतो मेरुचूलापरसौ, तैसे में अलपबुद्धि महावृद्ध ग्रंथ मंड्यो पंडित हसेंगे निज ज्ञानके गहरसौ ॥ ६ ॥

॥ ग्रंथअधिकारीवर्णन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

परम धरम जानि करम मरम भानि नरम सभाव लहि धाम सौं उदासी है, आतमके विसरामी ज्ञानके अंतरजामी बाधासौं विरमि नित राधाधामवासी है; जालसौं जगतजाके माल सब मल्ल जैसो अमल अखंड निज ब्रह्मके विलासी है, एसे समकित धारी शुद्ध नयके विचारी वंदत हे देवचद ज्ञान के प्रकाशी है. ॥ ७ ॥

॥ अथ देशविरति वरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

अभक्ष्यके त्यागी हे परम रस यागी एसे परसौं निरागी जिनधर्मके विनीत हे, आतमिक सुख लहि समतासु धीर गहि विषय कषाय मोह रससौं वितीत हे; परम धीरज धरि आतमिक बल करि समकित थीर करि मिथ्यासौं अजीत हे, मिष्ट मित थोन भाषी सिद्धसुख अभिलाषी इकवीस गुण धारी श्रावक पुनीत है ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

साधक शिवको साधुमुनि, ताके भेद विचार,
जिनवर आचारिजप्रवर, उपाध्याय अनगार ॥ ९ ॥

॥ अर्हंतकीद्रव्यस्तवना ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जाकी देहदुति अति सोभित अनंत तेजु जाकी तन चतुराई नाही थांन ओर हे, ताही जिनराजके वचनको विलास मानो, शिवपुर राह शुद्ध अनुभव कोर है, जाके अतिसे

अमंद, वंदे देवदेवी वृंद जाकौ धर्मशासन परम सुख ठौर हे, जाहीके दरससेति सुखको परसौहत ऐसो जिन देवचंद विश्वसिर मौर है ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

दर्वितस्तवनाना थकी, करतां पुन्यप्रकाश,
आतमके गुन गावतां, केवलज्ञान विलास. ॥११॥

॥ अथ भावस्तवनं ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

लोकालोक भासक अनंतज्ञानदृष्टि जाकी वीरज अनंतसुख उपेरै कर्मकंदजू, चरण अनंतवर लोकालोक भावधर पुन्य पापसौ व्यतीत सुध सुख वृंदजू; वेद कौन भेद तीनो जोग कौन खेद तहां चेतन प्रकाश भयो कर्मसौ अफंदजू; ऐसे जिनराज निज ज्ञानमें बिराजमान अमल अखंड नित ध्यावे देवचंदजू. ॥ १२ ॥

॥ आचार्यस्तवनं ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पंचाचार पाले निज ब्रह्मको संभाले भाले-टाले परभाव सब शुद्धभाव भावे हे, परमधरम गहे समता सभाव वहे रहे न सराग चित्त नित्त लिव लावे हे; दुविध दयाके धार कीनो नारि परिहार परिग्रह दूर डारि नीरलोभी दावे हे; परव्याधि दूर टारे रागद्वेष मोह वारे ऐसे आचारज जिको देवचंद ध्यावे हे ॥ १३ ॥

॥ अथ उपाध्याय वरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

नित्य सो अनित्यरूप एकानेक कोसरूप सदसद्भाव

स्याद्वादको सहाय है, द्रव्य अभेद नय परजाय भेदनय सग-
नैगमादिनै असंख भेद पाय है; द्वादशांगी सूत्रसार पठावै
सपरिवार साधे शुद्ध कारज जे मोक्षके उपाय है, पंच महाव्रत
पाले दोष सबहिको टाले पूजनीक भव्यजीको ऐसे उपाध्याय
हे ॥ १४ ॥

॥ अथ साधु स्तुति ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आत्मारामके आरामी निज सुख वीसरामी पुन्यके अकामी पापदृष्टिसौ न काज हे, इंद्री सुखकी न आस रहे जगसौ उदास परिग्रह हीन भी अजाचि महाराज है, मिथ्या-स्यौ विमुख निज ज्ञान भावही के रुख मोक्ष सनमुख सिद्ध-सुखके समाज है, करम उदिकसेती करत हे क्रियाकर्म सत्ता-वीस गुणधारी ऐसे मुनिराज है ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

अविरत आदि अजोग लगी, यहे सिद्धको हेत,
जो गुन जहा पुरन हुवे, सोइ सिद्धको खेत. ॥ १६ ॥

॥ अथ मिथ्यादृष्टिहेय कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आपको न जाने परभावहिको आपा माने गहिको एकांत पक्ष माच्यो हे गहलमे भरममे परयो रहे पुन्यकर्महिको चहे वहे अहंबुद्धिभाव थंभ ज्युं महलमें, कुगतिसौ डरे सद्-गतिहिकी इच्छा करे करनीमे थीर होके चाहे मोक्ष दीलमे, स्यादवाद भावविनु एसो जो मिथ्यात्व भाव हेयरूपी कह्यो ज्ञानभावके अदलमे ॥ १७ ॥

॥ अथ ग्रंथारंभको नमस्कार ॥

॥ दोहा ॥

छहोभाव स्यादवादको, जामे अरथ विलास,
समकित कारण ग्रंथ यह, नामे द्रव्यप्रकाश. ॥ १८ ॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानरूप आदेयजो जानौ चेतन सोय,
जे अजीव फुनि हेय है, उन जाने क्या होय. ॥ १९ ॥

॥ अथ गुरुउत्तरकथनं ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

चेतन द्रव्य अनंत गुनाश्रित ध्येय आदेय स्वभाव धरै है, आप विसारि वसे भवबीचमे आप लखे शिवभाव वरे है,
इतै यह जीव पराइ कुसंगति चंचलभाव लिये विचरे है,
शिष्य संदेह निवारन कारन त्याग स्वरूप वखान करे है ॥२०॥

॥ दोहा ॥

त्यागे परको जानिके, गहै आपनो जान,
या ते दोनुं भावको, पंडित करे वखान. ॥ २१ ॥

॥ भेदज्ञान वरणन ॥

॥ दोहा ॥

भेदज्ञान शिवमा गहे, ज्ञानगेय इहिमांहि,
ध्यान ध्येयकी शुद्धता, भेदज्ञान विनुं नाही. ॥ २२ ॥

॥ भेदज्ञान उभयमूल नयवरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

सुध नय निहचे जथारथ सरूपी सत्य व्यवहार क्रिया नय

ताते विपरीत है, भेदज्ञान कारन न होय विवहारनय ज्ञानके निहास्ये याको त्याग वैही नित है, वस्तुको पीछाने निज शुद्धिको विशुद्ध गने शुद्ध जैसरूप एसो सम्यक्को मीत है, रतन त्रितयको सामी देवको अंतरजामी एसो शुद्धनयसो हमारी थीर प्रीत है ॥ २३ ॥

॥ पुन: चंद्रायणः ॥

बाज लिंग यह नय विवहारा, तत्त्वहीन किरिया आधारा; गहण जोग नय शुद्ध कहत विवेकमे, त्यागयोग विवहार ज्ञानकी ढेकमे ॥ २४ ॥

॥ शुद्धनय महिमा ॥

॥ दोहा ॥

परविमुक्त यह आतमा, चिनमय चंदसमान,
आदि मध्य नहि अंत तसु, द्योतक निहचे जान. ॥२५॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ दोहा ॥

कह्यो हेय व्यवहार नय, ज्ञानहीन पर गेह.
तो कहु कैसे वरणयो, जिनशासनमें एह. ॥ २६ ॥

॥ अथ गुरुउत्तरकथन ॥

॥ सोरठा ॥

जाणण आतम तत्त, निश्चे नय व्यवहार है,
तीर्थ प्रवृत्ति निमित्त तिण, दोनय जिनवर कह्या. ॥२७॥

॥ भेदज्ञान महातमकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जे ते केइ भव्य जीव लीन ज्ञानमे सदैव करमके बंधको उखारे एक पलमें, ताका मूले हेत एक भेदज्ञानहीकी ढेक

छेकते विवेकको विचार जो युं दीलमें; बंधको विलासमें मगन जेऊ आठुं जाम परे कर्मबंधमांहे रूले जगजालमें, तेतो भेद-ज्ञान विनुं निहचे पिछान्यो देव करमको गाढवाढे अज्ञानकी चालमें ॥ २८ ॥

॥ अथ ज्ञानविलास कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आपा पर भेद लीन आतमा स्वज्ञान पीन करमके पुंजको न आने निज देसमे, वसि निज गुनवास भासे आप रूप रास विराजे अखंडरूप आतम प्रदेशमे, अनादि अज्ञानके वढावासि गब्योहे ज्ञान भान जैसे दबि रह्यो घटाके प्रवेशमें, तैसे ए पुराणदेव तत्त्वको पीछाने नाही करमको करतार भयो परदे-शमे ॥ २९ ॥

॥ आतमाअकर्त्ताकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

सहज स्वभाव अथ गुरुके वचन सेती जान्यो निज तत्त्व तब जाग्यो जीवराय है, मेंतो परद्रव्य नाहि परद्रव्य मेरो नाही ऐसी बुद्ध भासि तब बंध कैसे थाय है; देखी जानी गहो तुम परम अनंत पद जाके पद आगे और पद न सुहाय है, प्रमाण निक्षेप नय जाके तेज आगे अस्त ऐसो निज देव शुद्ध मोक्षको उपाय है ॥ ३० ॥

॥ अथ आत्मा मुक्तरूपवरणन ॥

॥ दोहा ॥

बंधोदय दरिण प्रमुख, ए सब पुद्गल युक्त;
इनसो पर निज तेजमय, मैंहु कर्म विमुक्त. ॥ ३१ ॥

॥ आत्माथिरभावनाकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पवनके थंभसौं सुभाव थीर रहे जल तैसो ज्ञाता जीव होइ करम वियोगसौं, जे ते ज्ञान नाथके लगेहे परभाव साथ तेते परजानि दूर करे ज्ञानयोगसौं, स्वयंभू चेतनरूप अमल अनंत भूप ताको थिर ध्यान धरो त्यागना तो लोगसौं, आस्रव विनास होते संवरसरूप भयो ताको बंध राखे कौन करम अभोग सौ ॥ ३२ ॥

॥ दोहा ॥

वरणादिक परभाव ए, है सब तनके अंग;
नव नव रंग गहे फटिक, पडयुं उपाधिके संग. ॥३३॥

॥ आत्मफटिकदृष्टांतकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैसे मणिफटिक सभाव निरमलरूप तैसे थिर चेतन सदाइ निरमल है, तौभी राग दोष मोह अपनी उपाधिमेंती वस्यो है संसारमें अज्ञान सौ विकल है, तौ भी तजे नांहि कब अपनो स्वभाव द्रव्य, भूपन कहावे बहु कचन सकल है, तम पच राहू संग चंद्र राहु योग भयो चद्र कहा तम होइ नित्य जो विमल है ॥ ३४ ॥

॥ संसारीआत्माकथन ॥

॥ कवित ॥

पर परनति निज मानी शुद्ध परनति पर जानै, रागादिक संजोग आतमापर भावहि ठानै, रागी रोषी अहं एहु विकलप मल मिलीयो, करे करमको बंध फीरे जगमेहल फलीयो, जिम

भूत छाय जुत पुरुष निज भूतभावको इक कहे, त्यो जीव एह अज्ञानवसि त्रिविध कर्म बंधन लहे ॥ ३५ ॥

॥ दोहा ॥

चेतन परकें जोगसौ, परको करता होय,
या ते परको पर लखे, तजे अकर्ता सोय. ॥ ३६ ॥

॥ निजउपादेय परहेयकथन ॥

॥ दोहा ॥

चेतन विनुं जे ते दरव, ते अशुद्ध परहेय,
शुद्ध चेतना संजुगत, नित्य जीव आदेय. ॥ ३७ ॥
पंच द्रव्य जड हेय है, तौभी कहीये ज्ञेय;
तातैं वखानो प्रगट, स्याद्‌वाद नय लेय. ॥ ३८ ॥

॥ अथद्रव्यलक्षण ॥

॥ दोहा ॥

उपजे विनसे थिर रहे, यह सद्‌लक्षण जान;
सत्‌लक्षनकुं जो धरे, सोइ द्रव्य परवान. ॥ ३९ ॥

॥ द्रव्यचतुष्टयसरूप ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

धरम अधरम द्रव्य नभ काल च्यारो द्रव्य अरूपी अखंड जड भाव लीये वरते, तामे तिन अस्तिकाय काल विनु जिन कहे गहे गनधार तीन पद अनुसरतैं; च्यारो निज गुणवान लछन निधान नित निज निज काज साजे मिले कौन परते, च्यारो सौ वियुक्त नित अलिपत नभवत जीव तत्त सिद्ध होय भौ समुद्र तरते ॥ ४० ॥

॥ कालद्रव्य विनुं तीन द्रव्यभाव ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

धरम अधरम नभ तीनोको इकेक खंध अकिरीय निरंतर जैनमें वखाने है, धरम अधर्म दोनुं असंख्य प्रदेशवंत लोक असमान गान अचल कहाने हे, नभ अंस है अनंत लोकालोक मानवंत गुण परजायमंत अकृत पिछाने है, एते उनसम तोभी ज्ञान विनु ध्येय नाहि ध्येय एक जीव जो तो लोकालोक जानेहे ॥ ४१ ॥

॥ अथ द्रव्यलक्षण ॥

॥ दोहा ॥

जोतो पुद्गल जीवको, चलन सहाइ होय,
आप अचल अक्रियनित्त, धर्म द्रव्य है सोय. ॥ ४२ ॥

॥ अथ शिष्य प्रश्न ॥

॥ दोहा ॥

शिष्य कहे सद्गुरु सुनो, यह हम मनमें भर्म;
जगमै पुद्गल जीवको, कैसे प्रेरे धर्म. ॥ ४३ ॥

॥ गुरु उत्तर कथन ॥

॥ दोहा ॥

जैसे जलचर जीवकुं, चलनसहाई नीर;
तैसे पुद्गल जीवको, चलन सहाए धीर ॥ ४४ ॥

॥ अधर्म द्रव्य लखन ॥

॥ दोहा ॥

अधर्म द्रव्य जो थिर करे, जीव पुद्गलको माहि;
मध्य दीह ग्रीपम समे, ज्युं पथी तरुछांही. ॥ ४५ ॥

॥ आकाश द्रव्य लक्षण ॥

॥ दोहा ॥

जो देवें अवगाहना, सो आकाश कहेवाय,
गुणपरजयजुत जासमें, पांचौ द्रव्य समाय. ॥ ४६ ॥

॥ अथ सामान्य अष्ट गुण कथन ॥

॥ कवित ॥

पहिलो अस्ति सभाव वस्तु सभावता वीय, गिन तीजो द्रव्य सरूप गुन चतुर्थ परमेय, परमान पंचम अगुरू लघुत्व छठो सप्रदेश कहीजे, सत्तम चेतनहीन आठमो अरूप लहीजे, ए आठ द्रव्यके जाति गुन कदाकाल नाविभचरै, धर्मादि द्रव्यत्रय नीत्य ए आठौ गुन नित्यप्रत्ये धरै ॥ ४७ ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

गति हेतु कह्यो धर्म थित हेतु है अधर्म, अवगाह देन तौ अकाशहीकौ गुन है, तिनौ ए विशेष गुन कहै तिनौ द्रव्यहीके अब गुन तीनवीध कहिवेकौ मन है, द्रव्यकौ विशेष गुन यहै असाधारन, है साधारन गुन सतपदको कहन है, अचेतन रूप विनु तदुभय गुन कह्यो गुनपर्याय द्रव्य ज्ञान वो गहन है ॥ ४८ ॥

॥ द्रव्यपयार्य कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

गुनके विकारपर जाय कहे जिनराज स्वभाव विभावरूप ताके दोय भेद है, सुधपरजायतौ अगुरु लघुके विकार हानि वृद्धरूप जाके बारह विभेद है; अनंत असंख्य संख्य भाग हानि गुणहानि एतौ छहौ हानी छहौ वृद्धियुं अखेद है, एतौ परयाय छहौ द्रव्यको समान भाखे उरि परयाय गुन सुनन उमेद है ४९ ॥

॥ विभावपर्याय कथन ॥

॥ दोहा ॥

खंध थान गत भेद ले, कहनो वचन विलास;
परपर्याय धर्मादिके, ज्युं घटमठ आकाश. ॥ ५० ॥

॥ आकाशदुविध कथन ॥

॥ दोहा ॥

सो आकाश द्वैविध भयो, यद्यपि है एक खंध,
लोक अलोकनीके सवे, कहो लचन सबंध. ॥ ५१ ॥
ध्रुव उत्पाद न अंतजुत, जहां एक आकाश;
सादि अनंत अपार जड, सो अलोक परगास. ॥ ५२ ॥
जामें गुणपर्याय जूत, छहौ द्रव्यको वास,
आप असंख प्रदेशधर, सोहे लोकाकाश. ॥ ५३ ॥

॥ अथ शिष्य प्रश्न ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

धर्मलोकाकाश मान अधरमताकेमान असंख्य प्रदेशी एक जीव युं अनंत है, लोकालोक नभसम पुदगलअणु द्रव्य कालके सुछम समें वरतना अनंत है; आधार लोकाकाससो प्रदेश ते असंखराशि वास थान तुछ अरू आधेय महंत है, तावे कैसे ए समाय कहो सामी को उपाय द्रव्य रिती थिति कीतौ हम मन भ्रांति है ॥ ५४ ॥

॥ अथ गुरु उत्तर ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैसे एक जलठांउ वदमित जलभृव तामे तदुचित्त सरकरा

गलि जाय है, तामे लुणका करकौ गारिडारे वारडारे तामे सूइको समूह षोभे ठहराय है; जैसे एक ठाउमांहि पांचौ वस्तु ठहराहि जलादिक तहकीक प्रगट दीसाय है, तैसे लोकाकाश-मांहि पांचौ द्रव्यमाय जाहि अवगाह गुनकी सकति कहवाय है ॥ ५५ ॥

॥ अन्यमति प्रश्नोत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

अन्यमति पत्त गहे कहै यही बात सब धरम अधर्म द्रव्य जगमांही नाही है, परतत्त दीसे नाही अनुमान ज्ञान नाही उपमान शद्बमांही एतौ न कहाही है; ताते जैन कहे वै न अनुमान लेकै यथा इंद्री अगृहीत भाव जगमांहि होही है, गतिहेत सो उहेत दधिघृत घृतवत् तैसे ए अरूपी नित्य द्रव्य जगमांहि है. ॥ ५६ ॥

॥ अन्यमति प्रश्नोत्तर ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

कालवादीकी उकती गत थिती रीत इत कालके अधीन दीन हीन मत पीन है, बुध कहे कालगुन नव पुरातनपन दोय क्रिया एक द्रव्य कबहु न कीन है; पंचभूत वादी कहे गति वाउ भूत छति थितिरीत समसत्त प्रथवी अधीन हे, बुध कहे वायुभूमि जीव पुदगलदल वाकौ बल और याको बल तौ न बीन है ॥ ५७ ॥

॥ दोहा ॥

या ते पुद्गल जीवको, गति थिति हेत सदीव;
धर्म अधर्म दो द्रव्यजड, इनको ज्ञाता जीव. ॥ ५८ ॥

॥ कालद्रव्य लक्षण ॥

॥ दोहा ॥

वरतन परणति जासु नित, क्रिया परापर वान;
नव जीरनको हेतु जो, कालद्रव्य सो जान. ॥ ५९ ॥

॥ कालद्रव्य गुणपर्याय कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

अस्ति आदि अष्टगुन युत अप्रदेशी नित समेको मीलन विनुं नाहि अस्तिकाय है, वरतना हेतुए विशेष गुन कहे जिन अगुरु लघुत्व भेद याके परयाय है, आवली प्रमुखपर परजाय हे अनंत उतपाद व्यय ध्रुव मंत कही वाय हे, सो तो द्रव्य एक कहे समय अनतवत नर खेत मित वरतनाको उपाय हे ॥ ६० ॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ चोपाई ॥

शिष्य कहे तुम काल प्रमाना, मनुज खेतमित कह्यो सुजाना;
उत्पादादिक सब जगमांही, समैसमैमें क्युं कहवाही ॥ ६१ ॥

॥ अथ गुरु उत्तर ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

तव आचारिज एक गहि जिनमत टेक कहे एसि वात परवान पच्छ गहिकै, नरखेत समे मितकालमांही तीनोहोहि छहौ द्रव्यमांही नीत देखे ज्ञान लहीके, ताते उपदेशमाहि कहे जिन वैन एमे गहै गनधार सरधान सुध वहिकै, देख्यो युं अनंत जीन देखेगे अनतफुनि देखत हैभी अनतज्ञान सरदाहिके ॥ ६२ ॥

॥ अन्य आचारिज वचन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

कहे और गुरु काल द्रव्य हे असंख्य थिर रेणुंकए लोक-परदेश परवान है, एकएक रेणुकमै अनंत प्रगट होत समय सरव समे काज परधान है, निज निज काज करे अनमिलपने सदा यातें अस्तिकायकौ कदापि न कहान है, अनंत अतीत काल तेतो अनागतकाल अप्रदेशी परिणामी कालद्रव्य मान हे ॥ ६३ ॥

॥ निश्चयकालसरूप कथन ॥

॥ दोहा ॥

मनुज खेतमित जो कह्यो, सो व्यवहारीकाल;
निहचे पांचो द्रव्यकी, कालवृत्तना चाल. ॥ ६४ ॥
कालद्रव्य उपचारहे, पंच अस्तिकी चाली;
ओर कथन सब शास्त्रके, सो उपच्यारि भालि. ॥६५॥

॥ हेयउपादेय विवेचन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

उतपाद व्यय ध्रुवपने जीवसम एभी अगुरुलघुत्वै पर-जायभी समान हे, अरूपी अखंड अज अनादि अनंतसंत अनमिल और सेती लोकके प्रवानहे; इत्यादिक गुनसो समान तौ भी ए अजान तातै ध्यानध्येयमांहिं ध्येय ज्ञानवान् है, अनंत त्रिगुणसाथ देवचंद गुणनाथ ध्येय उपादेय ब्रह्म ज्ञानको निधान है ॥ ६६ ॥

॥ इति द्रव्यप्रकाशको प्रथम आधिकार ॥

॥ दोहा ॥

वरने च्यारो द्रव्यपर, जेह अरूप अजान;
अब वरनौ संक्षेपसौ, रूपी जड परमान. ॥ १ ॥

॥ अथ आतमाकरमयोगको दृष्टांत ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैसे नीरनिधि नीर समीरकी भीर सेती उछरे उतंग अति चंचलता विलसे, डौलत नदीकोनाथ चपल कलोलसाथ रंचनसु थिर होइ आकुलता मिलसे; तैसे ए चेतनभूप अमल अडोलरूप अखंड अनंत ज्ञान सुद्ध रसमे वसे, सोइ जीव कर्म प्रेर्यो मोहके पवन घेर्यो फेर्यो फीरे ममतासो क्षोभ माव क्रोध से ॥ २ ॥

॥ पुन दृष्टात ।

जैसे माटी जलसंग–घट दीपकादि चग–नवनव भाव धरे मृतरूप वोइ है, तैसे कर्मजल जोग–जीव च्यारगति रोग-लहेयें अखड ध्रुव चेतनत्व सोई है; ऐसो निज गुणवंत–अमल अखंड संत–ताहिको सरूप गाहि सिद्धरूप जोइ है, कहे देवचंद वदि ऐसे चिदानंद विनु मोक्षको साधक भइया और नही कोइ है ॥ ३ ॥

॥ पुद्गल द्रव्य लक्षण ॥

॥ दोहा ॥

पूरण गलन सभावधर, अस्तिकाय मूर्त्तिक,
फरस वरण रसगधमय, पुद्गलद्रव्य सु ठीक ॥ ४ ॥ –

॥ अथ पुद्गलगुणपर्याय कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जाके मूल गुनगानि रूपी अचेतन भनि अस्तिपन आदि खट आठे ओघ गुन हे, पुरनगलनरूपी अनुंकौ विसेस गुन यहै असाधारनके उरमांही जैन हे; हानिवृद्धि पटविध मूल परयाय याके द्व्यणुक प्रमुखखंध परजायआने है, एकवर्ण एक गंध एक रस द्वै फरस पांचो गुन याके मूल परीयैयजाने है ॥५॥

॥ पुद्गल द्रव्य सरूप ॥

॥ दोहा ॥

अन्यखंधसौ मिलनकी, यामे सकती सदाय;
याते परनामी प्रगट, अस्तिकाय कहेवाय ॥ ६ ॥

पुद्गल द्रव्य अनंत हे, सब नभ अंस समान,
ताके खंध अनंत हे, नरदपास संठान. ॥ ७ ॥

सो पुद्गल है दोय विध, इक अणु दूजो खंध;
खंध दुविध एक जीव विनु, बीय कर्मको बंध. ॥ ८ ॥

॥ पुद्गलखंध स्वरूप ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

छुटे अनु हे अनंत तेभी खंधमे मिलत अणुके सकंध होय खंध अनु होय हे, जे ते अनुहे अनंत ते ते खंध होय नाहि ऐसी बात कहे सोतो मुरख अबोह हे; तासै कहे द्रव्य पुदगल परावर्त्तकाल मिले कैसी भांति जाकी पुदगल सोहहे, अनुगति जीवसम थीतिहे अमीतानित कही अनुबात अब खंधको प्रबोह हे ॥ ९ ॥

॥ पुद्गलपर्याय कथन ॥

दोहा.

छाया आतप तेजतम, सबद बंध लघू थुल;
बिछुरन मिलन प्रवाहगति, इनको पुद्गलमूल. ॥ १० ॥
केइ इंद्री गम्य हे, केइ अगम्य निरधार,
संखअसंख अनंतअनु, त्रिधा खध विस्तार. ॥ ११ ॥
ज्ञानहीन जड हेय सब, उपादेय जीउ सार;
अब वरनौ निज ज्ञानहित, कर्मबंध विस्तार. ॥ १२ ॥

॥ अथ कर्महेतु कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पंच मिथ्याको प्रपंच अविरत बार संच पंचविस संपराय योग पंच दस हे, एतै सगरन हेतु कर्मबंधहीके खेत ताके भेद चौ प्रकृति थितिरस देस है, प्रकृति सभावथिति काल ठहराव रस चिकणाई दल समुदाय परदेस हे, करे निजनिज काज भाव-कर्मके समाज मोदकको दृष्टांत च्यारोमे अनस हे ॥ १३ ॥

॥ कर्म अष्टप्रकार कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

प्रथम ज्ञानावरणीय ज्ञानको आछादलेय आखपर पट जैसे याको सब दाव हे, भेदमति आदि पच पांचो निज गुण वंचे क्षायक क्षयोपशम यामे दोय भाव हे; दरसन उछेदक दरसना वरनीय प्रतिहारसम ध्रुववंधी ठहराव हे, दंसनावरन च्यार निंद पांच परकार यामे दोय भाव मोहद्रष्टिको उपाव हे ॥ १४ ॥
वेदनीकरमभर अव्याबाध रसहर ताके दोय भेद एक साताभी असाता हे, असाताको पाप हेतु साता हेतु पुण्य होव मधु-

लेपयुत असिधारासी चटात हे; मोहनीके भेद दोय दंसनचरण जोय दंसनके तीन भेद जगमे कहात हे, मिथ्यामोह मिश्रमोह समकित कंखामोह तिनौंइ प्रकृति निज गुनकेरे घात हे ॥१५॥

॥ मिथ्यामतवरणन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

देहसौ प्रीत प्रतीत अनीत सौ पुन्यकी रीत सौ जाकी मिताई, जीव अजीव विवेककी ढेक न जानत नां कछु आप पराई; करै बहिरंग दयादि क्रियाफुनि अंतर ज्ञान भगति न पाई, चंद कहे जिनचंद कृपावसि ऐसी मिथ्यामति जाई पुलाई ॥ १६ ॥

॥ मिश्रदृष्टिवरणन ॥

॥ दोहा ॥

वीतरागके वचनपे, नाहि राग नहि द्वेष;
फलभक्षीनर अन्नज्युं, मिश्रमोहसे लेख. ॥ १७ ॥

॥ सम्यक्दृष्टिलक्षन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ज्याको तन प्रीति नांहि सातापर मिती नांहि ज्ञानरीति लीयो निज नीत माही वसेहे, निसंकादि अष्ट सिष्ट इष्ट निज गुननिष्ट अंतरंग बहिरंग संतरस लसे हे; इंद्री सुखसु विमुख सिद्ध सुख सनमुख निज ज्ञान रूपसौ कलुष भाव नसे है, वरते धरमराग देवादिकपे सराग याते समकीत मोह राग संग हसे है ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

मिथ्यामोह अशुद्ध दल, सुद्ध सो समकीत नाम;
श्रद्धा सुचि रुचि तो सही, अति चार परनाम. ॥ १९ ॥

॥ चारित्रमोहनीकेभेद ॥

॥ चोपाई ॥

चरनमोहके द्वै परकारा, तिहा कपायका बहु विस्तारा;
नोकपायकी नवविध धारा, अब वरनो लछन परचारा. ॥२०॥

॥ आयुकर्मभेद ॥

॥ दोहा ॥

भवविपाकिगल जेलसम, अनवगाहको खेद;
नरनारक तिरग अमर, आउकरम चौभेद. ॥ २१ ॥

॥ नामकर्मभेद ॥

॥ दोहा ॥

नामकर्मके भेद बहु, वरणत बढे गरथ;
ताते वरनो नाम कछु, जासे कछु अरथ. ॥ २२ ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पैंसठि प्रकृति पींड अठावीसहे अपींड सब मिल्यां नाम-भेद तिरानु कहानहे, तनपंचदशमांहि पांचको गहन कीजे वरनादी वीसमांही च्यारोइ गहनहे, तब सडसठी भेद भये बंध मांही गहे उदय उदीरनामे इनहुको मानहे, सत्ताके सरूपमाही त्रानवेको हे उछाही देवचद कर्ममुक्त सदा सुखथान हे. ॥२३॥

॥ अथगोत्रकर्मभेद ॥

॥ दोहा ॥

उंच नीच दो भेदको, गोतकरम जड जान;
छेदे निजगुन अगुरुलघु कुंभकारसम जान. ॥ २४ ॥

॥ अंतराय पांच भेद ॥

॥ दोहा. ॥

दान लाभ वल भोगको, वली उपभोग प्रकार;
इन पांचोको मुदले, अंतराय सो धार. ॥ २५ ॥

॥ अष्टकर्म उत्कृष्टथीति कथन ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानदर्शनावरण अरु, वेदनीय अंतराय,
इनकि कोडाकोडी थीति, सागर तीस कहाय. ॥२६॥
सित्तरी कोडाकोडी थीति, मोहनीयके वीस;
सागर कोडाकोडी थीति, नामगोतके वीस. ॥ २७ ॥

॥ अष्टकर्म जघन्यथीति ॥

॥ दोहा ॥

पंचकर्मकी जघन्य थीति, एक महुरत होय;
परमदेव अरु नरककी, सागर तेतीस जोय. ॥ २८ ॥

॥ अथ रसबंध कथन ॥

॥ दोहा ॥

सर्वघाती उत्कृष्टरस, देस घातको मध्य;
गुन अघातीको हीनरस, आगममांहि प्रसिद्ध ॥ २९ ॥
वरणगंध अरु फरस ते, रस अनंतगुण होय;
कर्ममांहि रस अनंत विनु, कर्म न बंधे कोय. ॥ ३० ॥

॥ अथ प्रदेशबंध अष्ट वरगना सरूप कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

उदारिक वैकरिय आहारक तेजससौ भासा सासोस्वास

मन कारमण अंतहे, एकाणुक आदि लै अभव्य जीवसौ अनंत उदारिक अगहन गहन अनत हे; वैकरीकी अगहन ताही सो अनंत तासो वैकरिय गहन वरगना अनत हे, आठोइ अनंत पुदगलदल वृद्धमंत इनसौं विमुक्त देवचंद महासंतहे ॥ ३१ ॥

॥ अथ कर्मदल विभंजन कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

परयो मोहकर्मपास वंधे आठ कर्मफास तव सव थोरे अणु आउके वखानीयें, ताते नाम गोतकर्म अणुहे अधिक ताते ज्ञानदंस आवरन अंतराय ठानीये; ताही ते अधिक मोह कर्म परमाणु होत ताहिके अधिक वेदनीयके पीछानीयें, याते तुछ अणुदल वेदनी प्रगट नाहि सरस निरश रूप भोजन ज्युं जानीयें. ॥ ३२ ॥

॥ दोहा. ॥

सर्व घाती परमाणु अति, देसघातके हीन;
वीभजै वधसमे तुरत, सक्ति जीवकी पीन. ॥३३॥

॥ जीवमहिमा कथन ॥

॥ दोहा ॥

इत्यादिक वहु कर्मदल, इनमे लपटयो जीव;
लहे विविध विध वंधको; तौभी मुक्त सदीव. ॥ ३४ ॥

॥ आतममहिमा ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पुदगल हे प्रगट चेतन है गुप्तरूप अणु मुरतीक ठीक जीव मूरतीन है, पुदगल हे अजान जीव लोकालोक जान ज्ञानादिक गुनथान थिरतामे लीन है; चिरकाल कर्मसंग रह्यो तौभी

कर्ममुक्त विवहारपक्ष गहे कर्मके अधीन है, अक्षर त्रिगुणइंद देवचंद ज्ञानवृंद अक्षर सभाव लीये अचैरस पीनहे. ॥ ३५ ॥

॥ इतिश्री द्रव्यप्रकाशको द्वितीयद्वारं संपूर्णम् ॥

॥ दोहा ॥

वरण्यो पुद्गल द्रव्यको, संक्षेपे अधिकार;
अब वरनौ संक्षेपसौ, जीवद्वार सुविचार ॥ १ ॥

॥ जीवलक्षण ॥

॥ दोहा ॥

तिहुं काल जयवंत जो, चेतनता गुणखानि,
लिपै न परके लेपसौ, सोउ जीव बखानि. ॥ २ ॥

॥ जीवस्वभाव कथन ॥

॥ सवैया एकतीसा ॥

करमको करता न भोगता न करमको आतम धरमवंत परम अफंद हे, असंख्य प्रदेशधर चेतना रमणीवर अस्तिआदि खट-परकार गुन कंद हे; परभाव भावित पै सदाई अपरभाव निज परभाव भवभीतीसु अमंद है, अनंत अमोदवंत संतसत्तावंत संत अक्षर त्रिगुण इंद सदा देवचंद है ॥ ३ ॥

॥ जीवद्रव्यके च्यार पर्याय कथन ॥

॥ सवैया एकतीसा ॥

मूल परजाय है अगुरुलघुको विकार खट हानि वृद्धिरूप द्रव्यको सरूप है, परपरजाय नर नरकादि अवधार मति आदि परजाय व्यंजन अनूप है, स्वभाव द्रव्यव्यंजन ए परजैचर मततुं ताते न्यून सिद्ध अवगाहना अरूप है, अनंत चतुष्क गुण व्यंजनके परजाय निजकाज करतार निजगुण भूप है ॥४॥

॥ एक द्रव्य एक क्रिया करे यह कथन ॥

॥ चोपाइ ॥

दोय द्रव्य एक किरिया न करे, दोय किरिया इक द्रव्य भिन्न धरे;
एक वस्तु एक किरिया ठाने, यह यथार्थ जिनराज वखाने ॥५॥

॥ शिष्यप्रश्न ॥

॥ सवैया एकतीसा ॥

निहचे असुद्धनय व्याप रागादिक चय ताहीको व्यापक होय कर्मसौं करतुहे, सोई व्यवहार लहि वेदक सभाव गहि गतसमय कृत क्रिया फलको गहतु हे; कृतकर्म भोगता हे नुतनको करता हे एक समे एक जीव क्रिया दौ धरतु हे, हमकुं संदेह एह कहो गुरु गुनगेह तुंहारे सिद्धांत वीची केसो अभिमतुहे ॥ ६ ॥

॥ अथ गुरुउत्तर कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

सुद्धपने अपने गुनको करता यह जीव जथारथ एही, ज्ञान सरूप अनुप सधे गुण रासि वधे गतरोप अनेही; भावत्त कर्म करे पर योग विभाग संजोग अज्ञानको गेही, ताही ते द्रव्यत कर्म उपाधि लगे जीउको किरिया द्वयकेही ॥७॥

॥ दोहा ॥

विदुप रागादिक पर, कीने ताके रोध;
द्रव्यकर्मको रोध हे, ताते निर्मल बोध. ॥ ८ ॥

सवैया एकतीसा ॥

ज्ञानरूप ज्ञानमांहि क्रोध भान क्रोधमांहि ज्ञान क्रोध

एकतान होय कहुं वातमे, ज्ञानरूप आतमामे रागदोप मोह नाही वस्तुको स्वभाव भेद सुद्धताके ध्यानमे; एसो ज्ञान धरे सोतो कर्म कोन बंध करे वरे न अशुद्ध मोह जग्यो भेद ज्ञानमे, चेतनाहे जीव वस्तु कर्म पुदगल वस्तु वस्तु गुण क्रांति भेद जिनके वखानमे. ॥ ९ ॥

॥ संवरहेतुकथन ॥

॥ दोहा ॥

जान्यो आतम ज्ञानसो, आतम आस्रव भेद;
तब आस्रव संवर भयो, गयो कर्मको खेद. ॥ १० ॥

॥ अथ ज्ञाताजीववरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

काहुं एक संत जीव निज गुन गहि लीने पर गुन त्याग जोग पर जानी त्यागे है, विरम्यो विरुद्ध सेती रम्यो निज गुन रेती मोहके सुभट जेते ते ते दूर भागे हैं; रातौ निज आतमासो दूर टर्यो हे तमासो विमुख वो विभावसें ज्ञान ध्यान लागे हे, ऐसे सुद्ध जीव देव करे नही कर्म टेव सुद्धता सुधाह पाये संतरस पागे है ॥ ११ ॥

॥ उपदेशकथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

मुरख जीव धरे चित्तमे कहा जल्प विकल्प सदा दुखदाई ध्यावहु ब्रह्म सदा अति उज्जल दूर तजो सब सोज पराई; दर्शन लाभ यहै जगमे वर जीवको काल अनंत सदाई, वदे इमचंद रहो हम सो ध्रूव अन्तर त्रय गुण प्रीति सदाई ॥१२॥

॥ रागादिकसौशिष्यप्रश्नगुरुउत्तरकथन ॥

॥ सवैया ॥

कोउ कहे रागादिक चेतनसो भिन्न नांहि आदि विनुं सदा काल एकही सभाव हे, कैसे अणुरागी नाही रागी कहो जीवहीको या ते जीव रागादिक तादात्म्यता दाव हे; संत कहे वंध्ये विनु छुटो कहनो असत्य रागादिक एक माने मुक्तिको अभाव हे, या ते यह तहकीक कही देवचंद्रवात रागादिक पर द्रव्य कर्मको विभाव हे. ॥ १३ ॥

॥ आतमशिक्षा कथन ॥

॥ चोपाइ ॥

सदा अनंत विकलपजल्पकौ धारते कहा वंधतहो; कर्म नीकशी निज कार तेजो; विकल्प विनु एक नित्य निज अनु-भवो,, तो न करो पर वंध धरो न भव नवो ॥ १४ ॥

॥ अथ ज्ञान माहिमा ॥

॥ दोहा ॥

यह परमातम ज्ञान गुन, भवतरु छेदनहार;
ध्येयरूप आदेय फुनि, मुनिजन मन आधार. ॥ १५ ॥

॥ शिवभवहेतु कथन ॥

॥ दोहा ॥

जिनवर जन सुखकर कह्यो, यह उपदेश उदार,
शिव थानक निज गुन गहन, निज गुन त्याग संसार. ॥१६॥

॥ जीवमहिमा ॥

॥ सवैया इक्तीसा ॥

जामे इंद्री पचनाही कर्मको प्रपच नाहि मनको न रंच

जामे तनको न अंगहे, नाहि कर्म हेतु खेद मार्गनाको भयो छेद ध्यानध्याता भेद नत वचन तरंग हे; शांत ध्रुव निरूपाधि छिन्न पर क्रिया व्याधि पर द्रव्य न असेस लेस न अनंग हे, ज्ञान जोति भासमान रतनत्रि तयको जान ऐसो सुध नित्य देव मेरे घट संगहे. ॥ १७ ॥

॥ **भेदज्ञानमहिमा कथन** ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ऐसे कोउ जैननर भेदज्ञान भावधरि जीवकर्म भेद कीनो हंसछीर नीर ज्यौं, मोहको विनास कीनो आत्मगुन गहिलीनो भीनो शुद्ध धरामांहि जैसे जयवीर ज्यौं; आपविषे थिर भयो आपही आनंदरूप शुद्धस्वीय ध्यानध्येय ध्याता होय धीर ज्यौं, सुद्धबुद्ध वर्यो दूनो सुनौ भयो कर्मपुर ऊनो कीनो रागदोष पायो भव तीर ज्यौं ॥ १८ ॥

॥ **स्याद्वादशुद्धचेतन स्वरूप कथन** ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जामें उतपात व्यय ध्रुव धारा तीनो एक समे विची होइ रही गुणपर्ये ज्ञानमैं, एक है अनेक है कि करता अकरता हे भोगता अभोगता बखान्यो जिन वानमैं, बुद्ध शिव ब्रह्मारूप मतिचेतनासरूप पुरन प्रकाश भये जिन जैन थानमैं, एसो शुद्धचेतन तन कितन संगतिसो नट जैसे बाजी खेले भवके चोगानमैं ॥ १९ ॥

॥ **शिष्य प्रश्न** ॥

॥ दोहा ॥

शिष्य कहे सद्गुरु सुनो, यह हम मन संदेह,
जातिभेद ते क्युं भयो, जडचेतनको नेह. ॥ २० ॥

॥ गुरु उत्तर ॥

॥ दोहा ॥

विषें पुद्गल मूर्छा करे, मदिरासे भ्रमभाव;
चमकमें आकर्ष गुण, नव नव पुद्गल दाव. ॥ २१ ॥
त्यु ज्ञानावरणादि तनुं, सक्ति जीउकी तोर;
करहि विकल अज्ञानसो, फेरे भवकी दोर. ॥ २२ ॥

॥ शिष्य प्रश्न पुनः ॥

॥ दोहा ॥

हे स्वामी अणुद्रव्यमें, एति शक्ति न होय;
जीव ज्ञानता मूदले, चेतनको गुन खोय ॥ २३ ॥

॥ गुरु उत्तर कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

कोउ पुमान पीये मदपानज होय विशुद्ध करे विकलाई, बुद्धिकी वृद्धि करे घृतब्रह्मीको मूर्छित जीव हुवे त्रिखपाई; दर्शन कर्म उदै लहे नींदको, जीवको जानपनो सब जाई, त्यु यह पुद्गल कर्मके संध मीले जीउं शक्तिको लेहु दबाई. ॥ २४ ॥

॥ दोहा ॥

छतो अज्ञान अनादिको, जीउको करे विकार;
अछती वात न होय कब, गगनकुसुम ज्युं धार. ॥२५॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

शिष्य कहे सत्तारूप स्वभाव विभाव माने एकता प्रसंग होव द्वैतभाव नसेहे, अनुग्रह उपघात वस्तु शक्तिको प्रकाश

ताहीकौ विनाश दोनुं पुद्गलमे लसेहे; अनादिता कहे याको प्रसंग अनंत होत जेसे ज्ञान चेतनको योग सदा वसेहे, एते दोषवंत वानि तुम कहि कहा जानि गुरुजी हमारो चित्त संसयमां धसेहे ॥ २६ ॥

॥ गुरु उत्तर कथन ॥

॥ दोहा ॥

मिले हेतु विनसे जबे, वस्तु अनादि ज्युं सांत,
कर्मभव्यके उनसै, कनक मैल दृष्टांत. ॥ २७ ॥
आतम करे निजभावको, न करे परपरनाम;
स्वस्वभाव किरीया करे, सो पावे शिव ठाम. ॥ २८ ॥
असद्भूत नीहचे करे, भावकर्म ए जीव;
द्रव्यकर्मकौ फुनिग्रहे, नयव्यवहार सदीव. ॥ २९ ॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

व्याप अरु व्यापकको भाव इष्ट कह्यो शिष्ट करता करमकौ या नित्यहीकी रितहे, ताहीके अभाव कैसे द्रव्य कर्मपुदगल करेगो चेतनराम तासौं जो व्यतीत हे; व्याप अरू व्यापकता तनमय गुणसंग परभाव संगताको कहीनो अनीत हे, तदमे अभाव होत करमको करतार अनादि अनंत जीवको कहेनेकी भीति हे ॥ ३० ॥

॥ गुरु उत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

कर्मके निमित्त कहे आतमाके परिणाम आत्म परिणामको निमित्त पूर्व कर्म है, याते दुदुभावनीको हेतु हेतुमंत भाव

लगी रह्यो परभाव मेरो एतो भर्म हे; जेसे लोह भ्रमको निमित्त कह्यो चमकको चमककी शक्तिको निमित्त लोहकर्म हे, ऐसे जीव कर्मको संयोग लगी रह्यो तोभी निह्चे विचारे भिन्न कर्म जीव धर्म हे ॥ ३१ ॥

॥ अथ मिमांसकमत कथन जैन उत्तर सहित ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

मंद कहे सुखदुःख भाव सिव आदिककी करता प्रकृति एक जीव ब्रह्म न्यारो हे, करता न काहूको हे भोगता न होय काको करता दिवाको सब प्रकृतिको प्यारो हे, तासो कहे बुद्ध भैया शिव भेद दोनु क्रिया एक करे ऐसो बोध कहा सौ विच्यारयो हे, सुखदुःखकी निमित्त प्रकृति कहीसो सच ताको ताके कारिजको कर्त्ताभोक्ता धार्यो हे ॥ ३२ ॥

॥ जिनवचन ॥

॥ दोहा ॥

करता भोक्ता ज्ञानको, निह्चे ब्रह्म सदैव;
करे भोगवे कर्मको, विवहारेय जीव ॥ ३३ ॥

॥ ब्रह्मवादीमत कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ब्रह्मवादी कहे ब्रह्म एकहे अखंड सो तो ध्रुवज्ञान मुद्रा धरि वैकुंठमे रहे हे, ताके भय भ्रम ए ते दीसे जगमांहि जे ते जडज्ञाता नवनव सब वास लहेहे; पूर्ण नित्य ब्रह्म ज्योति ताकी इछा जब होत तब ताही अंसको भी वैकुंठमे गहे हे, ऐसे शुद्ध ब्रह्म देवचंद निजाधीन वशे ताको कर्मवसि सुखी दुःखी कोन कहेहे. ॥ ३४ ॥

॥ ताको जैन उत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैन कहे ब्रह्म रीत इछाभावसौ अतीत गतदोष मोक्षमय इछा दोष ठानीये, असंख्यप्रदेशी भी अखंड त्रिहुं काल सदा ताके खंड करि वेको हेतुं कौन जानीये; ताते जीव हे अनंत निज ज्ञान गुणवंत नित्यानित्य भावमंत शुद्धनै वखानिये, तामै जे विभाव वसी ते ते भववासी कहे जे ते कर्ममुक्त ते ते सिद्ध बुद्ध मानीये ॥ ३५ ॥

॥ अथ बौद्धमतकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

बुद्ध कहे प्रथम समे मे जोउ जीव हुतो दुतीय समेमे सोउ जीव वस्तु नाही हे, कर्ता हे कर्मकु जो सो तो भोगता न होय करे और लहे और मेरे मत मांही हे; जैसे जीव तैसे और वस्तु सब युंही माने जाने न सरूप शुद्धबुद्ध रीति सोही है, परजाय सभावको सरवथा द्रव्य कहे रहे मद मत निज बोध धारा ढाही हे. ॥ ३६ ॥

॥ जैनकथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैन कहे वस्तुरीत नीयत दरव नय नित्य निराबाध पर जायनै अनित्य है, समै समै नयो होय तब कैसे एसी बात जाने यह मेरो कीनो यह मेरो कृत्य हे; बालपने कीनो काम वृधपने याद आवे एकांत अनित्य पक्ष गहवौ असत्य हे; ताते उतपात व्यय ध्रुव धारा तीनौ सदा एक समे एक वस्तु वीचि कही सत्य हे. ॥ ३७ ॥

॥ न्यायमति ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ऐसे वानी सुनी मनमांही न सुहानी तब न्यायमति वोल्यो निज पक्षको पकरीके, नारी विनुं होय कैसे संतानके उपज न भोजनको करे कौउ पाक विनुं करीकैं; उद्यमके कीये विनुं कैसे कार्यसिद्धी होत उद्यम प्रधान याते कह्यौ और हरिके, याते करतार जीव कह्यो विश्वनाथ ऐसे वीरजको फोरि निज उद्यमको धरिके ॥ ३८ ॥

॥ ताको जैन उत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैन कहे एतो वात कही हे एकांतनय स्याद्वाद वादी ऐसी वात नाही कहे हे, चेतनको वीर्य जागे भागे परभाव सव याते यह उद्यम व्यौंहारमांही गहेहे; कर्म उदै उद्यम सौ करे कर्मभावहीकु आतमा कौ उद्यम सोगुन त्रय वहेहे, कर्मको स्वामित्वपनो भेदज्ञान भाव विनु अहं बुद्धि भाव वसि चेतनजी लहेहे ॥ ३९ ॥

॥ शिवमति कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

शिवमति कालवादि कालपक्ष गहे रहे, कहे सव जगवात कालमत पीन हे, कालवसि वालक सो युवा होय वृद्ध होय कालपाय वस्तु जो नवीन सोइ छीनहे, कालवासि रितु फिरे कालपाय फल खिरे जनममरण वात कालहीमे लीन हैं, याते सुखदुख रासी शिववास भववास रवि शशि उदे अस्त कालके अधीन हैं ॥ ४० ॥

॥ जैनउत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैन कहे सुनो भईया जेती कही तुम वात तेती सब साची ये एकांत नाहि गहनौ, स्वभाव नियत पूर्व कृत फुनी उद्यम सो पंचमो तो समवाय कालवसि कहनौ; पांच समवाय मिले फले तव शिवकाज समवाय मिल्यो विनुं काज नाहि सरनौ, मतपक्षपात हरी स्याद्वाद भाव धरी नय भंग भेद युत एसो ज्ञान धरनौ ॥ ४१ ॥

॥ सर्वमत एकत्वीकरन जैनमत स्थापन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

मीमांसक कर्ममांनि विवहार पक्ष गहे वेदपाठी ब्रह्म मानी दर्व नय गहतुहे, बोध छिन्न भंग कहे परजाय नय न्याय मति कहे करतार उद्यम महतुहे; शिवमति कालवादी सर्व कालाधीन मानी पांचो समवाय तजि टेकमे रहतुहे, एतै सब अंसवादी अंधगल रीति गहे स्यादवादि सर्व ए अनेकता कहतुहे ॥ ४२ ॥

॥ अथ षट्दर्शन जैनके अंशरूप कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

विवहार नय गहे प्रकृतिहे मुख्य रूप निहचे स्वभाव ब्रह्म नित्य ज्ञान धाम हे, परजायनै अध्रुव सुक्षम सभाव धर उदिम सभाव लीये करतार राम हे; कालचाल हे प्रवाह पर नाम चक्रगति युं अनेक अंगवान जीव परनाम हे, एक अंग तजि सरवंग गहे सो सुबुद्धी एक अंगरंग रागि सो कुबुद्धि खाम हे ॥ ४३ ॥

॥ अथ स्यादवादसरूप कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आपने चतुष्कगुन हेसो नाही परगुन या ते दोनुं बात सम कथन रहतुहे, है भी नाही कह्यो जाय नाहि नाहि कह्यो जाय, है है न न कह्यो सर्व नयमै कहतु हे; नित्य हे अनित्य हेकी सत्य हे असत्य होकि अवक्तव्य वकतव्य सब अभिमतु है, एसो प्रभु चिदानंद ज्ञानादि त्रिगुन योग देवचद पद पाय आनद लहतुहै ॥ ४४ ॥

॥ सविकल्पनिर्विकल्पज्ञान कथन ॥

॥ दोहा ॥

नव नव गुनमय जीव कह्यो, यह सविकल्प ज्ञान;
कर्म नास कर एकमय, निर्विकल्पको ध्यान. ॥ ४५ ॥

॥ निर्विकल्पमाहिमाध्यान कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

अनादि अज्ञान लीये रागदोप मद पीये मोह महातम सो महातम वधार्यो हे. जीव लोक जीत लीयो ज्ञानगुन मुद दीयो कीयो निज राज परभावको पसारयो हे; ताको परताप तोरी कर्म दोरको मरोरी मोरी परभाव राज ज्ञानराज धारयो हे, ऐसो निर्विकल्प ध्यान ताको महिमान मान जाने देवचंद औरको कहनहारो है ॥ ४६ ॥

॥ अथ निर्विकल्पध्यानहेतु कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

ज्ञानको गेह अछेह आनदको फंदके कंदको छेदनहारो,

वीरयशक्ति अनंतको नायक लायक ज्ञायक भाव उजारो;
घायक मोहको त्रायक सौहकौ सोजलीये निजबोधि पसारो,
ध्यान एकत्वको हेतु हे आतम या तम तापको तारनवारो ॥४७॥

॥ अथ तनहेय कथन ॥

॥ दोहा ॥

जोति अनादि अनंतघर, परकरता निज मानी;
भयो गेह अज्ञानको, स्वस्वरूप गुनभानि. ॥ ४८ ॥
ज्ञानदृष्टि छुटे भइ, तनपरि चेतन भ्रांति;
परक्रिय करता भ्रम भयो, मतवाला दृष्टांति. ॥ ४९ ॥
जैसे इंद्री भोगपरि, हे तेरो अनुराग;
तैसो आतम ज्ञानसुं, धरि चित यह शिवमाग. ॥५०॥
जो रूपी सोहे नही, में अरूप चिद्रुप;
याते तजी परभाव सब, आतमरूप भजी अनुप. ॥५१॥
जा तनकी ममता गये, आतमतत्त्व दृढ होय;
ताको जो अपनो गिने, मूढ वृद्ध हे सोय. ॥ ५२ ॥
तन ए पुद्गल पिंड जड, तुं चेतन अमलानी;
एसो अमिल मिलाप सब, ज्युर्यो कीसि विधि आनि.॥५३॥
मांस अस्थि रुधिरादिको, करे दुगंछा पेखी;
तन्मय तनको निज गने, यह अज्ञानता देखी. ॥५४॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

देहको नेह तजो तुम चातुर आतुर भाव सदाईन पांही,
व्यंतरके पुरसी छिनभंगुर रूपकी सोभ सो बादर छांही;
घणा (१) दिनके सबासि दुरगंधके दुषन गेह वदी इनमांही,
या तनकी ममता न तजो तो (लौं,) आतमज्ञान जगे तुम नांही. ॥ ५५ ॥

॥ दोहा ॥

देहादिकको भिन्न गणी, गहि आतम शीवकुल;
परमें निज अभिमानता, यह भव भ्रमणा मूल. ॥५६॥

॥ निस्पृहता भाव कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

अधरम घाती शिव मारगको संघाती एसो रंच नाही पक्षपाती अध्यातम राव हे, परम नरमवर भेदज्ञान भावधर हरि परदोष कर्म नासको उपाव हे; तन मन त्रिया धन योवनादि पर गिनें मोहद्रोहमें नसे न जीतवेको दाव हे, नरककी भीत नांहि सुरपद प्रीति नाहि भवरीति रित्यौं ऐसा निसपृह भाव है ॥ ५७ ॥

॥ दोहा ॥

स्व स्वरूपगत दृष्टिको, नाहि शक्रपद चाहि;
स्व स्वरूपगत दृष्टिको, लघुपद लहे उछाहि. ॥ ५८ ॥
परम ज्योति सुखस्वादरत, योगी जोग निरत्त;
क्षुधित अन्न ज्युं राग विनुं, जा नहि विषय अनित्त. ॥ ५९ ॥
आतम अनुभव सुखसो, भ्रष्ट भये दूरबुद्धि;
विषयन रति चितमें करे, सुकर कादम लुद्ध. ॥ ६० ॥

॥ आतम स्वरुप वरणन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

सुद्ध सुधुंद अफंद अमद आनदको कंद सदा सुख धारी, ऐसो अनोपम आतमज्ञान सुधाधर कुंडमें जीले अपारी; अनादि अज्ञानके भर्म लग्यो यह कर्म कलंकको मैल पखारी, संत लहे निरवानको थानक दर्शन ज्ञान चरित्रसें भारी ॥६१॥

॥ दोहा. ॥

स्व स्वरूप आलंब विनुं, शिवपथ और नहीज,
मुक्ति स्त्री वश करनको, सोहं ध्यान सुबीज. ॥ ६२ ॥
जैसे पंकजदल अमल, रहे कर्मसौ भिन्न,
त्यौ आतम स्व सभावमय, कर्मखेदनिर्विन्न ॥ ६३ ॥

॥ इंद्रिसुखहेय कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जग इंद्री सुख जेते ते ते सब दुःखरूप कबहुं न समता हे ममता अनंत हे, जैसे पंथी मरुदेश ग्रीषम समे प्रवेश मध्य दीन नीर विनु भोजन करंत हे; कामभोग रतिमति उचित न तोपे राम पामवाज जैसे दुःख राजीमे महंत हे, पन्नग ज्युं दुःख देय निहचे सरूप हेय गेय योग उपादेय मागमे अकंत हे ॥ ६४ ॥

॥ दोहा ॥

उत्तम पद ते तुं पर्यो, सो विभाव अनुभाव;
तोभी वाहि मेरमें, कहाकहौ गुनराव. ॥ ६५ ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

यह शरीर हे पीरको पीहरई पर आतमकी हरहेरी, बेरी करेरी परी यह ज्ञायक काई अनेरी रही नही सेरी; ज्ञान सरूपमयी भजि चेतन ए तनपे मन प्रीति उधेरी, ज्ञानको मोगर लेकर आतम तोरि तुं मोह जंजीरकी जेरी ॥ ६६ ॥

॥ शरीर पर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

मेतो तनधारी नांहि एतो तन मेरो नांही मेतो ज्ञान

गुणधारी करमस्यो न्यारो हे; मेंतो चेतना सरूप एतो जड भावरूप मेरो याको कोन नेह एह न विचार्यो है; मेंतो नित्य ए अनित्य प्रगट असुचिखानि हानिथान एसो देह मोको कैसे प्यारो हे, मोहके विटंब घेर्यो भवकाल थित प्रेरयो ऐसो भेदज्ञान में तो चित्तमें न धार्यो है ॥ ६७ ॥

॥ परहेयआतमाउपादेय कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

सुद्ध दृष्टि समकिती प्रकृते विरतचित्त करमको करतन कहो कह्यो जात हे, मिथ्यादृष्टि क्रूरमति पररंग राच्यो संतो परकृत फलहीको भोगता कहात हे; निज परको विवेक करे भेदज्ञान छेक टेक डारिके अनेक यह जैन वात हे, परमुक्त गुणयुक्ति मुक्ति विनु मुक्तिभूत एसो निज चेतनको देवचंद ध्यात हे ॥ ॥ ६८ ॥

॥ मन संकल्प कथन ॥

॥ दोहा ॥

विकल्प जाल कल्लोल करि, चपल मनोजलफंद;
चितद्रह चेतनता दूरि, ज्यु वादरमें चंद. ॥ ६९ ॥

॥ आतमामोक्षहेतु ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आतम आतमभाव धरयो ध्रुव चेतनता गुनज्ञानको साई;
ध्यायकध्येय अभेद चिदाकर ध्यावहु त्याग कैमो जपराइ;
चचल भाव तजो भजि एकता चित तरंग अनंग हराई,
सादिअनत महत अमीत सो पावहु मोच प्रधान सवाई.॥७०॥

॥ दोहा ॥

परगुण संमुख ज्ञानसो, चेतन परवश होय;
निज गुण संमुखता लहे, लहे आतम गुण सोय.॥७१॥

॥ ज्ञानथीरीकरण ॥

॥ दोहा ॥

चित्त प्रीति ज्युं देहपै, त्युं चेतनपै होय;
तीहु काल भी कर्मको, बंधन लहे न सोय. ॥ ७२ ॥

॥ आत्मा अबंध कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जडता सुभाव लीये मोह मद पान कीये, एसो परद्रव्य सो तो मेरो धन नांही हे, मैतो याको नाथ नाहि मैतो नाथ चेतनाको ज्ञानादि अभंगरंग जाके संग याही हे; अंतरंग बहिरंग अंग परसंग भंगि इंद्रीकी उमंग तजी जामे परछाहि हे, होय जो चेतन एसो जैसो तो सभाव तेसो तोए कर्मबंध पुंज तो कुन कहाही हे. ॥ ७३ ॥

॥ आतमा सक्रिय कथन ॥

॥ दोहा ॥

निक्रिय लोहक्रिया लहे, अयस्कांत मणि योग;
त्युं निःक्रिय सक्रिय हुवे, जीव कर्मके रोग. ॥ ७४ ॥

॥ परमात्मा सरूप कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

शुद्धबुद्ध चिदानंद निरद्वंद श्री मुकुंद अफंद अमोदकंद अनादि अनंत हे, निरमल परब्रह्म पूरन परम ज्योति परम

अगम अकीरिय महासंत हे; अविनासी अज परमातमा सुजान जिन निरंजन अमलान सिद्ध भगवंत है. एसो जीव कर्मसंग संग लग्यो ज्ञानभूलि कसतुरमृग ज्यु भुवनमें रटत हे. ॥७५॥

॥ आत्मज्ञान लाभहेतु कथन ॥

॥ चोपाई ॥

करमकरमकी रजसो न्यारा, जे ध्यावहि चेतना कि धारा;
लहे नित्यपद तेह अनंत, स्यादवादयुत मंत महंत ॥७६॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानदृष्टि चारित्रमय, एक शुद्ध निरदोष;
स्वसरूप एकत्र भजि, करहि करमको सोष. ॥ ७७ ॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ दोहा ॥

एक द्रव्यमे तीन गुण, कैसे रहे एकत्र;
यह हम मन संदेह है, कहो गुरु परमपवित्र. ॥ ७८ ॥

॥ अथ गुरु उत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जैसे पीत स्निग्धगुरु तीनुं गुन भेद विनुं निरंतर आदि लेके कंचनमे रहे है, दहन पचन फुनि तपन ए तिन गुण अगनिमे एकसमें जिनवर कहे हे; शीतल प्रवल वलि निरमल जलविचि तीनो गुण एकसमे स्वभावसे वहे हे, तैसे जीव द्रव्यमांहि ज्ञानादि त्रिगुन रहे निहचेसु भावमे अभेद रूप गहेहे ॥ ७९ ॥

॥ ज्ञानगुन भेदाभेद कथन ॥

॥ चोपाई ॥

जो विचारीये नय विवहारा, तो ज्ञानादि जीवसु न्यारा;
राहूसीस जैसे यह लीजे, हेअभेद पे भेद कहीजे. ॥ ८० ॥

॥ भेदज्ञान महिमा कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

कामभोग लालची दे सब जीव वशी कीने भीने मोहरसमे निरंतर विकल है, ताकी छाक दूर हरि आप पर भेद करि ऐसो भेद ज्ञानगुन अदोष अमल हे; धारावाही रीत लीये ताको धरेसो सुबुद्धि करमके मोरनको कारन सबलहै, अकल सकल विनुं सकल जगत परि रहे सिद्धद्धैके जैसे तोयमे कमलहे ॥ ८१ ॥

॥ आत्मबुद्धि उपादेय कथन ॥

॥ दोहा ॥

आत्मबुद्धि शिवको करे, देहबुद्धि संसार;
ता ते तनथी त्यागकैं, करि निजगुनसो प्यार. ॥८२॥
पुण्य पाप दोनुं प्रकृति, है पुद्गलको खंध;
इनपर आतमबुद्धि जौ, इह करमको बंध. ॥ ८३ ॥

॥ शिष्य प्रश्न ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

दुष्टभाव पापहेतु सुष्टभाव पुण्यहेतु याते दोउं कर्ममांहि हेतुभेद मानीये, पाप उदै हे असाता पुण्य उदे होय साता याते चार मिष्टरूप स्वादभेद ठानीये; पापतो कुगति देय पुण्य सदगति

देय गतिभेद परतक्ष फलभेद जानिये, पापतो लगे अनिष्ट पुण्य सबहीको इष्ट संकिलेस सोधिसु सुभासुभेद आनीये ॥८४॥

॥ अथ गुरु उत्तर कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

गुरु कहे पाप पुण्य दोनु कर्म जालरूप हेतु रस गतिफल भेद नाहि लेखीये; कंपरोग पापभोग पुण्यहे अकररोग दोनुं दुखखानि विनासिरूपक देखीये; पापसो अरुचिभाव पुण्यसेती प्रीतिदाव मिथ्यादृष्टि जीवकुं ए कुमति विशेषीये, दोनुं जडभावरूप दोनुंकुं अज्ञानरूप इनहीसो न्यारो सोइ समकिती देखीये ॥ ८५ ॥

॥ मिथ्यामति वरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पापसु विमुख अरु पुण्यहिके सनमुख सुगतिसु रुचिधरे कुगतिसुं डरेहै, करतामे कारजको कीनोमें कारज एसो अहंबुद्धि मातो विपरीति रति धरेहै; आपको न पाहिचाने ठाने भ्रमभाव मन तन धन निजगुन करमको करेहे, कपटको आसन अज्ञानको विकासन हे ऐसो मिथ्यामति भवसागरमे परेहै ॥ ८६ ॥

॥ पुनः मिथ्यामति कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आपको न जाने चित परहिको माने वित ठाने भ्रमभाव रत करम कहरमे, चित्तमाही धरे वांक सुखहीकी कांख राखे डोलत निसाकरा कूमत्तज्यूं सहरमे; हानि थान मलखानि जाने न गिलानि आनि राचे तामे अतिविप वेदज्युं जहरमे, उलट अटत नित लोटन कनूतरज्यु सुलटत नाहिकब मिथ्याकी लहरमे ॥ ८७ ॥

मदमत वारेहे, ईश्वरकी इच्छा कारि नर फिरे बहुपरि नरग सरग तिरजग योनि धारे है; एते परि जैन कहे आतमा अक्रित संत अरूपी दिगादिवत् अलिपत सारे है, कुगति सुगति याते आनि कोउ नाहि देत निजकृत कर्मफल भोगतै विचारेहे ॥९५॥

॥ अज्ञानमहिमा कथन ॥

मै अज्ञान वीरजसो, त्रिविध कर्मकी आथि;
करता भोगता ताहिको, सात धातु मल साथ. ॥९६॥

॥ आत्माएक क्रिया कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

एक एक कारजके करतार हे अनेक एक एक करताके कारीज अनेक है, ऐसे कहे जीव करतार होय परहीको पर करतार चिदानंदकोभीक कहे, ज्ञानिजड को विभेद होय नांहि एतै खेद् यातै यह वात भैया गुन अतिरेक है. एक करतार एक कारजकोतहकीक स्यादवाद मतमांहि इहै थिर टेकहे. ॥९७॥

॥ दोहा ॥

चेतन दुरगतिमें परे, पुरवकृत संबंध;
ज्युं विष्टाभृत कूपमें, परे मत्त जन अंध. ॥ ९८ ॥

॥ पूर्वज्ञानबल वर्णन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आतमाको ज्ञान ध्यान मुकतिको है निदान आत्मज्ञान विनुं शिव कबहु न जानीये, दान दया तप जप उपसम यम दम ज्ञान विनुं एति क्रिया तुच्छ फल मानिये; याते दोनुं व्याप्ति जानि आतमा एकंत आनि मन तन वानि रोधी सिद्धसोधी

आनिये, यहै निरवान थान यहै हे केवलज्ञान आनकर कुति-
वानि दोपमे वखानीये. ॥ ९९ ॥

॥ अथ आत्ममहिमा ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

धरम अधर्म द्रव्य एक असंख्यातदेश उपचार काल नभ अनत प्रदेश है, जीवहे अनंत ताते पुद्गलहे अनंत द्रव्य द्रव्यमें अनंत गुणको प्रवेशहै; गुण गुणमें अनंत परजाय परिणति ज्ञाता सब भावको परम गेय देश है, अनादि अनंत निर द्वंद महानंद कंद महोदयी एसो मेरो आतमा हमेस है ॥१००॥

॥ परमात्ममहिमा कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

नवतत्त्वके विकल्प तीनुयोगके सकल्प तामै रहे नित्य वैं निरागी असपृष्टहे, ज्ञानावरणादिक अड कर्ममांही रह्यो तौमी चेतनाको भूप निज रूपहीमै निष्टहै; सुमतीसु थाह साही कुमतिको अंस नाही निज वित्त रत परसौ न लप्ट पष्ट है, परम अखंड ज्योति नित्य संत हे अमित देवचंद तत्त्वपर जिनजीको इष्ट है ॥ १०१ ॥

॥ आत्मा अनेकरूप कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

नित्य है कि अनित्य है कि एकहै अनेक है कि सदसद-भाववान कैतेन उपायो है, सूषमसुं सूषम है थूलसुं अतीवथूल अरूपी अगंध जिन ग्रंथनमैं गायो है, लोकालोक तीन काल उतपात ध्रुव नास जाकी ज्ञानजोतिमांहि जगत समायौ है,

राग निवारिके द्वेषकु ढारिके निर्मम भाव सदा उर धारे,
ज्ञान निधान स्वरूपको जानकें आतमरति मुनि आतम निहारे. ११०

॥ आत्मकर्मक्षयहेतु कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ऐसें भेदज्ञान धारि आपा पर भेद करि परिहर परभाव तापे प्रीति टारीके, अखंड अनंत ज्ञानवंत निज आतमामें चित्त थीर आंनी जीव औरकुं विसारिके; ज्ञान जोर कर्मकोरी भोरी माया डोरी तोरी मोरीकें मनोरी निज ज्ञानकुं पसारिके, भानिको विकार आनी पायो निरवान थान जाको महिमान असमान सम धारिके. ॥ १११ ॥

॥ आतमासिद्धसम कथन ॥

॥ दोहा ॥

अष्ट कर्म वन दाहिके, भये सिद्ध जिनचंद;
ता सम जो आपा लखे, ताको वंदे चंद. ॥ ११२ ॥

॥ मोक्षपरंपरा कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

प्रथम ग्रंथि भेदी करी उपसम भाव धरि क्षायक अंकुर भयो मिथ्या डर गयो हैं, उने कीने है कषाय ज्ञान गुन दोनु पाय बढ्यो गुनथान ध्यान श्रेणिथान आयो है; सूक्ष्मसंपराय-चीन छीन मोह लयलीन छीन कीन कर्मतीन केवलको पायो हैं, ज्ञानादि त्रिगुन राय देवचंद पद पाय ध्यान ध्याता ध्येय-भेद मूरते गवायो हैं. ॥ ११३ ॥

॥ पुनःमोक्षपरंपरा कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

सूक्ष्मक्रिय छिन्नक्रिय ध्यानक्रिय ज्ञान पीय लिय निरवान

पद आपनीजो आधि है, अष्ट कष्ट नष्ट भये इष्ट अष्ट गुन गहे वहे महानंदको अनादिको जे माथ है; जामे लोकरीति नाहि हार जीति भीति नाहि मीत प्रीत नीत नांहि ज्ञानको समाध है, अजोगी अभोगी योगी अवेदि अछेदवेदी अलेसी अभेदी यैसो देवचंदनाथ हे. ॥ ११४ ॥

॥ आत्मशुद्धता कथन ॥

॥ सवैया इक्तीसा ॥

पीछे कर्मके प्रपच रंच न अरुचि संच वंचक सभाव पंच सुद्धरूप भयो है, परभाव सागरमें भ्रमजके वेगवेग वुडो चिर कालको सभाव सोत तरयोहे; दीप्त करके प्रकर ना करी दलित तम अष्ट कर्म मल दलि आठ गुन वरयो हैं, ऐसो जो परम जोति सदा काल जयवंत तमतम खंडवेकुं रविसम धरयो हैं. ॥ ११५ ॥

॥ आत्मगुण वरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

करतार भोगतार एमे जे विकार भार अपहार करि वर थिरभाव लह्यो हे, गुन घन घाती च्यार ताको बंध तोरिडारि अमंद आनंद कंद मोदवृंद वरयो है; शुद्ध सांत है अनंत अहत्तनिचित्त वृत्ति परज्योति सत्य नित्य सत्यरूप रह्यो हैं, सब ज्ञेय मेया मेय ज्ञेय करि हेय हरि शुद्ध बुद्ध ब्रह्म मेरो सदाकाल कह्यो हैं. ॥ ११६ ॥

॥ आतमरूप ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

मुक्तिको माग सुराग विरागको दर्शन ज्ञान चरित्र त्रयी है,
तन्मय आतम आतमवेदिके मोह उछेदन रीति लयी है;

आतमज्ञान कलाकलिवै जसु निर्मल संवर बुद्धि भयी है,
सोनरको कछु कर्म करे सोतो पूरवकर्म उदीक मयी हैं. ॥११७॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

करताहुं भोगताहुं निरंतर कारजको एसो अगन्यान जेतो कालमौंकौ रह्यो है, तेतो काल सुद्ध अनुभव न लहतु विनुं अगनानि जन मन भमनकुं गह्यौ हैं; अब सरवज्ञ जिन वचन अमृत पीन अति रसवंत संत संत रस लह्यौ हैं, चिरकाल पान करि सुधितसु धुति धरि अजर अमर परब्रह्म पद लह्यौ हैं ॥ ११८ ॥

॥ पुनः सवैया तेवीसा ॥

आतमरूपके जानपने विनुं चेतन यौं करतार कहिजे,
ताहीके जानपने जिन ज्ञानमें यामें अकारक भाव लहिजैं;
याहिते रागरुद्वेष उदैकृत मोवित नांहि चितैयुं धरिजै,
भिन्न रह्यो निज लेखे जु मानव सो नव अभावमांहि न खीजे. ११९

॥ पुनः आत्मस्वरूप ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जांलगी अविद्या जन्य द्दढतम अंधतम ताहिमे तिमित भयो निज जोति हरिकै, तां लगि विभाव एष राग द्वेष रेषपरि आतमीक बुद्धि भयी एकभाव वरिकैं; अब चिरकाल गिर नदीकै उपल जैसे भेदज्ञान गुन लह्यो तिकरन करिकै, तव परीति हर आप पूर्णब्रह्मसेती विच्युति विकृति ध्रुव भयौ गुनवीरकें ॥ १२० ॥

॥ आतमाहंकार कथन ॥

अडिलःमें अंज्ञानम सुतरह्यौ परध्यानमें जाग्यो जान्यौ तत्व

तोहि गुनमानमें, ज्युं दरिद्र लही द्रव्य अधृति चित्तमें करै तैसे असंत ज्ञानपाइ ज्ञानसुख जन वरे ॥ १२१ ॥

॥ आतममहिमा कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

गहन अतीव जीव विशदहैं अनहद पर असपृष्ट स्पष्ट निरंतर सिष्ट है, प्रकटित आत्मभूत विभूति अनंत सात परकी विभूतिसेंति प्रीति जाकी नष्ट हैं; जाहीको सवाद स्यादवादके प्रमोद होत अगणित महाभोग संपदा प्रविष्ट हे, बुद्धिके निधान निरवान थान पामिवेको सावधान होत नित ऐसो ब्रह्म इष्ट हे ॥ १२२ ॥

॥ पुनः आत्ममहिमा कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

महाव्रत तप ताप यम नियमादि जाप प्राणायाम योगके अभ्यासा जे प्रबल हे, क्षुधा तृषा शीत चीति सोवनादि परिसह अनुलोम प्रतिलोममाहि नाहि चलै हे; इत्यादिक क्रिया गुन जाकै जानपने विनु नाथहीन सैना जैसें अति निरबल हैं, जाके जाने देखे सब जानो देख्यो जगद्रव्य ऐसौ परब्रह्म मेरो ध्यानसु सफल है ॥ १२३ ॥

॥ चिदानंद उपादेय कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

सतत अनंत तेजपुंजसो विराजमान दलित अज्ञान मल अचल अमल है, सोई तत्त्व गहो भैया रहे भवकीच वीच तोभी याते भिन्न जैसे पंकमे कमल है; इंद्र चंद्र चक्रवर्ति

पद सुखको सवाद जाके सुधा स्वाद आगे मानु क्षार जल है,
ऐसे परमातमामें सोहु सोऽहं ध्यानगम अगम परम ब्रह्म ध्यानमे
सकल है ॥ १२४ ॥

॥ अशुद्धजीव कथन बहिरात्मीकि निंदा ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

ग्रंथ भने सब सासनके अभिमान धरै विचरै जगजेतें,
आपकौं पंडित मुख्य कहाय करै नित्य वाद विवाद अचेतें;
आतम बुद्धि तजे न शरीरसौं क्या पढिके गुनके समजेते,
पाठ पढ्यो गुन कारन नां कछु रामहिराम जपंत ज्युं तोते. ॥१२५॥

॥ जिनधर्मप्राप्ति कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

में बहुकाल अज्ञानकी चालमै आपके रूपको भाव भुलानो,
सो निजरूप लह्यो सुलहो अब मै सबमै भवसौं सुल जानो;
चेतनवंत सदा अति उज्जल संत अनंत सुज्ञानी मिलानो,
ज्ञानकौ बीज अबीज निरंजन सज्जन श्रीजिनधर्म पीछानो. ॥१२६॥

॥ आत्मपाठ स्तुति कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा. ॥

आतमसुं मथि आतमज्ञानको भानु उद्योत ज्युं जोति वढे हैं,
वासको काठधठात ज्युं आपमे आपसु ज्युं दवदावकढे हैं;
याहिते आतम मग्नमती विरति सुव्रति शिवमाग चढेहैं,
आत्मज्ञान विना सरनौन न साधकआतमपाठ पढे है. ॥१२७॥

॥ चौपाई ॥

जेसे रज्जु सरप भ्रम माने, त्युं अजान मिथ्यामति ठाने;
देहबुद्धिको आतम विचारे, याते भव भ्रमहेतु पसारे. ॥१२८॥

॥ अज्ञानविलास कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

मे बहु वेर अज्ञानके फेरमें औरकी ओरति हेरन धायो,
वध्यो भवलोह विमोहकी निंदमे ज्ञायक दृष्टिको तेज दबायो;
आतम बुद्धि भइ परपै डरपै अरपै निज मित कहायो,
चंद कहे गुणचंद लहै विनु काल अनंत भमत गमायो.॥१२९॥

॥ ज्ञानजागृतदशा ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

याहीके पीछान्यो अतिअतिसे चेतनसत्ति जागे जामे तिन-लोक अलोक समाने है, याहिके सरूप जान्यो जाने खट भाव सब एतो खट भावके पिछानगु कहाने है; अतिहीनि सतिमति शास्त्रके चिचित्तताइ जाके जानपने विनुं श्रमरूप ठानेहे, जैसे कन विनुं तुस खडनहे निकारन तैसे ज्ञान विनुं सब काज निफलाने है. ॥ १३० ॥

॥ पुन. ॥

जाके अनुभवसेती भागी भव भव भीत निज परतीत सो अनित नित जागी है, जैसे भानके उद्योत सब जग ज्योति होत भासे घट पट भाव अंधकार भागे है; तैसे जाके तेज आगे राग द्वेष ग्रथी भागे लागे न करम नव शिव जाके आगे है, परम आनदकंद देवचंद सुखकर धरमी व्रती मुनीस जाके ध्यान लागे है.

॥ दोहा ॥

आतम आतमध्यान गत, न भजे और अपाय;
जैसे पावक काठ विनुं, सहजे उपशम थाय. ॥१३१॥

॥ पुनः आत्मगुन कथन ॥

॥ छप्पय ॥

परम सुखी श्रीथान नाहि को दुजो याते, निरभय पद ए मुख्य और सब जनकी वाते, यहे संतरस ज्ञान मोष मारगभी एही, कर्मवृत्तके छेद यहै फरसीज अवेही, इह ज्ञानवान भगवान वर ज्ञानादिक गुन त्रय वहै, यह भजो रमो जानो इहे सर्वमां इह दुरगम इहे, ॥ १३२ ॥

॥ अथ चेतनगुन कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

ज्ञान अज्ञानके हेतु भए तुम आपतही भमते भवमांही,
कारक बुद्धि भई परसो तरसो चित्तमें सुख संपती पाही;
आपको जानीके ध्यानमें आनिके सुद्ध मुनि निरवानको जाही,
आपको त्रायक आपही चेतन चेतनता गुनज्ञानको चाही. ॥१३३॥
भोग संजोगजुं भोगके गेह ते नेह तेयाभव तै विरचे जे,
भावही आतम आतमते वर आतमज्ञान कला अरचे जे;
मोहकी जेलको ठेलके ते नर या भवके सुख नां परचेते,
सम्यक ध्यानहियो निज आनिके कर्मको भर्म सही खरचेते॥१३४॥
रोग विना जन तिक्त कसाय ज्युं ओषधस्युं चित्त प्रीति उतारे,
आतुरता विनुं चातुर ते नर देहकी सार करे दिनसारे,
दर्शन मोह विना चिन मुरति चेतन चेतनसुख संभारे,
भोग संयोगको जोग करे नही साधु सदाचित्त ज्ञानको धारे॥१३५॥

॥ पुनः चेतनगुन कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

अंतर तत्त्व विलोकी कीया जीम भानुं उदै सब वस्तु प्रकाशे,
रहे जगमै जग रीति धरे नहीं आप गुने करी उज्जल भासै;

मोहकी निंदमें घूमित चेतन देखत स्वप्न भवादि उलासै,
आपमे आप समाय रहे ध्रुव शुद्ध निरंजन भाव अभ्यासै. ॥१३६॥

॥ ज्ञानविलास कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

ज्ञान विलास अभ्यास कीया विनुं कर्मको भर्म सदीउ वधारै.
इंद्रीय पंच प्रपंच करै चित या रस प्यार अपार संभारै;
फीरै भवमैं नव वेस करै निव भावीत कर्म उपाधि ले लारै,
सो निज थान वसे जव देव ए हर्ष प्रकर्ष किनै नव धारै.॥१३७॥

॥ पुनः परमात्म वरणन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ज्याकी ज्ञान ज्योतिहीसुं फुरत परम रम सरस य रस विनु जामे रस ए नहे, लोकालोक लोकनकु अमल विमल तेज योगादिक क्रिया विनुं ज्याकौ आराधन है; मूलसे दलित अति मोह गलके पटल अखिल विज्ञानवंत संत गुनघन है, एसौ देवचंद इंद त्रिगुण आनंदकद ताहीसौ प्रतिति प्रीति थीर मेरे मन है ॥ १३८ ॥

॥ सम्यक्आत्मवर्णनं ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

जाके उर अंतरमें राग दोष मोह नांहि आपमे समाय रहै आपही अनंत है, और द्रव्यसु न प्यार समें सार ध्यान धार धरीके सभार सार संत रम सत है; टंक सौ उकेर्यो जैसो रतन अभंग जोति तैसो परब्रह्म निज ज्ञानसो महत हैं निरद्वंद है अवंध चेतनाको खध सत अमलान ज्ञानगुन सनमंघवंत है ॥ १३९ ॥

॥ आत्माअबंध कथन ॥

॥ दोहा ॥

जे थीर आतम ध्यानमे, आतम ज्ञानविलीन;
जे निजगुन थिरता लहै, गहे न कर्म नवीन. ॥ १४० ॥
नव नव भव तरु छेदको, यह शीत शास्त्र उदार;
ध्यान पवित्र मुनिसकौ, रहै ध्येय गुन धार. ॥ १४१ ॥
दुरगम पद पथ अगम ए, लहि ऐसो निज योग;
वृथा बाह्य करनी करे, दंडे तीनो योग. ॥ १४२ ॥

॥ करनी सरूप कथन ॥

॥ दोहा ॥

करनी निजगुन कतरनी, धरनी दोष अथांहि;
दुखमै या भवसमुद्रकी, तरनी वरनी नाही. ॥ १४३ ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

या करनी वरनी परनितमे मोह महीपतिकी तरनी है,
या करनी धरनी तलकी फीर नीकर नीपर नीसरनी है;
या करनी हरनी गुनकी अर नीठुर संवरकी टरनी है;
या करनी करे निच सभावको कोह महादवकी अरनी है.॥१४४॥

॥ दोहा ॥

करनी करता करमकी, इनमे चेतन दीन;
जब चेतन समता मिले, तबे लहे सुखपीन. ॥ १४५ ॥

॥ परमात्मास्तुति ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

परम निधान हैकि निरवान थान हैकि असमान ज्ञानवान सदा अमलान है, खंध निरधुंध निरबंध कर्म हीन पीन छीन-

मसकीनभाव भावसो अदीन है; चितमे चेतन ग्यान दरसन भासमान अनुभव ज्ञान जान अनगुन हीन है, अखर त्रिगुण इंद देवचंद महानंद परम अमृत सतपद लय लीनहे. ॥१४६॥

॥ कुंडलीयो ॥

ऐसो चेतन ब्रह्मवर, समता नारि वियोग, चित्त थिरता न लहे कहु, पावहि बहुविधि सोग, पावहि बहुविधि सोग; जन्म मरणादिखेद अति, भव भवभ्रमण भमत, जहर आहरज्यु विरह चित्त क्षणभंगुर गुन हीन, ग्रह्यो आतम करण तन, निज प्रिय विनु बहु भर्म. ब्रह्मवर ऐसो चेतन ॥ १४७ ॥

॥ आत्म समता वियोग ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

मित्त विहीनमें दीन भयो अति मो चीतसौ थिरता न लहे है,
यह जगमे दीन राती निरंतर अंतरते थिरता न गहे है;
आतम मीतके सुख वियोगसु दुख परयो सुखकुज चहे हैं,
सो सुख तो निज ज्ञानके आगम जो कबहु परकुं न वहे है. ॥१४८॥

॥ पुनः आत्माके विशुद्धगुन कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

आथिरता थिरता समतालही आरके ठोरतो नाहि रुलेंगे,
चित्त प्रवृतिको अति निवृत्तमे या गुन ज्ञानमे ठीक धूलेंगे;
ज्यों लगे चेतनना ग्रुजमे थिर ता लगि या गुन त्रय न भूलेगे,
देवकहे निजदेवकी सेव सों या भवदेवको दूर ठिलेंगे. ॥१४९॥

॥ चेतनता समताप्रीति कथन ॥

॥ दोहा ॥

चेतन चेतनता सहित, परम धरम गुनथान;
पावे वर निरवान पद, समता प्रीति निधान ॥१५०॥

॥ अथ कवि निज लघुताइ कथन ॥

॥ सवैया तेवीसा ॥

मे जिनआगमते जु उलंघिके जो कछु वात विरुद्ध वखानी,
सो तुम सोधिके भाखहु पंडित पंडित जाहीकी मोह नीसांनीः
गहो गुनभी सुनिके तुम सज्जन शास्त्रको अर्थसु तत्त्व पीछानी,
बोधि सुबोधक ग्रंथ गहो बुध डारिके संपति एह विरानी ॥१५१॥

॥ अथ पूर्व कविसरके गुन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

पाठक सुपाठहीके निवारन आठहीके हंसराज राजपति नामे हंसराजहे, ताके कीनेहेसलस शत अडवीस ज्युत ज्ञानहीके जान अरु दंसनके राज है; तत्त्वके पीछान जान ताहिको निधान मान विमल अमल सब ग्रंथ शिर ताज है, आपा पर भेद कर धरब्रह्मभाव भर शुद्ध सरधान धर नर ताके काज है ॥१५२॥

॥ दोहा ॥

हिंदुधर्म वीकानयर, कीनी सुख चौमास;
तिहां ए निज ज्ञानमे, कीनो ग्रंथ अभ्यास. ॥ १५३ ॥

॥ अथ कवीसरके गुरुके नाम कथन ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

वर्त्तमान काल थीत आगम सकल वीत जगमे प्रधान ज्ञान वान सब कहै हैं, जिनवर धर्मपरि जाकी परतीति थिर और मत वात चित मांहि नाहि गहै है; जिनदत्तसुरीवर कही जो क्रियाप्रवर खरतर खरतर सुद्ध रीति वहै है; पुण्यके प्रधान ध्यान सागर सुमतिहीके साधुरंग साधुरंग राजसारलहे है ॥ १५४ ॥

॥ दोहा ॥

सब पाठक सिर सेहरो, राजसार गुनवान,
विचरे आरीजदेशमें, भवि जन छत्र समान ॥१५५॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

ताके शीश है विनीत परभीत सौ वितीत साधुरीत नीत धारी गुन अभिराम है, आत्मज्ञान धर्मधर वाचक सिधतवर अतिउपसंत चित्त ज्ञान धर्मनाम है, ताके शिष्य राजहंस राजहंस मानसर सुप्रधान उद्यमादि गुन गन धाम हे, अंतेवासी देवचंद कीनो ए गरंथ वर अपनो चेतन राम खेलिवेंकु ठाम है ॥१५६॥

॥ दोहा ॥

कीनो यहा महाय अति, दुर्गदास शुभचित्त,
समजावन निज मित्तकों, कीनो ग्रंथ पवित्त ॥१५७॥

॥ अथ शास्त्रके श्रोता तिनके नाम ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

आतम सभाव मिठु मल्लकों पहारी दिठो भेरुदाम मेउदास मुलचंद जान है, ज्ञानलेख राजनर पारम स्वभाव धर सोमजीव तत्त्वपरि जाकी सरधान है, ज्ञानादि त्रिगुनमत अध्यातम ध्यानमंत मुलतान थांन वासी श्रावक सुजान हे, ताकी धर्म प्रीति मन आनिकें गरथ कीनो गुनपरजाय धर नामे द्रव्यज्ञान है ॥१५८॥

॥ दोहा ॥

अध्यातमसेली मरम, जे मानत मो जैन,
ते वाचेंगे ग्रंथ यह, ज्ञानामृत रस लैन. ॥ १५९ ॥

गुन लच्छन पहिचानिकैं, हेयवस्तु कर हेय;
चिदानंद चिन्मय अगम, शुद्ध ब्रह्म आदेय. ॥१६०॥
परमातम नय सुद्ध धरि, शिवमारग एहीज;
यहैं मोहमैं भव भमैं, यहै ग्रंथको बीज. ॥१६१॥

॥ संवत् कथन ॥

॥ दोहा ॥

विक्रम संवतमान यह, भय लेश्याके भेद;
सुद्ध संयम अनुमोदिकै, करि आश्रवको छेद १७६७ ॥१६२॥
ता दिन या पोथी रची, वध्यों अधिक संतोष;
सुभ वासर पूरन थई, प्रथम जिनेसर मोष. ॥ १६३ ॥

॥ अथ ग्रंथ महिमा ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

गुनको निधान है कि मानो निरवान है कि साची जिनवान यामे अधिक उदार है, मानी मद भंजन है मिथ्या मतिमंजन है ज्ञानदृष्टि अंजन शिलाका सुखकारहे; रामको रमन है कि दुष्टको दमन हैकि परको वमन है अपार पारावार है, संतको सवाद है कि शुद्ध स्यादवाद यामे औरको विषादनाहि ज्ञानि उरहार है. ॥ १६४ ॥

॥ दोहा ॥

स्यादवादयुत द्रव्य षट्, जहां वखाने ठीक;
नामे द्रव्य प्रकासयौ, ज्ञानग्रंथ तहकीक. ॥ १६५ ॥

॥ पुनः ग्रंथमहिमा ॥

॥ सवैया इकतीसा ॥

परसु प्रतीत नाहि पुण्य पाप भीति नांहि रागदोष रिति

नांहि आतम विलास है, साधक कौ सिद्धि है कि बुझवै कु बुद्धि है की रनिवैकौ रिद्धि ज्ञान भानको विकास है, सजन सुहाय दुज चंद ज्युं चढाव है कि उपसमभाव थामै अधिक उल्लास है, अन्यमतसौ अफंद वंदतहे देवचद ऐसे जैन आगममें द्रव्यको प्रकाश है ॥ १६६ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान ध्यान सुखथान यह, यहै सुगतिको पथ,
जीवद्वारन् पूरनभयै पुरन भयो गरंथ ॥ १६७ ॥

॥ इति श्री देवचंद्रमुनि विरचितं द्रव्यप्रकाश (व्रज)
भाषाग्रंथे तृतीयं जीवद्वारं समाप्तम् ॥



॥ ॐ ॥

श्रीमद् देवचंद्रजी कृत

॥ अध्यात्मगीता ॥



राग ॥ ढाल भमरगीतानि ॥

प्रणमिए विश्व हित जैन वाणी ।
महानंद तरु सिंचवामृत पाणी ॥
महा मोहपुर भेदवा वज्रपाणी ।
गहन भवफंद छेदन कृपाणी ॥ १ ॥

॥ चाल ॥

द्रव्य अनंत प्रकाशक भासक तत्त्व स्वरूप ।
आतम तत्त्व विबोधक शोधक सच्चिद्रूप ॥
नय निक्षेप प्रमाणे जाणे वस्तु समस्त ।
त्रिकरण जोगे प्रणमुं जैनागम सुप्रशस्त ॥ २ ॥

जिणे आतमा शुद्धताये पिछाण्यो ।
तिणे लोक अलोकनो भाव जाण्यो ॥
आतम रमणि मुनि जग विदीता ।
उपदिसी तिणे अध्यात्म गीता ॥ ३ ॥

द्रव्य सर्वना भावनो जाणग पासग एह ।
ज्ञाता कर्त्ता भोक्ता रमता परिणति गेह ॥
ग्राहक रक्षक व्यापक धारक धर्म समूह ।
दान लाभ बल भोग उपभोगतणो जे व्यूह ॥ ४ ॥

संग्रहे एक आया वखाण्यो ।
नैगमे अंशथी जे प्रमाण्यो ॥

दुविध व्यवहार नय वस्तु वीहचे ।
अशुद्ध वलि शुद्ध भासन प्रपंचे ॥ ५ ॥
अशुद्धपणे पणसय तेसठी भेद प्रमाण ।
उदय विभेदे द्रव्यना भेद अनंत कहाण ॥
शुद्धपणे चेतनता प्रगटे जीवविभिन्न ।
क्षयोपशमिक असंख्य क्षायिक एक अनुन्न ॥ ६ ॥
नामथी जीव चेतन प्रबुद्ध ।
क्षेत्रथी असंख्य देशी विशुद्ध ॥
द्रव्ये स्वगुण पर्याय पिंड ।
नित्य एकत्व सहजे अखंड ॥ ७ ॥
ऋजुसुये विकल्प परिणामे जीव स्वभाव ।
वर्तमान परिणितमय व्यक्ते ग्राहक भाव ॥
शब्दनये निज सत्ता जोतो इहतो धर्म ।
शद्ध अरूपी चेतन अणग्रहतो नव कर्म ॥ ८ ॥
इणिपरे शुद्ध सिद्धात्म रूपी ।
मुक्त परशक्ति व्यक्त अरूपी ॥
समकिति देश यति सर्वविरति ।
धरे साध्यरूपे सदा तत्त्व प्रीति ॥ ९ ॥
समभिरूढ नये निरावरणि ज्ञानादिक गुण मुख्य ।
क्षायिक अनंत चतुष्टयी भोगी मुग्ध अलक्ष्य ॥
एवंभूते निरमल सकल स्वधर्म्म प्रकाश ।
पूरण पर्याय प्रगटे पूरण शक्ति विलास ॥ १० ॥
एम नय भंग मंगे सनूरो ।
साधना सिद्धतारूप पूरो ॥
साधक भाव त्यां लगी अधूरो ।
साध्य सिद्धे नहि हेतु शूरो ॥ ११ ॥

काळ अनादि अतीत अनंते जे पररक्त ।
संगांगि परिणामे वर्त्ते मोहासक्त ॥
पुद्गल भोगे रिज्यो धारे पुद्गल खंध ।
परकर्त्ता परिणामे बांधे कर्मना बंध ॥ १२ ॥

बंधक वीर्यकरणे उदेरे ।
विपाकि प्रकृति भोगवे दल विखेरे ॥
कर्म उदयागता स्वगुण रोके ।
गुण विना जीव भवोभव ढोके ॥ १३ ॥

आतम गुण आवरणे न ग्रहे आतम धर्म ।
ग्राहक शक्तिप्रयोगे जोडे पुद्गल शर्म्म ॥
परलाभे परभोगने योगे थाये पर कर्त्तार ।
एह अनादि प्रवर्त्ते वाधे पर विस्तार ॥ १४ ॥

एम उपयोग वीर्यादि लब्धि ।
परभाव रंगी करे कर्म वृद्धि ॥
परदयादिक यदा सुह विकल्पे ।
तदा पुण्य कर्म्मतणो बंध कल्पे ॥ १५ ॥

तेहीज हिंसादिक द्रव्याश्रव करतो चंचलचित्त ।
कटुक विपाकि चेतन मेले कर्म विचित्त ॥
आतम गुणने हणतो हिंसक भावे थाय ।
आतम धर्म्मनो रक्षक भाव अहिंस कहाय ॥ १६ ॥

आत्मगुण रक्षणा तेह धर्म ।
स्वगुण विध्वंसणा ते अधर्म्म ॥
भाव अध्यातम अनुगत प्रवृत्ति ।
तेहथी होय संसार छित्ति ॥ १७ ॥

एह प्रबोधना कारण तारण सद्गुरु संग ।
श्रुत उपयोगी चरणानंदि करि गुरुरंग ॥
आतम तत्त्वालंबि रमता आतम राम ।
शुद्ध स्वरूपने भोगे योगे जसु विश्राम ॥ १८ ॥
सद्गुरु योगथी बहुल जीव ।
कोइ वली सहजथी थइ सजीव ॥
आत्म शक्ति करी गंठी भेदी ।
भेद ज्ञानी थयो आत्मवेदी ॥ १६ ॥
द्रव्य गुण पर्याय अनंतनी थइ परतीत ।
जाण्यो आतम कर्त्ता भोक्ता गइ परभीत ॥
श्रद्धा योगे उपन्यो भासन सुनये सत्य ।
साध्यालंबी चेतना वलगि आतम तत्त्व ॥ २० ॥
इंद्र चंद्रादि पद रोग जाण्यो ।
शुद्ध निज शुद्धता धन पिछाण्यो ॥
आत्म धन अन्य आपे न चोरे ।
कोण जग दीन वळी कोण जोरे ॥ २१ ॥
आतम सर्व समान निधान महा सुख कंद ।
सिद्धतणा साधर्म्मी सत्ताये गुणवृंद ॥
जेह स्वजाति तेहथी कोण करे वध बंध ।
प्रगटयो भाव अहिंसक जाणे शुद्ध प्रबंध ॥ २२ ॥
ज्ञाननी तिक्ष्णता चरण तेह ।
ज्ञान एकत्त्वता ध्यान गेह ॥
आत्म तादात्म्यता पूर्ण भावे ।
तदा निर्मलानंद संपूर्ण पावे ॥ २३ ॥
चेतन अस्तिभावमें जेह न भासे भाव ।
तेहथी भिन्न अरोचक रोचक आत्म स्वभाव ॥

समकितभावे भावे आतम शक्ति अनंत ।
कर्म नाशनो चिंतन नाणे ते मतिमंत ॥ २४ ॥
स्वगुण चिंतनरसे बुद्धि घाले ।
आतमसत्ता भणी जे निहाले ॥
शुद्ध स्याद्वाद पद जे संभाले ।
परघरे तेह मति केम वाले ॥ २५ ॥
पुण्य पाप बे पुद्गल दल भासे परभाव ।
परभावे परसंगत पामे दुष्ट विभाव ॥
ते माटे निज भोगी योगीसर सुप्रसन्न ।
देव नरक तृण मणि सम भासे जेहने मन्न ॥ २६ ॥
तेह समता रसी तत्त्व साधे ।
निश्चलानंद अनुभव आराधे ।
तीव्र घनघाति निज कर्म तोडे ।
संधि पडिलेहिने ते विछोडे ॥ २७ ॥
सम्यक् रत्नत्रयी रस राच्यो चेतन राय ।
ज्ञान क्रिया चक्रे चकचूरे सर्व अपाय ॥
कारक चक्र स्वभावथी साधे पूरण साध्य ।
करता कारण कारज एक थया निराबाध ॥ २८ ॥
स्वगुण आयुधथकी कर्म चूरे ।
असंख्यात गुणी निर्जरा तेह पूरे ॥
टळे आवरणथी गुण विकासे ।
साधनाशक्ति तिम तिम प्रकाशे ॥ २९ ॥
प्रगट्या आतम धर्म थया सवि साधन रीत ।
बाधक भाव ग्रहणता भागी जागी नित ॥
उदय उदीरणा ते पण पूरव निर्जरा काज ।
अनाभिसंधि बंधकता निरस आतमराज ॥ ३० ॥

देशपति जब थयो नीति रंगी ।
तदा कुण थाय कुनय चाल संगी ॥
यदा आतमा आत्मभावे रमाव्यो ।
तदा बाधक भाव दूरे गमाव्यो ॥ ३१ ॥
सहेज क्षमा गुण शक्तिथी छेद्यो क्रोध सुभट्ट ।
मार्दव भाव प्रभावथी भेद्यो मान मरट्ट ॥
माया आर्जव योगे लोभ ते निस्पृह भाव ।
मोह महा भट ध्वंसे ध्वंस्यो सर्व विभाव ॥ ३२ ॥
इम स्वभाविक थयो आत्मवीर ।
भोगवे आत्म संपद सुधीर ॥
जेह उदयागता प्रकृति वळगी ।
अव्यापक थको खेरवे तेह अळगी ॥ ३३ ॥
धर्मध्यान इक तानमें ध्यावे अरिहा सिद्ध ।
ते परिणतिथी प्रगटी तात्त्विक सहज समृद्ध ॥
स्वस्वरूप एकत्वे तन्मय गुण पर्याय ।
ध्याने ध्यातां निर्मोहीने विकल्प जाय ॥ ३४ ॥
यदा निर्विकल्पी थयो शुद्ध ब्रह्म ।
तदा अनुभवे शुद्ध आनंद शर्म ॥
भेद रत्नत्रयी तिक्ष्णताये ।
अभेद रत्न त्रयीमें समाये ॥ ३५ ॥
दर्शन ज्ञान चरण गुण सम्यग् एक एकना हेतु ।
स्वस्व हेतु थया समकाळे तेह अभेदता स्वेतु ॥
पूर्ण स्वजाति समाधि घनघाति दल छिन्न ।
क्षायिकभावे प्रगटे आतम धर्म विभिन्न ॥ ३६ ॥
पछे योग रुधि थयो ते अयोगी ।
भाव शैलेसता अचळ अभंगी ॥

पंच लघु अक्षरे कार्य कारी ।
भवोपग्रहीकर्म संतति विडारी ॥ ३७ ॥
समश्रेणे एक समये पहोता जे लोकांत ।
अफुसमाण गति निर्मळ चेतन भाव महांति ॥
चरम त्रिभाग विहीन प्रमाणे जसु अवगाह ।
आत्मप्रदेश अरूप अखंडानंद अबाह ॥ ३८ ॥
जिहां एक सिद्धात्म तिहां छे अनंता ।
अवन्ना अगंधा नहि फासमंता ॥
आत्मगुण पूर्णतावंत संता ।
निराबाध अत्यंतसुखास्वादवंता ॥ ३९ ॥
कर्त्ता कार्य कारण निज परिणामिक भाव ।
ज्ञाता ज्ञायक भोग्यभोग्यता शुद्ध स्वभाव ॥
ग्राहक रक्षक व्यापक तन्मयताए लीन ।
पूरण आत्मधर्म प्रकासरसे लयलीन ॥ ४० ॥
द्रव्यथी एक चेतन अलेशी ।
क्षेत्रथी जे असंख्य प्रदेशी ॥
उत्पाद वळी नाश ध्रुव काळ धर्म ।
शुद्ध उपयोग गुणभाव शर्म ॥ ४१ ॥
सादि अनंत अविनाशी अप्रयासी परिणाम ।
उपादान गुण तेहज कारण कारज धाम ॥
शुद्ध निक्षेप चतुष्टय जुत्तो रत्तो पूर्णानंद ।
केवल नाणी जाणे तेहना गुणनो छंद ॥ ४२ ॥
एहवि शुद्ध सिद्धता करण ईहा ।
इंद्रिय सुख थकी जे निरीहा ॥
पुद्गली भावना जे असंगी ।
ते मुनि शुद्ध परमार्थ रंगी ॥ ४३ ॥

स्याद्वाद आतम सत्ता रुचि समकित तेह ।
आतम धर्मनो भासन निर्मळ ज्ञानी जेह ॥
आतम रमणी चरणी ध्यानी आतम लीन ।
आतम धर्मे रम्यो तेणे भव्य सदा सुख पीन ॥ ४४ ॥
अहो भव्य तुम्हें ओलखो जैन धर्म ।
जिणे पामीयें शुद्ध अध्यात्म मर्म ॥
अल्पकाळे टळे दुष्ट कर्म ।
पामीयें सोय आनंद शर्म ॥ ४५ ॥
नय निक्षेप प्रमाणे जाणे जीवाऽजीव ।
स्वपर विवेचन करतां थाये लाभ सदीव ॥
निश्चय ने व्यवहारे विचरे जे मुनिराज ।
भवसागरना तारण निर्भय तेज जिहाज ॥ ४६ ॥
वस्तु तत्त्वे रम्या ते निग्रंथ ।
तत्त्व अभ्यास तिहां साधु पंथ ॥
तिणे गीतार्थ चरणे रहिजे ।
शुद्ध सिद्धांत रस तो लहिजे ॥ ४७ ॥
श्रुत अभ्यासी चोमासि वासी लिंबडी ठाम ।
शासन रागी सोभागी श्रावकनां बहु धाम ॥
खरतरगच्छ पाठक श्री दीपचंद्र सुपसाय ।
देवचंद्र निज हरखे गायो आतमराय ॥ ४८ ॥
आत्मगुण रमण करवा अभ्यासे ।
शुद्ध सत्ता रसीने उलासे ॥
देवचंद्रे रची अध्यात्मगीता ।
आत्म रमणि मुनि सुप्रतिता ॥ ४९ ॥

॥ इति श्री अध्यात्मगीता देवचंद्रजीकृता
॥ संपूर्णा शुभं भवतु ॥

श्रीमद् देवचंद्रजीकृत स्नात्रपूजा विधीसहित.

प्रथम निस्सहीपूर्वक श्रीदेरासरमध्यें आवी अंग शुद्ध करी, नवीन वस्त्र पहेरी, स्वभालतिलक करी, बाजोठनी स्थापना करी, ते उपर बाजोठ मांडी, स्नात्रपीठ उपर थालनी स्थापना करवी. ते उपर तंदुलनी ढगली करवी ॥ तेनी उपर रूपानाणुं तथा नालीयेर धरीनें पछी स्नात्रीयायें पोताने हाथे मौलीसूत्र बांधवुं, तथा बीजा कलश प्रमुख स्थानकें मौली बंधन करी, कलशोने धूप दइ, दुध, दधि, घृत, जल तथा शर्करा, एँ पंचामृतथी कलश भरी राखवा. पछी मुखकोश बांधी मूल नायकजी आगल आवी नमस्कार करी अने धूपधाणुं हाथमां लइ धूप उखेववो ॥ ते समये मुखथी धूपावलीनी गाथा कहेवी, ते आ प्रमाणेः——

असुरिंदसुरिंदाणं, किन्नर गंधव्व चंद सूराणं ॥ विज्जाहरा सुराणं, सज्जोगा सिद्धाण सिद्धाणं ।' १ ॥ मुणिय परमत्थ वित्थर, गियत्थ विविह तव सोसियं गाणं ॥ सिद्धिवहू निम्भरडुं, ठियाणं जोगीसराणं च ॥ २ ॥ जं पूयाय भगवओ, तित्थयरा राग रोस तम रहिया ॥ विणय पणएण तेसिं, समुद्धूओ मे इमे धूओ ॥ ३ ॥ तित्थंकर पडिमाणं, कंचण मणिरयण विद्दुममयाणं ॥ तिहुयण विभूसगाणं, सासय सुरनर कयाणं च ॥ ४ ॥ सिद्धाण सूरि पाठग, साहूणं झाण जोग निरयाणं ॥ सुयदेवय माईणं, समुद्धुओ मे इमे धूओ ॥ ५ ॥

ए गाथाओ कह्या पछी प्रथम अक्षतनें धोइ तेओने केशर तथा चंदन लगाडवुं, तथा पुष्पोने पण जलथी शुद्ध करी राखवां, तदनंतर ते अक्षत तथा फुलनी कुसुमांजलि हाथमां लइ, उभा थइने " नमो अरिहंताणं, नमोऽर्हत्सिद्धा० " ॥ एम पाठ कहेवो अने पछी बे श्लोक पठन करवा, ते आ प्रमाणेः--

श्रीमत्पुण्यं पवित्रं कृतविपुलफलं मंगलं लक्ष्म लक्ष्म्याः, क्षुण्णारिष्टोपसर्गग्रहगतिविकृतिस्वप्नमुत्पातघाति ॥ संकेत कौतुकानां सकलसुखमुखं पर्व्व सर्वोत्सवानां, स्नात्रं पात्रं गुणानां गुरुगरिमगुरो वंचिता यै र्न दृष्टम् ॥ १ ॥ अशेषभवनांतराश्रितसमाजखेदक्षमो, नचापि रमणीयतामतिशयीत तस्यापरः ॥ प्रदेश इह मानतो निखिललोकसाधारणः, सुमेरुरिति तापिनः स्नपनपीठभावं गत ॥ २ ॥

एम कह्या पछी स्नात्रपीठ सन्मुख कुसुमांजलि अर्पण करवी, तदनंतर स्नापनपीठ पखाली लूंछीने कुंकुमनो स्वस्तिक करवो, धूप उखेववो, अने सर्व स्नात्रीयाओना हाथने धूपावली आपवी, पछी कर्पूर लगाडवो, अने एक नवकार कहीने स्नात्रपीठ उपर प्रतिमाजीनी स्थापना करवी, ते प्रतिमा प्रायः पंचतीर्थिक, अर्थपरकरसंयुक्त स्थापवी, तेना मुख आगल अक्षतोनी ढगली करवी, अने तेनी उपर पचामृतनो एक कलश मूकवो, पछी हाथमां कुसुमांजलि लइने " मुक्तालंकार विकार०" ए आर्या भणी कुसुमांजलि अर्पण करीने, प्रतिमाजीनां निर्माल्य उतारी प्रक्षालन करवुं, अंगलूहणाथी प्रमार्जिने धूप उखेववो अने केशर, चंदन, कर्पूर तथा कस्तुरी घसी ते पवित्रभाजनमां भरीने ते भाजन प्रतिमाजी आगळ धरवु वळी कुसुमांजलि हाथमां लइ उभा थइ " इच्छं णमो

अरिहंताणं० । नमोऽर्हत्सिद्धा० ॥" कहीने स्नात्रपूजानी पहेली पांखडी कहेवी, एम अनुक्रमे पांच पांखडी कही कुसुमांजलि पूर्ण करीने हाथमां चामर लइने तेने भगवंतनी उपर ढोलवो. । वस्तु ॥ "सयल जिनवरथी मांडीने यावत् वधाई वधाई थइ अतीव" सुधीनो पाठ कहे, ते पूर्ण थया पछी चैत्यवंदन करवुं. पछी शक्रस्तव कही जयवीयराय सुधी भणवुं. पछी हाथ धोई धूप कर्पूरादिक हाथने लगाडवां, त्यार पछी जे पूर्वे कलशोने धोई, धूप आपी कंठे मौलीसूत्र बांधी उपर स्वस्तिक करी तेओमां पंचामृत भरी, अचतोना ढगलाओ उपर धारण करी तेनी उपर अंगलूहणां ढांकी धूप उखेवी, तेओमांना मात्र बेज कलशोने आसपास जलधारा देइने राखवा पछी स्नात्रीयाना हाथमां स्वस्तिको करी सर्वे जणाए श्रेणीबद्ध उभा रहेवुं, अने प्रत्येक स्नात्रीयाए खमासमण देइ, पंचांग नमस्कार करवो, पछी प्रत्येक स्नात्रीयाए पोताना बे हाथमां कलशो लेवा, ते कलशधारक स्नात्रीयाए पोताना बन्ने हाथने विषे रहेला कलशने उत्तरासंग वस्त्रवडे ढांकी राखवा, अने पोते उभा छतां मुखथी "श्री तीर्थपतिनो कलश मज्जन०" इहांथी मांडीने संपूर्ण पूजा भणवी, त्यार पछी प्रतिमाजी उपर कलशो ढोली, पखाल करी अंगलूहणाथी मज्जन करी, केशर चंदनथी अर्चन करीने फूल चढाववां. पछी थालमां स्वस्तिक करी बिंबनी स्थापना करवी अने धूप करवो. ते समये आ प्रमाणे पाठ भणवो.

॥ अथ कलश ढालवा समयनुं स्तवन ॥

इंद्र कलश भर ढाले श्रीजिनपर ॥ इंद्र कलश० ॥ हाथो हाथ अमरगण आनत, खीर विमल जलधारे ॥ श्री

जिनपर० ॥ १ ॥ सुर वनिता मलि मंगल गावे, भावत भाव महारे ॥ श्री जिनपर० ॥ २ ॥ किन्नर अरु गंधर्व महोरग, निरत नीर नित्य सारे ॥ श्री जिनपर० ॥ ३ ॥ देव दुंदुभि धुनि गर्जत अति, शिरपर सुजस विथारे ॥ श्री जिनपर० ॥ ४ ॥ परमानंद जिनराज जगतपद, जगजीवन हितकारे ॥ श्री जिनपर० ॥ ५ ॥ इति कलश ढालवा समयनुं स्तवन ॥

॥ पछी रकेबीमां लूण पाणी लइने आरतिनी परें करवुं अने ते वखते मुखथकी गाथाओ कहेवी. ते आवी रीतेंः—

॥ अथ लूण उतारण गाथा ॥

उवहि पडिभग्ग पसरं, पयाहिणं मुणिवइ करेऊण ॥ पडइ सलूण त्तणलाज्जियं च लूणं हु अवहंमी ॥ १ ॥ दोहा ॥ पिरके विणु मुह जिणवरह, दीहर नयण सलूण ॥ न्हावइ गुरु मत्थर भरिय, जलणी पइस्सइ लूण ॥ २ ॥ लूणउतारिह जिण- वरह, तिन्नि पयाहिण देउ ॥ त्तडयड सद्द करंति यह, विज्ञा विज्ञा जलेण ॥ ३ ॥ गाथा ॥ ज जेणभिज्ज विज्जइ, जलेण तं तह निहत्थह सस्सइ ॥ जिणरूप मत्थरेणुव, फुट्टइ लूण तडयडस्स ॥ ४ ॥ ए गाथाओ कहीने लूणने अभिशरण करवु. पछी वळी प्रथमनी पेठें लूण पाणी लइने मुखथी आवी रीतें गाथाओ कहेवीः—

॥ दोहा ॥ सव्वं मुणिवइ जलविजड, तं तह भमलइ पास ॥ अहव कयतसुनिम्मलु, निग्गुण मुद्दि पयास ॥ १ ॥ जल आणेविणु जलणिह पासह, भर विकयंजलि भाविहिं पासह ॥ तिन्नि पयाहिण दिंतिय पासह, जिम जिउ छुट्टइं भव दुह पासह ॥ २ ॥ जल निम्मल कर कमलहि लेविणु, मुसइ भावहि मुणिवइ सेविणु ॥ पभणइ जिणवर तुह पइ

सरण, भय तुट्टइ लब्भइ सिद्धि गमणं ॥ ३ ॥ ए गाथाओ कही लूण पाणी उतारीने जल शरण करवुं, त्यार पछी माला लइ उभा रहिने आ प्रमाणे गाथाओ कहेवीः—

अथ पुष्पमाला पूजा गाथा ॥

॥ उभय पुज्जय भत्तस्स, नियठाणे संठियं कुणंतस्स ॥ जिणपासे भमिय जिणस्स, निय ठाणे संठियं तस्स (पाठांतरे) पित्थतुह हुयवहे पडणं ॥ १ ॥ सव्वो जिणप्पभावो, सरिसा सरिसेसु जेण रच्चंति ॥ सव्वन्नूण मपासे, जडस्स भमणं ण संकमणं ॥ २ ॥ अच्चंत दुक्करं विहु, हुअवह निवडेण जडेण कयं ॥ आणा सव्वन्नूणं, न कया सुकयत्थ मूलमणि ॥ ३ ॥ ए पाठ भणीने माला चढाववी, पछी हाथमां छुटां फुलो लेवां, ते वखत गाथाओ कहेवी, ते आ प्रमाणेः—

॥ अथ छूटां फूलपूजा गाथा ॥

॥ उसरओ जिणपुरओ, परिमल मिलिया उक्खिविह संगीया ॥ मुत्तामरेहिवो कुणओ, मरमल मिलिया उक्खिविहसं ॥ १ ॥ उवणेउ मंगलं वो, जिणाण मुहलालि जाव संचलिया ॥ तित्थ पव्वत्तण समए, तियसेवि मुक्का कुसुम वुट्ठी ॥ २ ॥ ए पाठ कहीने प्रभुनी आगल फुलो उछालवां, हवे आभरण तथा वस्त्रो लइने उभा छतां गाथाओ कहेवी, ते आ प्रमाणेंः—

॥ अथ वस्त्राभरण पूजा ॥

॥ श्लोकः ॥ शक्रोयथा जिनपतेः सुरशैलचूला, सिंहासनोपरि मितस्नपनाऽवसाने ॥ दध्यत्ततैः कुसुम चंदनगंधधूपैः, कृत्वार्चनं तु विदधाति सुवस्त्रपूजां, ॥ १ ॥ तद्वत् श्रावकवर्ग-

एप विधिनालंकारवस्त्रादिकां, पूजा तीर्थकृतां करोति सततं शक्त्यातिभक्त्याद्दतः ॥ नीरागस्य निरंजनस्य विजितारातेस्त्रिलोकीपतेः, स्वस्यान्यस्य जनस्य निर्वृतिकृते क्लेशक्षयाकांक्षया ॥ २ ॥ एम कही आभरण तथा वस्त्र पूजा करवी ॥

॥ पछी ज्ञान पूजा करे, तेनी गाथाओ ॥

॥ नमंति सामिति महीवनाहं, देवाय पूयं सुजहेव पुव्वं ॥ भत्तीय चित्त मण दामएहिं, मंदार पुप्फेह सवेह नाहं ॥ १ ॥ तहेव सड्ढा मण मुत्त एहीं, सुगंध पुप्फेह वरमएहिं ॥ पूयंत वंदत नमत नाण, नाणस्स लाभाय भवखयाय ॥ २ ॥ ए गाथाओ कहीने पुष्पोनी माला चढाववी, तथा रौप्यमुद्रा, सुवर्णमुद्रा, मणि रत्न, अने वस्त्र एओयें करी स्वशक्ति अनुसार ज्ञाननी पूजा करवी.

॥ पछी धूप करती वखते आ गाथा कहेवी ॥

॥ मीनकुरंगमुदारमसारं, सारसुगंधनिशाकरतारं ॥ तारमिलन्मलयोत्थविकारं, लोकगुरोर्दह धूपमुदारं ॥ १ ॥ एम कहीने धूप उखेववो. पछी मंगल दीपक करीने आ गाथाओ कहेवी—

॥ अथ मंगलदीपक पूजा ॥

॥ कोसंबी संठयस्सवि, पयाहिण कुणइ मउलियपईवो ॥ जिणसोम दंसणोदिण, यररूव तुह नाह मंगल पइवो ॥ १ ॥ भामीजंतो सुर सुंदरीहिं, तुहनाह मगल पईवो ॥ कणयायलस्स निक्षिय, भाणुव्व पयाहिण दिंतो ॥ २ ॥ मरगय सामल

थालधरे विणु, कोमल सरलिहि करिहिं करेविणु, जे उतारइ मंगल पइवो, सो नर होइ तिलोय पईवो ॥ ३ ॥ ए गाथा कहीने मंगलप्रदीप करवो, पछी रकेबीमां कपूर धरी, आरतिमां वत्ती सलगावीने मुखथकी आ गाथाओ कहेवीः—

॥ अथ आरति गाथा ॥

॥ जं मरगय मणि गडिय, विशाल थाल माणिक्क मंडिय पईवो ॥ ण्हवण यरकुरु खित्तं, भमउ जिण आरत्तियं तुम्हं ॥ १ ॥ आरत्तिअं नियत्थह, जिणस्स धूव किसणागरुच्छायं ॥ पासेसु भमउ निज्जिय, संगमय विभिन्नदिठिव्व ॥ २ ॥ पसणेयव्वो भवंतर, समज्जियंकम्मरेणु संघायं ॥ आरत्तिय मंगलग्गा, उच्छलंति सलिलधारा ॥ ३ ॥ एवी रीते आरति करवी ॥ इति संक्षेप आरतिविधिः ॥

॥ पछी उत्तरासंग करी, चैत्यवंदन करवुं, अने अष्ट प्रकारें पूजा करवी. कदाचित् अष्टप्रकारें पूजा न कराय तो शेष फल फूल ने नैवेद्य जे होय ते एमज चढावी देवुं. पछी गुणगीत करवां, जय जय शब्द उच्चारवा, साहामीवात्सल्य करवुं तथा यथाशक्ति दान देवुं ॥ इति श्री स्नात्रपूजाविधिः समाप्तः ॥

॥ आरति ॥ दीपक ॥ लूणजलविधिः प्रारभ्यते ॥

प्रभुथी अंतरपट करी, प्रभु सन्मुख बेसी आरति करनारने नव अंगे कुंकुमनां तिलक करवां. पछी एक थालमां स्वस्तिक करी, तेमां आरति, मंगल दीपक, जमणी बाजु राखी, त्यां आरतिमां घृत थोडुं भरवुं. अने मंगलदीपकमां घृत पूर्ण भरवुं. पछी केसर, फूल, तंदुलें करी, तेनी पूजा करवी.

उपर कुकुमना छांटा नांखी मंगल दीपक प्रगटाववो अने कर्पूर सलगाववो तेनो मंत्र कहे छे. ॐ अर्हते पंचज्ञानमहाज्योतिर्मयाय, ध्वांतघातिने द्योतनाय, प्रतिमायै दीपो भूयात्सर्वदार्हते ॥ १ ॥ एम भणी मंगलदीपक प्रगटावीने पछी ते मंगलदीपकथी आरति प्रगटावी, पछी दीवो नीचें मूकीने आरति उतारवी, तेवार पछी दीपक उतारे, पछी लूणनी कांकरी लेइ " लूण उतारो जिनवर अंगे " इत्यादिक पाठ कही लूणनी गाथा भणवी, पछी बृहच्छांति कहेवी, ते न आवडे तो त्रण नवकार गणी आ प्रमाणे श्लोक कहेवो ते ॥ श्लोक ॥ आज्ञाहीनं क्रियाहीनं मंत्रहीनं च यत्कृतं ॥ तत्सर्वं क्षमया देव, क्षम स्व परमेश्वर ! ॥ १ ॥ एम कही चैत्यवंदन करवुं ॥ इति आरति दीपक लूण जल विधिः ॥

॥ स्नात्रपूजा प्रारंभः ॥

(पांखडी गाथा) ॥ ढाल पहेली ॥

॥ चउत्तिसे अतिसय जुओ, वचनातिसय जुत्त, सो परमेसर देखि भवि, सिंहासण संपत्त ॥ १ ॥

॥ ढाल ॥

॥ सिंहासन बेठा जग भाण, देखि भविक जन गुणमणि खाण ॥ जे दीठे तुज निर्मल नाण, लहिये परम महोदय ठाण ॥ कुसुमांजलि मेहेलो आदि जिणंदा, तोरा चरणकमल सेवे चोसठ इंदा ॥ कु० ॥ १ ॥ चोवीस वैरागी, चोवीश सोभागी, चोवीश जिणंदा ॥ कु० ॥ एम कही प्रभुना चरणे पूजा करीयें ॥

॥ गाथा ॥

॥ जो नियगुण पज्जव रम्यो, तसु अनुभव एगंत ॥ सुह पुग्गल आरोपतां, जो तसु रंग निरत्त ॥ २ ॥

॥ ढाल ॥

॥ जो निज आतमगुण आणंदी, पुग्गल संगें जेह अफंदी ॥ जे परमेसरनिज पदलीन, पूजो प्रणमो भव्य अदीन ॥ कुसुमांजलि मेहेलो शांति जिणंदा ॥ तो० ॥ कु० ॥ २ ॥ एम कही प्रभुना जानुयें पूजा करीयें ॥

॥ गाथा ॥

॥ निम्मल नाण पयासकर, निम्मल गुण संपन्न ॥ निम्मल धम्मोवएस कर, सो परमप्पा धन्न ॥ ३ ॥

॥ ढाल ॥

॥ लोकालोक प्रकाशक नाणी, भविजन तारण जेहनी वाणी ॥ परमानंद तणी नीशानी, तसु भगतें मुज मतिय ठहराणी ॥ कुसुमांजलि मेहेलो नेम जिणंदा, तो० ॥ कु० ॥ ३ ॥ एम कही प्रभुना बे हाथें पूजा करीयें ॥

॥ गाथा ॥

॥ जे सिज्झा सिज्झंति जे, सिज्झंसंति अणंत ॥ जसु आलंबन ठविय मण, सो सेवो अरिहंत ॥ ४ ॥

॥ ढाल ॥

॥ शिव सुख कारण जेह त्रिकालें, समपरिणामें जगत निहाले ॥ उत्तम साधन मार्ग देखाडे, इंद्रादिक जसु चरण पखाले ॥ कुसुमांजलि मेहेलो पास जिणंदा ॥ तो० ॥ कु० ॥ ४ ॥ एम कही प्रभुना खंभायें पूजा करीयें ॥

॥ गाथा ॥

॥ समद्दिठी देम जय, साहु साहुणी सार ॥ आचारिज उवझाय मुणि, जो निम्मल आधार ॥ ५ ॥

॥ ढाल ॥

॥ चउविह संघें जे मन धार्युं, मोक्षतणुं कारण निरधार्युं ॥ विविह कुसुम वर जाति गहेवी, तसु चरणे पणमंत ठवेवी ॥ कुसुमांजलि मेहेलो वीर जिणंदा ॥ तो० ॥ कु० ॥ ५ ॥ एम कही प्रभुने मस्तकें पूजा करीयें ॥ इति पांखडी गाथा ॥

॥ वस्तुच्छंद ॥

॥ सयल जिनवर सयल जिनवर, नमिय मनरंग कल्लाणकविहि संघविय, करिस धम्म सुपवित ॥ सुदरसय इगसत्तरि तित्थंकर, एक समय विहरंति महीयल, चवण समय इगवीस जिण, जम्म समय इगवीस ॥ भत्तिय भावें पूजीया, करो संघ सुजगीस ॥ १ ॥

॥ ढाल बीजी ॥

॥ एक दिन अचिरा हुलरावती ॥ ए देशी ॥

॥ भव त्रीजे समकित गुण रम्या, जिन भक्ति प्रमुख सगुण परिणम्या, तजि इंद्रिय सुख आशंसना, करी स्थानक वीशनी सेवना ॥ १ ॥ अति राग प्रशस्त प्रभावता, मन भावना एहवी भावता, सवि जीव करुं शासन रसी, इसी भाव दया मन उल्लसी ॥ २ ॥ लही परिणाम एहवुं भलुं, निपजावी जिनपद निर्मलुं ॥ आयुबंध वचें एक भव करी, श्रद्धा संवेग ते थिर धरी ॥ ३ ॥ त्यांथी चविय लहे नर-

भव उदार, भरतें तेम ऐरवतेंज सार, महाविदेहे विजयें वर प्रधान, मध्य खंडे अवतरे जिन निधान ॥ ४ ॥

॥ अथ सुपनानी ॥ ढाल त्रीजी ॥

॥ पुण्यें सुपनह देखे, मनमांहे हर्ष विशेषे, गजवर उज्ज्वल सुंदर, निर्मल वृषभ मनोहर ॥ १ ॥ निर्भय केशरी सिंह, लक्ष्मी अतिही अबीह ॥ अनुपम फूलनी माल, निर्मल शशी सुकुमार ॥ २ ॥ तेजें तरणी अति दीपे, इंद्रध्वजा जग जींपे, पूरण कलश पडूर, पद्म सरोवर पूर ॥ २ ॥ अग्यारमे रयणायर, देखे माताजी गुण सायर ॥ बारमे भुवन विमान, तेरमे अनुपम रत्न निधान ॥ ४ ॥ अग्निशिखा निर्धूम, देखे माताजी अनुपम ॥ हर्षी रायने भासे, राजा अरथ प्रकाशे ॥ ५ ॥ जगपति जिनवर सुखकर. होशे पुत्र मनोहर ॥ इंद्रादिक जसु नमशे, सकल मनोरथ फलशे ॥ ६ ॥

॥ वस्तुच्छंद ॥

॥ पुण्यउदय पुण्यउदय उपना जिननाह, माता तव रयणी समे, देखी सुपन हरखंती जागीय ॥ सुपन कही निज कंतने, सुपन अरथ सांभलो सोभागीय ॥ त्रिभुवन तिलक महागुणी, होशे पुत्र निधान ॥ इंद्रादिक जसु पाय नमी, करशे सिद्धि विधान ॥ १ ॥

॥ ढाल ॥ चोथी ॥ चंद्रावलानी देशीमां ॥

॥ सोहमपति आसन कंपियो ए, देइ अवधि मन आणंदियो ए ॥ निज आतम निर्मल करण काज, भव जलतारण प्रगट्यो झहाज ॥ १ ॥ भवअडवी पारग सत्थवाह, केवल नाणाइय गुण अगाह ॥ शिव साधन गुण अंकूरो जेह,

कारण उलट्यो आसाढि मेह ॥ २ ॥ हरखें विकसी तव रोमराय, वलयादिकमा निज तनु न माय ॥ सिंहासनथी उठ्यो सुरिंद, प्रणमतो जिन आनंदकंद ॥ ३ ॥ सग अडपय साहामो आवि तत्थ, करि अंजलीय प्रणमीय मत्थ ॥ मुखें भांखे ए चण आज सार, तिय लोग पहु दीठो उदार ॥ ४ ॥ रेरे निसुणो सुर लोय देव, विपयानल तापित तुम सवेव ॥ तसु शांति करण जलधर समान, मिथ्या विप चूरण गरुडवान ॥ ५ ॥ ते देव सकल तारण समत्थ, प्रगट्यो तसु प्रणमी हवो सनाथ ॥ एम जपी शक्र स्तव करेवि, तव देव देवी हरखें सुणेवि ॥ ६ ॥ गावे तव रंभा गीत गान, सुरलोक हवो मंगल निधान ॥ नरखेत्रें आरिज वंश ठाम, जिनराज वधे सुर हर्ष धाम ॥ ७ ॥ पिता माता घरें उत्सव अशेप, जिन शासन मंगल अति विशेप ॥ सुरपति देवादिक हर्ष संग, संयम अर्थिजनने उमंग ८ ॥ शुभवेला लगनें तीर्थ नाथ, जनम्या इंद्रादिक हर्ष साथ ॥ सुख पाम्या त्रिभुवन सर्व जीव, वधाई वधाई थइ अतीव ॥ ९ ॥

॥ ढाल ॥ पांचमी ॥

॥ श्रीशाति जिननो कलश कहिशु प्रेम सागर पूर ॥ ए देशी ॥

॥ श्रीतीर्थपतिनुं कलशमज्जन, गाइयें सुखकार ॥ नरखित्त मडण दुह विहंडण, भविक मन आधार ॥ तिहां राव राणा हर्ष उत्सव, थयो जग जयकार ॥ दिशकुमरी अवधि विशेप जाणी, लह्यो हर्ष अपार ॥ १ ॥ नियअमर अमरी संग कुमरी, गावती गुणछंद ॥ जिन जननी पासें आवि पोहोती, गहगहती आणंद ॥ हे ! माय तें जिनराज जायो शुचि वधायो रम्म ॥ अम जम्म निम्मल करण कारण, क-

शीश सुईकम्म ॥ २ ॥ तिहां भूमि शोधन दीप दर्पण, वाय वींजण धार ॥ तिहां करीय कदली गेह जिनवर, जननि मज्जनकार ॥ वरराखडी जिनपाणी बांधि, दीये एम आशीष ॥ जुग कोडा कोडि चिरंजीवो, धर्मदायक ईश ॥ ३ ॥

॥ ढाल ॥ छठी ॥ एकवीशानी ॥

॥ जग नायकजी, त्रिभुवन जन हितकार ए ॥

॥ परमातमजी, चिदानंद घनसार ए ॥ ए देशी ॥

॥ जिन रयणीजी, दशदिशि उज्ज्वलता धरे ॥ शुभलगनेजी, ज्योतिषचक्रते संचरे ॥ जिन जनम्याजी, जेणें अवसर माता घरे ॥ तेणे अवसरजी, इंद्रासन पण थरहरे ॥

॥ त्रुटक ॥

॥ थरहरे आसन इंद्र चिंते, कोण अवसर ए बन्यो ॥
जिन जन्म उत्सव काल जाणी, अतिही आनंद उपन्यो ॥
निज सिद्धि संपत्ति हेतु जिनवर, जाणी भक्तें ऊमह्यो ॥
विकसित वदन प्रमोद वधते, देव नायक गहगह्यो ॥ १ ॥

॥ ढाल ॥

॥ तव सुरपतिजी, घंटानाद कराव ए ॥ सुरलोकेंजी, घोषणा एह देवराव एं ॥ नरक्षेत्रें जी, जिनवर जन्म हुओ अछे ॥ तसु भगतें जी, सुरपति मंदर गिरि गछे ॥

॥ त्रुटक ॥

॥ गच्छेति मंदर शिखर उपर, भवन जीवन जिन तणो ॥
जिन जन्म उत्सव करण कारण, आवजो सवि सुरगणो ॥

तुम शुद्ध समकित थाशे निर्मल, देवाधिदेव निहालतां ॥
आपणा पातक सर्व जाशे, नाथ चरण पखालतां ॥ २ ॥

॥ ढाल ॥

॥ एम सांभली जी, सुरवर कोडी बहु मली ॥ जिनवंदनजी, मदरगिरि सामा चली ॥ सोहमपतिजी, जिन जननी घर आविया ॥ जिन माताजी वंदी स्वामी वधाविया ॥

॥ त्रुटक ॥

॥ वधाविया जिन हर्ष बहुले, धन्य हुं कृतपुण्य ए ॥
त्रैलोक्य नायक देव दीठो, मुज समो कोण अन्य ए ॥
हे जगत जननी ! पुत्र तुमचो, मेरु मज्जन वर करी ॥
उत्संग तुमचे वलिय थापिश, आतमा पुण्ये भरी ॥ ३ ॥

॥ ढाल ॥

॥ सुर नायकजी, जिन निज कर कमलें ठव्या ॥ पंच रूपेंजी, अतिशय महिमायें स्तव्या ॥ नाटक विधिजी, तव बत्रीश आगल वहे ॥ सुर कोडीजी, जिन दर्शनने उम्महे ॥

॥ त्रुटक ॥

सुरकोडा कोडी नाचती वली, नाथ शुचि गुण गावती ॥ अप्सरा कोडी हाथ जोडी, हावभाव देखावती ॥
जयो जयो तुं जिनराज जगगुरु, एम दे आशीष ए ॥ अम्ह
त्राण शरण आधार जीवन, एक तुं जगदीश ए ॥ ४ ॥

॥ ढाल ॥

॥ सुरगिरिवर जी, पांडुक वनमें चिहुं दिशे ॥ गिरिशिल

परजी, सिंहासन सासय वसे ॥ तिहां आणीजी, शक्रें जिन खोलें ग्रह्या ॥ चौसठेजी, तिहां सुरपति आवी रह्या ॥

॥ त्रुटक ॥

॥ आविया सुरपति सर्व भक्तें, कलश श्रेणी बनाव ए ॥ सिद्धार्थ पमुहा तीर्थ औषधि, सर्व वस्तु अणाव ए ॥ अच्चुअपति तिहां हुकम कीनो, देव कोडा कोडिने ॥ जिन मज्जनारथ नीर लावो, सवे सुर कर जोडीने ॥ ५ ॥

॥ ढाल ॥ सातमी ॥

॥ शांतिने कारणे इंद्र कलशा भरे ॥ ए देशी ॥

॥ आतमसाधन रसी देवकोडी हसी, उल्लसीने धसी क्षीरसागरदिशि ॥ पउमदह आदि दह गंगपमुहा नई, तीर्थजल अमल लेवा भणी ते गई ॥ १ ॥ जातिअड कलश करि सहस अठोतरा, छत्र चामर सिंहासण शुभतरा ॥ उपगरण पुप्फ चंगेरी पमुहा सवे, आगमें भासिया तेम आणी ठवे ॥ २ ॥ तीर्थजल भरिय करकलश करि देवता, गावता भावता धर्म उन्नतिरता ॥ तिरिय नर अमरने हर्ष उपजावता, धन्य अम्ह शक्ति शुचि भक्ति एम भावता ॥ ३ ॥ समकित बीज निज आतम आरोपता, कलश पाणीमशें भक्तिजल सींचता ॥ मेरु सिहरोवरें सर्व आव्या वही, शक्र उत्संग जिन देखी मन गह गही ॥ ४ ॥

॥ वस्तुच्छंद ॥

॥ हंहो देवा हंहो देवा अणाइ कालो, अदिट्ठ पुव्वो तिलोयतारणो तिलोय बंधु, मिच्छत्त मोहविद्धंसणो अणाइ तिण्हा विणासणो, देवाहिदेवो दिट्ठ बोहिय कामेहिं ॥ ५ ॥

॥ ढाल तेहीज ॥

॥ एम पभणंत वण भवण जोईसरा, देव विमाणिया भत्ति धम्मायरा॥ केवि कप्पट्ठिया केवि मित्ताणु गा, केवि वर रमणि वयणेण अइ उत्थुगा ॥ ६ ॥

॥ वस्तुच्छंद ॥

॥ तत्थ अच्चुय तत्थ अच्चुय इंद आदेस ॥ कर जोडि सवि देवगण, लेय कलस आदेस पामिय ॥ अद्भुतरूप सरूप जुअ, कवण एह उत्संगें सामिय ॥ इंद्र कहे जग तारणो, पारग अम परमेस ॥ नायक दायक धम्म निहि, करियें तसु अभिसेस ॥ ७ ॥

॥ ढाल ॥ आठमी ॥

॥ तीर्थकमलदल उदक भरीने पुष्कर सागर आवे ॥ ए देशी ॥

॥ पूरणकलश शुचि उदकनी धारा, जिनवर अंगें नामे॥ आतम निर्मल भाव करंता, वधते शुभ परिणामें ॥ अच्युतादिक सुरपति मज्जन, लोकपाल लोकांत ॥ सामानिक इंद्राणि पमुहा, एम अभिषेक करत ॥ १ ॥

॥ गाथा ॥

॥ तव ईसाण सुरिंदो, सक्कं पभणेइ, करइ सुपसाओ ॥ तुम अंके मह्नाहो, पणमित्त अम्ह अप्पेह ॥ २ ॥ ता सक्कंदो पभणेइ, साहमी वच्छलंमि बहु लाहो ॥ आणा एवं तेणं, गिण्हि हवो उकयत्थाभो ॥ ३ ॥ एम कही सर्व स्नात्रिया कलश ढाले, अने मुखथी नीचे प्रमाणे पाठ कहे ॥

॥ ढाल तेहीज ॥

॥ सोहम सुरपति वृषभ रूप करी, न्हवण करे प्रभु

तत्त्वशोधक, सयलगुणसंपत्ति धरा ॥ संवरसमाधि गतउपाधि, दुविध तपगुण आगरा ॥ ६ ॥

उपाध्यायपदपूजा ॥

॥ खंतिजुआ मुत्तिजुआ, अज्जव मद्दव जुताजी ॥ सच्चं सोयं अकिंचणा, तव संजम गुणरत्ताजी ॥ ७ ॥ उलालो ॥ जे रम्या ब्रह्मसुगुत्ति गुत्ता, समिति समिता श्रुतधरा ॥ स्याद्वादवादे तत्त्ववादक, आत्मपरमंजनकरा ॥ भवभीरु साधन धीरशासन, वहन धोरी मुनिवरा ॥ सिद्धांत वायण दान समरथ नमो पाठक पदधरा ॥ ८ ॥

मुनिपदपूजा ॥

॥ सकल विषय विष वारीनें, निःकामी निःसंगीजी ॥ भवदवताप शमावता, आतमसाधन रंगीजी ॥ ९ ॥ उलालो ॥ जे रम्या शुद्ध स्वरूप रमणें, देह निर्मम निर्मदा ॥ काउसग्ग मुद्रा धीर आसन, ध्यान अभ्यासी सदा ॥ तप तेज दीपे कर्म झीपे, नैव छीपे परभणी ॥ मुनिराज करुणासिंधु त्रिभुवन, बंधु प्रणमुं हित भणी ॥ १० ॥

दर्शनपदपूजा ॥

॥ सम्यक्दर्शन गुण नमो, तत्त्व प्रतीत स्वरूपोजी ॥ जसु निरधार स्वभाव छे, चेतनगुण जे अरूपोजी ॥ ११ ॥ उलालो ॥ जे अनुप श्रद्धा धर्म प्रगटे, सयल परईहा टले ॥ निजशुद्धसत्ता प्रगट अनुभव, करणरुचिता ऊच्छले ॥ बहुमान परिणति वस्तुतत्त्वें, अहव तसु कारणपणे ॥ निज साध्यदृष्टें सर्वकरणी, तत्त्वता संपत्ति गणे ॥ १२ ॥

ज्ञानपूजा ॥

॥ भव्य नमो गुणज्ञाननें, स्वपरप्रकाशक भावेंजी ॥ पर-
जय धर्म अनंतता, भेदाभेद स्वभावें जी ॥ १३ ॥ उलालो ॥ जे
मुख्यपरिणति सकलज्ञायक, बोध भावविलच्छना ॥ मतिआदि
पंच प्रकार निर्मल, सिद्ध साधन लच्छना ॥ स्याद्वादसगी
तत्त्व रंगी प्रथमभेदाभेदता सविकल्प ने अविकल्प वस्तु,
सकल संशय छेदता ॥ १४ ॥

॥ चारित्रपूजा ॥

चारित्रगुण वली वली नमो, तत्त्वरमण जसु मूलोजी ॥
पररमणीयपणुं टले, सकलसिद्ध अनुकूलोजी ॥१५॥ उलालो ॥
प्रतिकूल आश्रव त्याग सयम, तत्त्वथिरता दममयी ॥ शुचि परम
खंति मुत्ति दश पद, पंच सवर उपचई ॥ सामायिकादिक भेद
धर्में, यथाख्यातें पूर्णता ॥ अकषाय अकलुष अमल उज्ज्वल,
कामकश्मल चूर्णता ॥ १६ ॥

॥ तपपूजा ॥

॥ इच्छारोधन तप नमो, बाह्य अभ्यंतर भेदें जी ॥
आतम सत्ता एकता, परपरिणति उच्छेदे जी ॥१७॥ उलालो ॥
उच्छेद मर्म अनादि संतति, जेह सिद्धपणुं वरे ॥ योगसंगें
आहार टाली, भाव अक्रियता करे ॥ अतर मुहूरत तत्त्व साधे,
सर्व संवरता करी ॥ निज आत्मसत्ता प्रगटभावें, करो तप
गुण आदरी ॥ १८ ॥

॥ ढाल ॥

॥ एम नवपद गुणमंडलं, चउ निक्खेप प्रमाणेंजी ॥ सात

नयें जे आदरे, सम्यगज्ञानने जाणे जी ॥ १९ ॥ उलालो ॥ निर्द्धारसेंती गुणी गुणनो, करे जे बहुमान ए ॥ तसु करण ईहा तत्त्व रमणें, थाय निर्मल ध्यान ए॥ एम शुद्धसत्ता भल्यो चेतन, सकल सिद्धि अनुसरे ॥ अक्षय अनंत महंत चिद्घन, परम आनंदता वरे ॥ २० ॥

॥ कलश ॥

॥ इय सयल सुखकर गुणपुरंदर, सिद्धचक्र पदावली ॥ सवि लब्धिविद्यासिद्धिमंदर, भविक पूजो मन रुली ॥ उवझायवर श्रीराजसागर, ज्ञानधर्म सुराजता ॥ गुरुदीपचंद सुचरण सेवक, देवचंद सुशोभता ॥ २१ ॥

॥ अथ काव्यम् ॥ द्रुतविलंबितवृत्तम् ॥

विमलकेवलभासनभास्करं,जगति जंतुमहोदय कारणम्॥ जिनवरं बहुमानजलौघनम् , शुचिमनाः स्नपयामि विशुद्धये॥१॥ इति काव्यम् ॥ आ काव्य प्रत्येक पूजादीठ कहेवुं ॥

॥ स्नात्र करतां जगद्गुरु शरीरें, सकलदेवें विमल कल शनीरें ॥ आपणा कर्ममल दूर कीधा, तेणें ते विबुध ग्रंथें प्रसिद्धा ॥ २ ॥ हर्ष धरी अप्सरावृंद आवे, स्नात्र करी एम आशीष पावे ॥ जिहां लगे सुरगिरि जंबु दीवो, अम तणा नाथ देवाधिदेवो ॥ ३ ॥



६० ॥ ॐ नमो सिद्धं ॥

॥ वीरजिनवरनिर्वाण ॥

॥ राग आसाउरी ॥

सच्छातिकाविसमतानिशातं दुष्टाष्टकर्मक्षपकं नितांतं,
निर्मोहमानं परमं प्रशात वंदे जिनेशं चरमं महांतं ॥ १ ॥
यस्यांबिकाश्रीत्रिशलाभिधाना सिद्धार्थराजाजनकः प्रसिद्धः,
विश्वोपकृदुस्सहदुःपमेपि तं वीरनाथं प्रणतोऽस्मि भक्त्या ॥२॥

॥ ढाल ॥

बार वरस तप साधन कीनो, तीस वरस श्रुत वरस्यो
अनुपम ज्ञान प्रकाशी जिनवर, मुनिवर तुज रस फरस्यो
हो प्रभुजी तु साहिब सुखदाई, तुं जगनाथ कहाई,
हो साहिब जिनवर तुं सुखदाई ॥१॥

तुं तो अलख अनत अमोहि निज पर आतम सोही,
विगतविछोही अकोही अलोही, हुं तुज दर्शन मोही
हो जिनजी तु ॥ २ ॥

भाव अहिंसा तें वरताई निज गुण सपत्ति पाई,
त्रिण लोक त्राई गतमाई भविकुं शिवपददाई
हो प्रभुजी तुं० ॥ ३ ॥

वन महसेनमें तिरथठाई चौविहि संघ रचाई,
गणधरकु समता सिखलाई, चदना समता पाई
हो प्रभुजी तु० ॥ ४ ॥

तुज पद सेवत श्रेणिकभाई, सुलसा रेवइबाई,
प्रभुसम पदवी तुरत निपाई साचि भगति सहाई
हो प्रभुजी तुं० ॥ ५ ।

॥ ढाल ॥ श्री सुपास जिनराज ॥ ए देशी ॥

वरगणधर इग्यार, चउदसहस अणगार,
अणगारि हो सहस्स छतिस सुहामणीजी,
श्रमणोपासकसार इगलख अधिक हजार;
गुणसट्ठी हो सोभंता देसवीरत धणीजी ॥ १ ॥

तिगलख श्राविका चारु उपरि सहस अढार,
सम्यग् दृष्टि हो दर्शनयुत शीवमारगरसिजी;
चौदसपुव्वि धन्य सव्वखर संपन्न,
अजिणा जिण सकासा हो तिगसय उल्लसीजी ॥ २ ॥

वादीचउसय धीर परमत भंजक वीर,
पंचसयावाचंयम मणनाणिखराजी;
निज दिक्षीत मुनिराज समता ध्यान समाज,
सातसया केवलनाणि सिद्धिवराजी ॥ ३ ॥

वैक्रियधर सयसात षट्जीवन पितमात,
राजें हो आज तेरस ओही जिणशयाजी;
अणुत्तरवाइ मुनिश गइठिई श्रेयइस,
अनुभव अभ्यासि यतिवर अडसयाजी ॥ ४ ॥

इत्यादिक परिवार जिनवर आणा धार,
वृंदे हो परिवरिया विचरे भूतलेजी;
दूरित डमरभयशोक ईति भीतिना थोक,
नासे हो जिनपद फरसनने बलेजी ॥ ५ ॥

ढाल राग गोडीं ॥ धन धन सुरनर पतितति ॥ ए देशी ॥

वीर विहारे विहारे विचरता करता जगकुं शाताजी,
चरण सोवन पकज थापता जगवत्सल जगत्राताजी.

॥ त्रुटक ॥

त्राता अनादि विभाव दुखके आविया पावापुरी,
जिनराज आगम हरख पाम्या भव्यकेकि हितधरी;
धन्य पुहवी धन्य वनसो धन्य जनपदपुरसहि,
श्रीवीरनायक चरण फरसक भइ पावन या महि ॥ १ ॥
इंद्रादिक आगल चले भगते जयजय कहेतेजी
छत्र सिंहासन चमर स्युं इंद्र ध्वज लई वहतेजी;

॥ त्रुटक ॥

वहतिज आगले देवकोडी धर्मचक्रदेखावती,
नरतिरियव्यंतर असुर किन्नर अपछरा गुन गावति;
निज कार्यकरणी श्रमणश्रमणी आत्मतत्त्व नीपावती,
द्रुमश्रेणि उभी उभय पासे नाथपद शीर नामती ॥ २ ॥
गगन पंखीगण उडता करता प्रदक्षिणा रंगेजी,
पूठि पवन अनुकूलता हरती इति प्रसंगेजी;

॥ त्रुटक ॥

सहजे सुगंधित निर वरसे पुष्प वृष्टि चिहु दिशे,
कंटक अधोमुख कहे जिनते भाव कंटक सनिनसे,
जयजय कहति सुरि नर्चति देव दुंदुभी रणझणे,
देवाधिदेवा करे सेवा तत्त्वरुचिजनने भणे ॥ ३ ॥
पावन करता भूतले मिथ्या तिमिर हरंताजी;
विषयविषे मूरछीत भवी देशना अमृत झरताजी;

॥ त्रुटक ॥

तारता जनकुं भवोदधिथी परम पूरण गुणनिहि,
गजराज गति जिनराज पाया परिसरे आव्या वही;
थई वधाई नगर सघले सज्जन बहु साहमे वहे,
वर पुष्प मुक्ताफल वधावी सकल मंगल सुख लहे ॥ ४ ॥

॥ ढाल ॥

आयाजी मुनिपति नरपति हस्तिपाल घर आया,
पायाजी सुमणि सुरतरु अधिक महोदय पाया;
धंघाजी अति प्रमुदित भूपती त्रिभुवन तारक जगराया,
ठायाजी तसु दर्शित वंछित दाण सभा सुखदाया ॥

॥ त्रुटक ॥

धन धन जे थानक जसु भितर वीर परम गुरु ठाया,
छत्रत्रय चामर जिनजी सोभित सिंहासन शुभ पाया ॥
मंदार कुसुमे प्रभु वधाया मनरमाया सचिगणे,
चिरकाल जीवो जगत दीवो तरणतारण इंम थूणे ॥ १ ॥
चौमासीजी वर्द्धमान जिन तिहां रह्या
विधिसेतिजी नव नव अभिग्रह मुनिगृह्या,
परदेसीजी श्रोताजन आव्या वहि;
प्रभुवचनेजी तत्त्वग्रहे ते गहगहि ॥

॥ त्रुटक ॥

गहगहि श्रुतरस अमृत पिता आत्म समता भावता,
परभाव परणति दूर वमता सुमति रमणी रमावता;
वीयराय वंदन भव निकंदन गुण आनंदने पावता,
परमात्म सेवन अहवासिद्धि एह इहा लावता ॥ २ ॥

श्रीवीरजी गौतम गणधर मोकल्या,
आणाकारीजी देवशरमा बोधन चल्या;
जिन आणाजी हित सुख मंगलकारए,
इंम जाणीजी गणधर करे विहार ए ॥

॥ त्रुटक ॥

नवरायलछिनवें माल्लि वीर वचन रसेरस्या,
निज देश चिंता तजी जिनपद सेवना करवा वश्या,
सुरराय चौसठ्ठि तिहां आव्या सिद्धि अनमर जाणता,
श्रीवीर दर्शन नमन कीरतन परम सुख मन आणता ॥२॥

॥ दोहा ॥

कार्तिक वदी चौदश दिने प्रात समय जिनराय,
सिंहासने बेठा जिस्यें वररंभा गुण गाय ॥ १ ॥

॥ ढाल ॥ जीरीयानि ॥ अथवा सोहलानी ॥

चान्हेमर त्रिसलादेवीनंद दीठो हे दीठो अमृत घनसमो
सोभागीस्वामी सोभागी सिद्धि वधू भरतार,
मोहन हे मोहन मूर्त्ति नीत नमो; उपगारी स्वामी ॥१॥
तुम्हे गाओ हे तुम्हे गावो नित गुण धरि मनप्रेम,
जेम न हे जेम न आवो दूर गति ॥ उ० ॥
चिर जीवो हे चिर जीवो गौतम गुरुराय,
नित प्रति हे नित प्रति पूजे सुरतते ॥ उ० ॥ २ ॥
अतूलि बल हे अतूलि बल याचो जगनाथ,
जिण जित्यो हे जिण जित्यो मोह सुभटजरू ॥ उ० ॥
वूठो हे वूठो आज अमीयमय मेह,
सफलो हे सफल फल्यो घरि सुरतरू ॥ उ० ॥ ३ ॥

जय जय हे जय जय जगजीवन जगबंधू,
सिद्धारथ हे सिद्धारथ नृप कूलतिलो, ॥ उ० ॥
तूठा हे तूठा आज सर्वे फळ्यां पुन्य,
मेळ्यो हे मेळ्यो जिनवर गुणनीलो ॥ उ० ॥ ४ ॥

बलिहारि हे बलिहारि वार हजार,
तुं ज्ञानि हे तुं ज्ञानि गुण सेहरो; ॥ उ० ॥
जंगम हे जंगम तीरथ शिवसुखकंद,
निश्चय हे निश्चय शिवसुख देहरो ॥ उ० ॥ ५ ॥

इंद्रादिक हे इंद्रादिकना प्राण आधार,
जीवो हे जीवो कोडि जुगो लगे ॥ उ० ॥
जसु दिठे हे जसु दिठे नासे दुःख अंधार,
भामंडल हे भामंडल दिनकर झगमगे ॥ उ० ॥ ६ ॥

त्रिभुवन पति हे त्रिभुवन पति तुज वचन सवाद,
मोह्या हे मोह्या सुरपति नरपतिजी ॥ उ० ॥
तुंहि हे तुंहि भवभवनाथ दयाल,
करियें हे करियें इणविधि विनतीजी ॥ उ० ॥ ७ ॥

तरीये हे तरीये भवसायर दुःख भूरि,
हरिये हे हरिये कर्म महा अरि ॥ उ० ॥
वरियें हे वरियें देवचंद्र पदसार,
करियें हे करियें भक्ति सदा खरी ॥ उ० ॥ ८ ॥

॥ ढाल यतीनी ॥

इम गाती रंभा गीत प्रभु आव्या सुविदित,
ज्ञानदर्शन चरणानंदि हरख्या सवि प्रभुपद वंदी ॥१॥

प्रभु देशना अतिसुखकार भाख्या निश्चय विवहार,
कारण कारज विधि भाखी शिव साधन शिक्षा दाखी ॥ २ ॥
सर्व जीव अछे मम एष, संग्रह मत्ताने लेश;
जे पर परणति त्यागी, तसु कर्मनी मावट भागी ॥ ३ ॥
जसु तत्वरुचि थयो ज्ञान ते माध्ये माध्य अमान,
निज व्यक्ति शक्ति निज रंगी माधें गुण शक्ति अनंगी ॥४॥
शुचि श्रद्धाभासन रमणे कारक निज कार्यने गमणे,
भागे परपरणति रित एकत्वे तत्त्व प्रतित ॥५॥
परभाव अरोचक दृष्टि निज ज्ञानसुधानि वृष्टि,
परभोगी भाव अभावे करतादि थया निज भावे ॥ ६ ॥
जाणि निज परणति स्वामी, कुण थाइ परपरणामी;
ए भावे निज गुण पोपे, ते शुद्ध समाधि संतोपे ॥ ७ ॥
दुःख पोषक पर परसंग, न भजे हेत धरि रंग;
निज तत्त्व रमो भविप्राणी, देवचंद्र वदे ईम वाणि ॥ ८ ॥

॥ ढाल ॥ वहिनी रही न सकि तिसेंजी ॥ ए देशी ॥

सुरनरतिरिय मभूहमेंजी बेठा श्रीवर्द्धमान;
जगत दयाकर उपदिसेंजी, शुद्ध धर्म सुख ध्यान ॥ १ ॥
जिणेशर तुम मुज प्राणाधार ॥ टेक ॥
भवमय पीडित जीवनेंजी, त्राणशरण सुखकार;
सोल पहोरनी देशनाजी, वीर कही तिणवार,
चीराश्रववचने कह्याजी, प्रश्न छत्रीस उदार जिने० ॥ २ ॥
पचावन अध्ययनमांजी, सुखविपाक स्वरूप;
वली तेता अध्ययनमाजी, दुःखविपाक विरूप जिने० ॥ ३ ॥
छठतपे निशी पाछलीजी करिया जुजी वीर्य,
योगरोध बादर करिजी; रोध्यो सूक्ष्म वीर्य. जिने० ॥ ४ ॥

बोलो नाथ दयाल कृपानिधि करुणाल तुंज वयणां गुणमाल;
थई सर्व निहाल तत्त्वरमण संभाल थाय ज्ञान विशाल. मे० ॥२॥

एक वचन श्रीवीरनोरे कापें भवनी कोडी;
अविनाशी सुख आपवारे कोण करे तुंज होडी. मे० ॥ ३ ॥

तुंज सरीखे साहेब छतेरे करता मोटी हुंस;
मोह महारिपु जीपिनेरेहां करस्यां कर्मनो ध्वंस. मे० ॥ ४ ॥

मोहाधीन जे जीवडारेहां तृष्णा तापें तप्त;
पुद्गल आशाबंधि विषयारस संलिप्त. मे० ॥ ५ ॥

तनु विभावरंगी दुखीरेहां आवृत आतमशक्ति;
तेहवाने कुंण तारसेरेहां देखाडि गुणव्यक्ति. मे० ॥ ६ ॥

बहु परिचित परभावनारेहां चपल एकत्व अपाय; मे०
करतां कहे कुंण वारसेरेहां ते देखाडो ताय. मे० ॥ ७ ॥

विषयादिक आसेवतांरेहां थातो अम संकोच; मे०
तुज उपगारे तेहवेरेहां थास्यें किमते सोच. मे० ॥ ८ ॥

वीर चरण जायोअछेरेहां सुणवा अमृत वाणि; मे०
ते माटे सुर भोगनारेहां करता नवि मंडाण. मे० ॥ ९ ॥

कृपा करो एक वचननीरेहां अद्यपि छो वीतराग; मे०
महा मोहना कष्टथीरेहां छोडावो महाभाग. मेरा० ॥ १० ॥

भरतक्षेत्रना जीवनेरेहां तुंजविण कुण रखवाल;
दुसम काल कृतांतमांरेहां एहवो कवण हवाल. मेरा० ॥ ११ ॥

मेघमुनिने राखीयोरेहां राख्यो सोमलवृंद; मेरा०
खंधक शिवपमुहा तर्यारेहां तार्यो चमर सुरिंद. मेरा० ॥ १२ ॥

हुं सोहम पति विनवुंरे हां दया करो मुज देव; मेरा०
सदा हजूरि दासनीरेहां मानो विनति सेव. मेरा० ॥ १३ ॥

नित्य मनोरथ नव नवारेहा करता प्रभु अवलंब मेरा०
ते दिशी दाख्यो सर्वने रेहां प्रभुजी ज्ञान कदंब मेरा० ॥ १४ ॥
एह श्रमण श्रमणी भणीरेहां निज आराधक भाव मेरा०
केहने पूछी आलोयरयेरेहां अंतर गत परभाव मेरा० ॥ १५ ॥
भव्य अभव्य निरधारतारेहां पूछीशु कुण पास मेरा०
आश्रव पीडित जीवनीरेहां कुण सुणसें अरदाम मेरा० ॥१६॥
ते सवि मनमां रहिरेहां चाल्यो तारक सिद्धि मेरा०
आणा आलंबन करिरेहां करवी कार्य समृद्धि मेरा० ॥ १७ ॥
तोपण एहना नामथीरेहा राखो मोटी आश मेरा०
देवचंदनी सेवनारेहां शिव सुख कारण खास मेरा० ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

इंम दुःख भरि इंद्रादिके विमन चित्त मुखदीन
कलश विधे नवरावियां चित्त भक्ति लयलीन ॥ १ ॥
करि विलेपन अति सुरभि बहुविध फूलनी माल
आभरणादिक अलंकर्या श्री जिन दयाल ॥ २ ॥
सहस्र थंभ शिविका रचि छत्रत्रय अभिराम
सिंहासनपाद पीठ विधि चामर ध्वज अभिराम ॥ ३ ॥
प्रभु बेसार्या पालखी उपाडे सुरवृंद
वैमानिक भुवनाधिपति व्यंतर सूरजचंद ॥ ४ ॥
चामर विंजे भक्तिस्यु शक्र बलिईशान
हीवे आपणने धर्मनो कुण दें शिक्षा दान ॥ ५ ॥

॥ गाथा ॥

दुल्लहो जिणंदजोगो दुलहंत धम्म सवण निधारं,
दुलहा सुख पविचि, सामग्गी संगमो दुलहो ॥ १ ॥

चार वरस केवलिपणे, विचर्या गौतम स्वामी,
आठ वरस केवलिनिधि, श्री सुधर्म अभिरामी ॥ २ ॥
वरस चौमालीस केवली, श्री जंबुसुखकार,
त्यार पछी श्रुत ज्ञान बळ, चाले सासन सार ॥ ३ ॥
एकवीस सहस वरस लगे, रहस्ये वीरवचन;
तसु आलंबन जे रमे, तेहीज जीव सुधन्न ॥ ४ ॥

॥ ढाल ॥

धन्य धन्य सासन श्री जिनवरनो, जिहां वर वाचक वंस रे,
दूसम काले जास प्रसादे लहिइं धर्म परसंस रे धन्य० ॥ १ ॥
आर्य प्रभ सीजंभवसूरि, सूरि यशोभद्र स्वामी रे,
श्री संभूति विजय सुतसागर, भद्रबाहु वर नाम रे धन्य० ॥२॥
दश निर्युक्ति छेद वर आगम उधर्या वस्तु स्वरूप रे,
संपूरण द्वादश आगम धर, ज्ञानक्रिया त्रिभिरूप रे धन्य० ॥३॥
थूलभद्र कोश्या प्रतिबोधी, महागीरि सूरिसुहन्ति रे,
वयरस्वामी जे पूरव दशधर युगप्रधान सुप्रशस्त रे धन्य० ॥४॥
भाष्योद्धार कारक उपगारी श्री जिनभद्र मुनिंद रे,
चूरणी करता श्रुत उद्धरता श्री देवर्द्धि मुणिंद रे धन्य० ॥५॥
पुस्तकारूढ कर्या जिन आगम, राख्यो सासन शुद्ध रे,
टीकाकार श्री सिलांग सूरिवर, श्री अभयदेव प्रबुद्ध रे धन्य० ॥६॥
श्री हरिभद्र मलयगिरि पंडित हेमसूरी मल्हार रे,
चंदमहत्तरसूरि जिनेश्वर जिन वल्लभ सुखकार रे धन० ॥ ७ ॥
श्री देविंद्र हेम आचारिज कुमारपालज सुभक्ति रे,
श्री खेमेंद्र प्रमुख श्रुतरसिया दूसम काले व्यक्त रे धन० ॥८॥
दूपसहसूरि छेल्ला गणधर आराधक जिन जाण रे,
चौविह संघ शुद्धश्रद्धाधर, पंचांगी परमाण रे धन० ॥ ९ ॥
द्रव्यछक्क नव तत्त्वनी श्रद्धा, ज्ञानक्रिया शिवसार रे,
उत्सर्गने अपवाद साधना, निश्चयनयव्यवहार रे, धन० ॥१०॥

निमित्त वली उपादान ने कारण, योग साधन तीन प्रकार रे,
प्रवृत्ति विकल्प तथा परणति, शुचिकरता भव निस्तार रे घन०॥११॥
पुष्ट निमित्त सेवनथी आतम, परणति थाइं शुद्ध रे,
तत्त्वालंबि तत्त्व प्रगटता, साधे पूर्ण समृद्ध रे. घन० ॥ १२ ॥
देवचंद्र श्रीवीर चरणयुग, सेवो भक्ति अखंड रे,
सामन सगी आणा रगी, ते थाइ गतदंड रे. घन० ॥ १३ ॥

॥ ढाल ॥ कुमत इंम सकल दूरे करि ॥ ए देशी ॥

भगति इंम चित्त साची धरी धरइ सासन रीत रे,
वारीइं दुष्ट दुरवासना ध्वंसीइं भवतणी भिती रे, भग० ॥१॥
वीर जिनराज सम प्रभु लहि गहगहि बुद्धि गुणग्राम रे,
कोण पर देवने आदरे, कल्पतरू सम प्रभु पामि रे. भग० ॥२॥
एक आधार छे ताहरो माहरे दिनदयाल रे,
सार कीजे हवे दासनि नाथ जगजीव प्रतिपाल रे. भग० ॥३॥
विनती दासनी धारीइं तारिइ कर उपगार रे,
दोप अनादि निवारिइं आपि इम अनुभव सार रे. भग० ॥ ४ ॥
मोह जंजाल वशे जीवडा रडवडे पुद्गल राग रे,
तेहने शुद्ध रतनत्रयि दाखवि ते महाभाग रे भग० ॥ ५ ॥
एक आलंबन स्वामीनो दासना चित्तने नाह रे,
असरण सरण भवअडविनो तुंहि परम सत्थवाह रे. भग० ॥६॥
तुज गुण रागभर हृदयमें किम वसे दुष्ट कषाय रे,
निरमल तत्त्वना ध्यानथी ध्यायक निरमल थाय रे. भग०॥७॥
ध्येयनी शुद्धता रसथकि चिद्रूअय कंचन थाय रे,
तिम अमोहिरसि चेतना पूर्ण आनद उपाय रे भग० ॥ ८ ॥
माहरी परणति दोपनी तीव्रता वारणहार रे,
ताहरा सासन श्रुततणो राग छे एक आधार रे. भग० ॥ ९ ॥
खिण खिण नाम तुमचो, जपुं तुज गुण स्तवन उल्लास रे,
चींतवि रूप प्रभूजी तणा, किजीये आतम प्रकाश रे भग० ॥१०॥

वलि वलि विनवुं सामीजि नित्यप्रत्ये तुंहिज देव रे,
शुद्ध आशयपणे मुज होज्यो भवभव ताहरी सेव रे. भग० ॥११॥
वीर आणा अविहडपणे आदरु साधन एह रे
ताहारि साखथी सत्य छे, सीझस्ये माहरे तेह रे. भग० ॥१२॥
भद्रकभावरागीपणे, विनति एम कराय रे,
देवचंद्र पद निपजे नाथजी भगती सुपसाय रे. भग० ॥१३॥

॥ ढाल ॥ राग धनाश्री ॥

गावो गावो रे जिनराजतणा गुण गावो,
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरणनी निर्मल थिरता पावो रे. जि० टेक॥
पंचकल्याणक स्तवना स्तवतां आतम तत्त्व नीपावो,
मोह महारिपु दोष अनादि खीणमें तेह गमावो रे; जि० ॥१॥
आतम तत्त्व ध्यान एकता, साचो शिवसुख दावो,
ईश्वर भक्ति तेहनो कारण, आगममांहि कहावो रे; जि० ॥२॥
प्रभु गुण ध्यान स्वजाति रमणे, निर्मल परणति थावो रे,
तेहथी सिद्धतणे प्रभु सेवन, आतमशक्ति वधावो रे; जि०॥३॥
सुविहित खरतरगच्छ परंपर राजसार उवझायो,
तास शिष्य पाठक सम दमधर ज्ञानधरम सुखदायो रे; जि०॥४॥
दीपचंद पाठक उपगारी सासन राग सवायो,
तास शिष्य सुचि भक्ति, प्रसंगे देवचंद्र जिन गायो रे; जि०॥५॥
भावनगर श्रीऋषभप्रासादे दीवालि दिन ध्यायो,
संघ सकल श्रुत शासन रागी परम प्रमोद उपायो रे; जि० ॥६॥
शासन नायक वीर जिनेसर गुण गातां जयमालो,
देवचंद्र प्रभु सेवन करतां मंगलमाल विसालो रे. जिन० ॥७॥

इतिश्री वीरजिनवर निर्वाण समाप्तम् ॥

श्रीशुभंभवतु ॥ श्रीकल्याणमस्तु ॥

ॐ

अथ श्रीमद् देवचन्द्रजी कृत श्री सिद्धाचलगिरि मंडन श्री आदिजिन विनतिरूप स्तवन प्रारंभः

रत्नाकर पचीशी अनुवादरूप.

सुण जिनवर शत्रुंजय धणीजी, दासतणी अरदास ए-राग

श्रेय श्रीरति गेहछोजी, नरसुरपतिनतपाय;
सर्वजाण अतिशयनिधिजी, जय उपयोगी अमाय, १

जगतगुरु विनतडी अवधार. (ए टेक)

जग आधार कृपामयी जी, निष्कारण जगबंधु;
भवविकारगद टाळवा जी, वैद्य अछो गुणसिंधु. ज० २

जाण भणी जे भाषवु जी, ते तो भोलिमभाव;
पिण अशुद्धता आपणी जी, विनवीये लहि दाव. ज० ३

मावित्र आगळ बालके जी, श्युं लीलें न कहाय?
साचु पश्चात्तापथी जी, निज आशय कहिवाय. ज० ४

दान शील तप भावना जी, जिन आणाओं न कीध;
वृथा भम्यो भवसागरे जी, आतमहित नवि लीध ज० ५

क्रोध अगनि दाधो घणुं जी, लोभ महोरग दष्ट,
मान ग्रस्यो माया कळ्यो जी, किम सेवुं परमेष्टि. ज० ६

हित न कर्यो में परभवें जी, इहा पण नवि सुख चुंप;
हे प्रभु [1] भमशत भव कथा जी, केवल पूरणरूप ज० ७

---

१ कर्या

प्रभु मुख चंद्रसंयोगथी जी, महानंदरस जोर;
नवि प्रगटयो तिण वज्रथी जी मुजमन अतिहि कठोर. ८

भव भमवे दुर्लभ लहीजी, रत्नयी तुम साथ;
ते हारी निज आलमें जी, किहां पुकारुं नाथ. ज० ९

मोहविजय वैराग्यजे जी, ते परवंचन काम;
निज पर तारन देशना जी, ते जनरंजन ठाम. ज० १०

विद्यातत्त्वे परिखवा जी, ते पर जीपण ढाल;
परमदयाल कितो कहुं जी, मुज हांसीनी चाल. ज० ११

परनिंदा मुख दूखव्यो जी, पर दुःख चिंत्यो रे मन्न;
परस्त्री जोवे आंखडी जी, किम थास्युं हुं धन्न. ज० १२

कामवश्यें विषयीपणें जी, भोगविडंबन वात;
ते श्युं कहिये लाजता जी, जाणो छो जगतात. ज० १३

परमातमपद नीपजे जी, श्रीनवकार प्रभाव;
तेह कुमंत्रे ध्वंसियो जी, इन्द्रीसुखने दाव. ज० १४

श्री जिन आगळ दुखव्यो जी, करी कुशास्त्रनो रंग;
अनाचार अति आचर्या जी, भूलि कुदेवने संग. ज० १५

दृष्टिप्राप्य प्रभुसुख तजी जी, ध्यावुं नारीरूप;
गहन विषे विषघुमथी, न ग्रहुं आत्मस्वरूप; ज० १६

मृग नयणी मुख निरखतां जी, जे लाग्यो मन राग;
न गयो श्रुतजल धोवतां जी, कुण कारण महाभाग. ज० १७

अंग चंग गुण नवि कला जी नवि वर प्रभुता रे कांय;
तो पण साचुं लोकमें जी, मान विडंबित काय. ज० १८

---

१ वचन.

प्रतिक्षण आउखो घटे जी, न घटे पातकबुद्धि;
योवन वय जातां वधे जी, विषयाभिलाष वृद्धि; ज० १९
औषध तनु रखवालवा जी, सेव्या आश्रयकोडि;
पिण जिनधर्म न सेवियो जी, अं अै मोह मरोडि ज० २०
जीव कर्म भव शिव नहीं जी, विटमुख वाणी रे पीध;
तुज केवलरवि उगम्ये जी, आप संभाळ न कीध. ज० २१
पात्र भक्ति जिन पूजना जी, नवि मुनिश्रावकधर्म;
रत्न विलापपरे कर्यो जी, मुज माणसनो जम्म. ज० २२
जैनधर्म सुखकर छते जी, सेव्युं विषय विभाव;
सुरमणि सुरघट ईहना जी, ऐ ऐ मूढ स्वभाव ज० २३
भोगलील ते रोग छे जी धन ते निधन समान;
दारा कारा नरकनी जी, न विचारुं ए निदान. ज० २४
साधु आचार न पाळीया जी, न कर्यो पर उपकार;
तीर्थ उद्धार न नीपनो जी, ते गयो जन्मारो हार ज० २५
दर्शन वचन रमे नहि जी, श्रुतयोगे न विराग;
लेश अध्यातम नवि रम्यो जी, किम लहस्युं भवताग. ज० २६
न कर्यो धर्म गये भवे जी, करवो पण अतिकष्ट;
वर्त्तमान भवरंगना जी, तिण तीने भव नष्ट. ज० २७
प्रभु आगळ शुं ? दाखवुं जी, मुज आश्रय परचार;
तीनकाल जाणग अछोजी, तरीये तुज आधार. ज० २८
भद्रक मुनिवृद्ध नमें जी, तेमां हरखुं रे आप;
मुनिपद हुंस करुं नहीं जी, ए सवलो संताप. ज० २९
जिनमतवितथा प्ररुपणा जी, करतां न गणी रे भीति;
जस इंद्री सुख लालचें जी, कीधु काल व्यतीत. ज० ३०

तत्त्व अतत्त्वे गवेखणा जी, करवी पिण अतिदूर;
तत्त्वप्ररुपक मानथी जी, विस्तारुं भव भूरि. ज० ३१

तुम सम दीन दयाळुओ जी, नवि बीजो जिनराज;
दया ठाम मुज सारिखो जी, छे बीजो कुण आज. ज० ३२

श्री सिद्धाचलमंडणो जी, ऋषभदेव जिनराज;
रत्नाकरसूरें स्तव्या जी, निर्मळ समकितकाज. ज० ३३

निज नाण दंसण चरण वीरज परम सुख रयणायरो,
जिनचंद्र नाभि नरिंदनंदन त्रिजग जीव नभायरो;
उवझाय वर श्री दीपचंदह सीष गणि देवचंद ए,
संथव्यो भगतें भविकजनने करो मंगलवृंद ए० ३४



आवती चोवीशीना प्रथम जिनेश्वर पद्मनाभ स्वामीनुं स्तवन. ॥

—卐—

॥ पंथडो नीहालु रे ॥ ए देशी ॥

वाटडी वीलोकुरे भावी जिन तणी रे, पद्मनाभ जसु नाम;
दूसम दोषीरे भरत कृपाकरुरे, उपशम अमृत धाम ॥
वाटडी० ॥ १ ॥

वीर निमित्ते श्रेणीकने भवेरे, तुमे बांध्युं जिन नाम;
कल्याणक अतिशय उपगारतारे, वीर समान सभाव ॥
वाटडी० ॥ २ ॥

सुदि असाढे छठीने दिनेरे, उपजशो जगनाथ,
चैत्र धवल तेरस प्रभु जनमशोरे, थाशे मेरु सनाथ ॥
वाटडी० ॥ ३ ॥

मागसीर वदी दसमी दीक्षा ग्रहीरे, वरशो चरण उदार;
सुदी वैशाख दसमे केवलीरे चौविह संघ आधार ॥
वाटडी० ॥ ४ ॥

समवसरण सींहासन वेसिनेरे, प्रभु करशो व्याख्यान;
आतम धर्म सुणी ते अवसरेरे, धरतो प्रभु गुण ध्यान ॥
वाटडी० ॥ ५ ॥

संमुख त्रिपदी पामी गणधरारे रचशे द्वादश अंग;
ते वेला हु प्रभु चरणे रहुरे, जिनधरमे दृढरंग ॥
वाटडी० ॥ ६ ॥

दीवाळी दिन शिवपद पामशोरे सुद्धातम मकरंद;
देवचंद्र साहेबनी सेवनारे, करतां परमानंद ॥
वाटडी० ॥ ७ ॥

॥ श्री सीमंधरस्वामी विनतिरूप स्तवन ॥

प्रभुनाथ तुं तियलोकनो, प्रत्यक्ष त्रिभुवन भाण;
सर्वज्ञ सर्वदर्शी तुंमे शुद्ध सुखनी खाण ॥ १ ॥
जिणजी वीनती छे एह (ए टेक)

प्रभु जीव जीवन भव्यना, प्रभु मुज जीवन प्राण;
ताहरे दर्शनें सुख लहूं, तुंहीज गति स्थिति जांण. जि० ॥२॥

तुज विना हुं चिहूं गति भम्यो, धर्या भेख अनेक;
निज भावने परभावनो, जाणयो नहीं सुविवेक जि० ॥ ३ ॥

धन्य तेह जे नितु प्रहसमें, देखे श्रीजिनमुख चंद;
तुज वाणी अमृतरस लही, पामे ते परमानंद जि० ॥ ४ ॥

एक वचन श्री जिनराजनो, नय गम भंग प्रमाण;
जे सुणे रुचिथी ते लहे, निज तत्त्व सिद्धि अमान. जि० ॥५॥

जे क्षेत्र विचरो नाथजी, ते क्षेत्र अति सुपसथ्थ;
तुज विरह जे क्षण जाय छे, ते मानीयें अकयथ्थ. जि०॥६॥

श्री वीतराग दर्शन विना, वीत्यो जे काल अतीत;
ते अफल मिच्छादुक्कडं, तिविह तिविहनी रीत. जि० ॥ ७ ॥

प्रभु वात मुज मननी सहु, जाणोज छो जगनाथ;
थिरभाव जो तुमचो लहुं तो मिले शिवपुर साथ. जि०॥ ८ ॥

प्रभु मिले हुं थिरता लहुं, प्रभु विरहे चंचल भाव;
एकवार जो तन्मय रमुं तो, करुं अचल स्वभाव. जि० ॥९॥

प्रभु अछो क्षेत्र विदेहमां, हुं रहुं भरत मझार;
तो पण प्रभुना गुण विषे, राखुं स्वचेतन सार. जि० ॥१०॥

जो क्षेत्र भेद टळे प्रभु तो सरे सघळां काज;
सन्मुखें भावि अभेदता करी वरुं आतमराज. जि० ॥ ११ ॥

परपूठें इहा जेहनी, एवडी जो छे स्वाम;
हाजर हजूरी जो मिळे, तो मिळे आतम राम. जि० ॥ १२ ॥

हुं इन्द्र चन्द्र नरेन्द्रनो, पद न मागुं तिलमात;
मागुं प्रभु मुज मन थकी, न वीसरो चणमात्र जि० ॥ १३ ॥

जहां पूर्ण शुद्ध स्वभावनी, नवि करी शकुं निज ऋद्धि,
तहां चरण शरण तुमारडा, एहिज मुज नव निधि. ॥ १४ ॥

माहरी पूर्व विराधना, जोगे पडयो ए भेद;
पण वस्तुधर्म विचारता, तुज मुज नहीं छे भेद. जि० ॥१५॥

प्रभु ध्यानरंग अभेदथी, करी आतमभाव अभेद;
छेदी विभाव अनादिनो, अनुभवुं स्वसंवेद्य जि० ॥ १६ ॥

वीनवु अनुभव मित्रने, तुं न करीश पररम चाह;
शुद्धात्मरम रंगी थइ, कर पूर्ण शक्ति अवाह. जि० ॥ १७ ॥

जिनराज सीमंधर प्रभु ते, मिल्यो कारण शुद्ध;
हवें आत्म सिद्धि निपायवी, शी ढील करीये वुद्ध. जि०॥१८॥

कारणें कारण सिद्धिनो, करवो घटे न विलंब;
साधवी पूरणानंदता, निज कर्तृता अवलंब. जि० ॥ १९ ॥

निज शक्ति प्रभु गुणमें रमे, ते करे पूर्णानन्द;
गुण गुणी भेद अभेदथी, पीजीये शम मकरन्द. जि०॥ २० ॥

प्रभु सिद्धबुद्ध महोदयी, ध्याने थई लयलीन;
निज देवचंद्र पद ते लहे, नित्यात्म रस सुख पीन.जि० ॥२१॥

॥ इति वीनती समाप्त ॥

॥ श्री सिद्धाचल चैत्य परिवाडी स्तवन ॥

भरत नृप भायशुं ॥ ए देशी ॥

शेत्रुंज गिरि भेटीये ए भेटीये कर्म क्लेश ॥ शेत्रुंज० ॥
मिथ्या दोष निवारवा ए धारवो समकित देश ॥ शे० ॥१॥
काल अनादि भवोदधि ए भमतां भव समुदाय ॥ शे० ॥
यान पात्र सम जाणजो ए एहिज तीरथराय ॥ शे० ॥ २ ॥
मानव भव पामी करी ए ए तीरथ गुणगेह ॥ शे० ॥
जेणे नवि भेट्यो जुगतसुं ए ते दुःखीयामें रेह ॥ शे० ॥ ३ ॥
इहां सिद्धा पण कोडीसुं ए गणधर श्री पुंडरीक ॥ से० ॥
चैत्र शुकल पुनिम दिने ए निज सत्ता गुण ठीक ॥ से० ॥४॥
फागुण सुदि सातम लहू ए नेमि विनमी शिवनाथ ॥ से० ॥
चोसठि नमी पुत्री वसु ए आठमें केवलज्ञान ॥ से० ॥ ५ ॥
सागरमुनि तिग कोडीथी ए कोडीथी मुनि श्रीसार ॥ से० ॥
तेर कोडिथी सिववसु ए सोमश्री अणगार ॥ से० ॥ ६ ॥
ऋषभ वंश आदितजसा ए, तसु सुत आदित्य कांति ॥ से० ॥
एकलाख परिवारस्युं ए पाम्या परम प्रसांति ॥ से० ॥ ७ ॥
ऋषभ वंश मुनिवर बहु ए, गणधर कोडि असंख ॥ से० ॥
सिव पूहता सिद्धाचले ए निरमते निरकंख ॥ से० ॥ ८ ॥
दस कोडथी सिव लह्युं ए, द्रावड ने वारीखिल्ल ॥ से० ॥
चउदसहस निग्रंथथी ए दमितारी निसल्ल ॥ से० ॥ ९ ॥
आदिनाथ उपगारथी ए कोडि सत्तर अणगार ॥ से० ॥
श्री जितसेन मुनीश्वरु ए, पाम्या सुख अपार ॥ से० ॥ १० ॥
आणंद रचित भावना ए भावतां सिवपुर पत्त ॥ से० ॥
कालासी इग सहसथी ए, मुनी सुभद्र सय सत्त ॥ से० ॥११॥
रामचंद्र पण कोडिथी ए, नारदमुनि पिसताल ॥ से० ॥
पांडव कोडि वीसथी ए, सिव पो'त्या समकाल ॥ से० ॥१२॥

संब प्रद्युम्न मुनिश्वरु ए, मुनि साढीत्रिण कोड ॥ से० ॥
विमलाचलें निर्मल थया ए, ते प्रणमु बे करजोड ॥से० ॥१३॥
थावच्चा सुत सूकमुनि ए, सेलंग पथक सिद्ध ॥ से० ॥
वसुदेव धरणी सिव लह्यं ए, सहस पैंत्रीस प्रबुद्ध ॥ से० ॥१४॥
वेदरतिनिकरमता ए सामी सल चोफाळ ॥ से० ॥
श्री वससार अनंतता ए, पामी गुण संभाल ॥ से० ॥ १५ ॥
सिध्या बहु मुनि इण गिरिवरें ए, यादव वंश अनेक ॥ से० ॥
श्रेणिक कुल साधु साधवी ए, सिद्ध लह्या थिर टेक ॥से०॥१६॥
विद्याधर भूचर घणा ए, इहा पाम्या गुण कोडि ॥ से० ॥
आतम हेते एहनी ए, को न करी शकें होडि ॥ से०॥ १७ ॥
तिवारें तीरथपती ए, ए तीरथ बहुवार ॥ से० ॥
आव्या भविजन तारवा ए, निरमम निरहकार ॥ से०॥ १८ ॥
पुंडरगिरिनी सेवना ए, जेह करे भवी जीव ॥ से० ॥
ते आतम निरमल करी ए, पामे सुख सदीव ॥ से० ॥ १९ ॥
ए गिरिराजने सेवतां ए, पामे देवचद्र पद सार ॥ से० ॥
भव भव ए तीर्थ सेवना ए, होज्यो परम आधार.॥से०॥२०॥

॥ कलश ॥

ईम सकल तीरथ नाम सेत्रुंज शिखर मडण जिनवरो
श्री नाभिनंदन जग आनंदन विमल शिव सुख आगरो
सुचिपूर्ण चिद्घन ज्ञानदर्शन, सिद्ध उद्योत शुभ मनें
निज आत्मसत्ता शुद्ध करवा वीरजिन केवल दिनें
श्री सुविहित खरतर गच्छ जिनचंद्र सुरि साखा गुणनीलो
उवझायवर श्री राजसारु, सीस पाठक सिर तीलो

श्री ज्ञानधर्म्मसुस पाठक देवचंद्रे वीनव्यो जगहितकरो

इति चैत्यपरवाडी सिद्धखेत्रनी संपूर्ण ॥

॥ श्री सिद्धाचल स्तवन ॥

धन धन मुनिवर जे संजम वर्याजी परिहर्या पाप अढाररे
समता आदरी मुनि ममता तजीजी सम्यक् क्षमा दया भंडाररे
धन धन० ॥ १ ॥

रुषभ वंश द्रवड नृप पुत्र वेजी द्रविड अने बीजो वारिखिल्लरे
भूमि निमित्ते रणरसीया थकाजी तापस संयोगे काढ्यो सल्ल रे.
॥ धन० ॥ २ ॥

संजम लीधो भट दशकोडिथीजी पुहुता सिद्धाचल गिरिशृंग रे
अणसण करि निज तत्त्वे परिणम्याजी त्रिविध त्रिविध
वोसिरावी संगरे ॥ धन० ॥ ३ ॥

रत्नत्रयी रमी आत्म संवगीजी ओलखी छंडयो सर्व विभावरे
प्रत्याहार करि धरी धारणाजी चलगी निर्मल ध्यान स्वभावरे
॥ धन० ॥ ४ ॥

मैत्रीभाव भजी सवि जीवथीजी, करुणाभाव दुःखथी तेमरे
पंच गुणीनी नित्य प्रमोदताजी, शुभ अशुभ विपाके मध्या प्रेमरे
॥ धन० ॥ ५ ॥

पिंडस्थे अरिहंतादिक तणीजी, मुद्रा आसन शुभगाकार रे
ध्याता अतिशय उपगारीपणुंजी ध्यानपदस्थ थयो सुविचार रे
॥ धन० ॥ ६ ॥

निर्मल सिद्ध स्वभावे तन्मयीजी, ज्ञानादिक गुणथी थिर भावरे
सिद्ध शुद्ध गुणीगुण गावताजी, अविलंब्या रुपस्थ स्वभावरे
॥ धन० ॥ ७ ॥

सत्तागत आतमगुण एकताजी, ध्याता निज गुण पर्यायरे;
भेद स्वभाव थइ अभेदताजी, तन्मय तत्त्वे मोह विलायरे
॥ धन० ॥ ८ ॥

मोह क्षय थये घातिदल क्षय गयाजी, पाम्या निर्मल केवल ज्ञानरे
सिद्ध थया दसकोडि मुनिसरुजी, कार्तिक शुदि पुनम दिन
मानरे ॥ धन० ॥ ९ ॥

कार्तिक शुदि पुनम जे सिद्धाचलेजी, वदे पुजे धन नर तेहरे;
उत्तम गति पामी शिव सुख लहेजी, थाये ते अनुपम सुख
गेहरे ॥ धन० ॥ १० ॥

सिद्धाचल सिध्या मुनिरायनेजी, गावो ध्यावो धरि आणंदरे;
सद्गुरु पाठक श्री दीपचंदनोजी, शिष्य गणि भांखे देवचंदरे
॥ धन० ॥ ११ ॥

श्री सिद्धाचल स्तवन.

चालो सखि जिन वंदन जइए, श्री विमलाचल अंगेरे;
अनंत सिद्धि ध्यान सिद्धाचल, फरसी जे मन रंगे रे ॥ चालो॥१॥
गुरुआचारी संघे सुविहित, पोते पायविहारीरे;
एकल आहारी भूमि संथारी, सकल सचित्त परिहारीरे ॥चालो॥२॥
श्रावक श्राविका प्रभु गुण गाति, प्रभु भक्ति अति रातीरे;
तीर्थकरने नमने उजाती, गजगति चतुर सुहातीरे ॥चालो॥३॥
जिहां मुनि कोडि शिवगेह पहोता, निज अनुभव लसलसतीरे;
विषय दोष उपसम तरसि, रत्नत्रयीमें रमतीरे ॥ चालो ॥४॥
रुषभादिक जिन फरसित अगे, फरस्या पाप पुलाईरे;
सुद्ध गुण स्मरण गुण प्रगटे, ध्यान लहर लीलाईरे ॥चालो॥५॥
अतीत अनागतने वर्तमाने, ए तीर्थ शिर टिकोरे;
श्री शेत्रुंजा भक्ते पामे, देवचंद्र पद निकोरे ॥ चालो ॥ ६ ॥

श्री सिद्धाचल स्तवन.

चालो चालोने राज श्री सिद्धाचल जइए;
श्री विमलाचल तीरथ फरसि, आतम पावन करिए ॥चालो॥१॥

इण गिरिवर मुनिवर कोडि, आतम तत्त्व निपायो;
पूर्णानंद सहज अनुभव रस, महानंद पद पायो. ॥चालो ॥२॥

पुंडरिकप्रमुहा मुनिवर कोडि सकल विभाव गमायो;
भेदाभेद तत्त्व परिणतिथी, ध्यान अभेद उपायो ॥ चालो ॥३॥

जिनवर गणधर मुनिवर कोडि, ए तीरथ रंग राता;
शुद्ध शक्ति व्यक्ते गुणसिद्धि, त्रिभुवन जिनना त्राता ॥चालो॥४॥

ए तीरथ फरसे भव्य परित्ता, दुरगति उच्छेद;
सम्यग् दरिसण निर्मल कारण, निज आनंद अभेद ॥चालो॥५॥

संवत अढार चीडोत्तर वरसे, सित मृगसर तेरसीये;
श्री सुरतथी भक्ति हरखथी, संघ सहित उल्लसीये ॥ चालो ॥६॥

कचरा कीका जिनवर भक्ति, रुपचंद (गुणवंत) जीइए;
श्री संघने प्रभुजी भेटाव्या, जगपति प्रथम जिणंद ॥चालो ॥७॥

ज्ञानानंदित त्रिभुवन वंदित, परमेश्वर गुण भीना;
देवचंद्र पद पामे अद्भूत, परम मंगज लयलीना ॥चालो॥ ॥८॥



॥ श्री वीरप्रभुनुं दीवालीनुं स्तवन ॥

मारग देशक मोक्षनोरे, केवलज्ञान निधान ॥
भावदया सागर प्रभु रे, पर उपगारी प्रधानो रे ॥१॥

वीर प्रभु सिद्ध थया, संघ सकल आधारो रे ॥
हवे इण भरतमां, कोण करशे उपगारो रे ॥ वीर०॥२॥

नाथ विहूणुं सैन्य ज्यूं रे, वीर विहूणोरे संघ ॥
साधे कोण आधारथीरे, परमानंद अभंगो रे॥ नीर० ॥३॥

मात विहूणो वाल ज्युरे, अरहो परहो अथडाय ॥
वीर विहूणा जीवडारे, आकुल व्याकुल थाय रे ॥ वी० ॥४॥

मशय छेदक वीरनोरे, विरह ते केम खमाय ॥
जे दीठे सुख उपजेरे, ते विण केम रहेवाय रे ॥ वी० ॥ ५ ॥

निर्यामक भव समुद्रनोरे, भव अडवी सत्थवाह ॥
ते परमेश्वर नवि मलेरे, केम वाधे उत्साह रे ॥ वी० ॥ ६ ॥

वीर थकां पण श्रुत तणोरे, हतो परम आधार ॥
हवे इहां श्रुत आधारछेरे, अहो जिन मुद्रा साररे॥ वी०॥ ७ ॥

त्रण काले भवि जीवनेरे, आगमथी आणंद ॥
सेवो ध्यावो भवि जनारे, जिन पडिमा सुख कंदरे ॥ वी० ॥८॥

गणधर आचारज मुनिरे, सहुने एणि परे सिद्धि ॥
भव भव आगम संगथीरे, देवचंद्र पद लीधरे ॥ वी० ॥ ९ ॥

॥ श्री नवानगर आदिजिन स्तवन ॥

नवानगरमें भेटीए जिनवर जयकारी,
परमानद महारसी मूर्ति मनोहारी नवा० ॥ १ ॥

घणा दीवसनी हुंसडी हुती मनमांहे,
ते सवि आज सफल थइ प्रणमे जगनाहे. नवा० ॥ २ ॥

दरिसण दीठे देवनां दुःख जाए दूरे,
चिदानंद रस उपजे समता रस पूरे. नवा० ॥ ३ ॥

जिन मुद्रा जिनवर समी शिव साधन भाखी,
श्री अरिहंत अवलबने पूर्णता दाखी. नवा० ॥ ४ ॥

पण संवर जिन भक्तिनो फल सरखो तोल्यो,
हितसुख निश्चयपणो आगममें बोल्यो. नवा० ॥ ५ ॥

तुंगीया नगरीना श्रावके जिन पूजा कीधी,
भगवइमें शंख पुखली पूजन विध लीधी. ॥ ६ ॥

रीखभदत्त अधिकारमें उवाइ उवंगे,
विहरती जिन पुष्फ पूजना अधिकार प्रसंगे. नवा० ॥७॥

भगवइ अंगे साधुजी जिन प्रतिमा वंदे,
आवश्यकमां पूजना अनुमोदे आणंदे. नवा० ॥ ८ ॥

भत्त पयन्ना सूत्रमें नव खेत्र वखाण्यां,
महा निशीथे पूजना फल अद्भूत जाण्यां. नवा० ॥ ९ ॥

भगवइ अनुजोगद्वारमें निर्जुक्ति प्रमाणी,
ते में पूजा चैतन्यनी वीतरागे वखाणी. नवा० ॥ १० ॥

संपाविओ कामेककुं जिन आगळ नमतां,
संपत्ताणं उच्चर्युं प्रतिमा संस्तवतां. नवा० ॥ ११ ॥

आवश्यक पंचांगनुं पुस्तक थयुं पहेलुं,
जे अधिकार तिहां लख्युं विधिपूर्वक वहेलुं. नवा० ॥१२॥

अन्य सूत्र लखतां थकां न लखुं ते विगते,
ते माटे शंका कशी जिन पूजा भगते. नवा० ॥ १३ ॥

पुस्तकारुढ जीणे कर्युं तसु वचन कल्लोल,
चूर्णिमे पूजा कही शी शंका भाली. नवा. ॥ १४ ॥

आगम अरथ लह्या विना आगम उत्थापे,
ते तप खप करता थका नवी भव भय कापे नवा० ॥१५॥

विनय वेयावच्च दानमें हिंसा नवि लेखे,
अछति हिंसा दाखवी कां पूजा उवेखे. नवा० ॥ १६ ॥

नाम निक्षेपो उच्चरी नमतां आणंदे,
नाम थापना दुग भणी शे माटे न वंदे. नवा० ॥ १७ ॥
एम आलोची चित्तमां जिन प्रतिमा वंदो,
जिन शासन उद्दिपणां करतां आणंदो. नवा० ॥ १८ ॥
शेठ विहार सुहामणो आदिसर स्वामी,
वंदो पूजो भविजना पूरण सुख कामी. नवा० ॥ १९ ॥

कलस.

एम मोक्ष कारण विघन वारण तरण तारण गुणकरी,
जिनराज पडिमा नमण पूजा सूत्र साखे आदरी;
सुचि ध्यान वाधे सिद्ध साधे कर्म कलेस सहु हरी,
श्री दीपचद्र पसाय भांखी देवचंद्र दिले धरी.

द्रुपद.

आतमभावे रमो हो चेतन आतमभावे रमो ए आंकणी
परभावे रमतां ते चेतन, काल अनंत गमो. हो चे० ॥ १ ॥
रागादिकशुं मलीने चेतन, पुद्गल संग भम्यो,
चोगति मांहे गमन करता, निज आतमने दमो. हो० ॥ २ ॥
ज्ञानादिक गुण रंग धरीने, कर्मको संग वमो,
आतम अनुभव ध्यान धरंतां, शीव रमणीशुं रमो. हो० ॥३॥
परमातमनुं ध्यान करता, भवथितीमां न भमो,
देवचंद्र परमातम साहिब, स्वामी करीने नमो. हो० ॥ ४ ॥

इति द्रुपद सपूर्ण

॥ समवसरणनुं स्तवन. ॥

आज गइती हुं समवसरणमां जिन वचनामृत पीवारे,
श्री परमेश्वर वंदनकमल छवी निरख निरख हरखेवारे. आ० ॥१॥
तिनभुवन नायक शुद्धातम तत्त्वामृतरस वुठ्ठुरे,
सकल भविक वसुधानी लाणी, मारुं मन पिण तुठ्ठुरे. आ० ॥२॥

मनमोहन जिनवरजी मुजने, अनुभव पियालो दीधोरे,
पूरणानंद अक्षय अविचलरस, भक्ति पवित्र थइ पीधोरे. आ. ॥३॥
ज्ञानसुधा लालीनी लहेरे, अनादि विभाव विसार्योरे,
सम्यग्ज्ञान सहज अनुभवरस, शुचि निज बोध समार्योरे. आ० ।४।
भोली सखीयो एम शुं जोवो, मोह मगन मत राचोरे,
देवचंद्र प्रभुशुं एकताने, मिलवो ते सुख साचोरे. आ० ॥५॥

॥ कुंभ स्थापना स्तवन ॥

धरम उत्समसमै जैनपद कारणै उत्तम मंगल आचरे ए,
भावमंगल तिहां देव अरिहंत प्रभु एहथी परम मंगल मंगल वरे ए;
तेहना नामने जाउं हुं भामणे, खिणखिण हरख समरण करे ए,
पांच कल्याणके जीम सुरपति करे, तिम जिन भक्ति भवि आदरेए. १
भावमंगलतणि पुष्टता कारणें, द्रव्यमंगल भला कीजीए ए,
तिहां गुणे पूर्णता इच्छता भविकजन, कुंभ थिरपूरण लीजीए ए;
पदमआसन ठव्यो परम छत्रे ठव्यो, मंत्र पवित्रथी जपीए ए,
जिनवर जिनमणि दीशि हरखभरी,हियडे पूरण कलशजथी पीयेए २
माहरा नाथने परम मंगल होजो, मंगल संघ चउविह भणे ए,
मंगल तीर्थने मंगल चैत्यने, मंगलनेह करता भणीए;
जैनशासनतणो हरख मंगल करें, तेन आनंद अति उपजै ए,
चवन अवसर समे माताना गर्भमें, पूरै हरखजै संपजे ए. ॥३॥
तिम प्रासादनी थापना अवसरे कुंभ थापन समें हरखीयें ए,
जेम संसारना मंगल करे ए
तिम जिन धर्मनी वृद्धिने कारणे, श्रावक सुविधि मंगल धरे ए
परम आनंदवर धन्यता मानता गीत मंगल धरी उच्चरे ए;
देवना देवने मंगल कीजता देवचंद्र पद अनुसरे ए. ॥ ४ ॥

अथ श्री सहस्त्रकूट (१०२४) जिनप्रतिमा स्तवन.

देशी रसीयानी

सहस्त्रकूट जिन प्रतिमा वदीये,मन धरी अधिक जगीस विवेकी;
सुंदर मूरति अति सोहामणी, एकसहसने चोवीस. वि० सह०
(ए टेक) ॥ १ ॥

अतीत अनागत ने वर्त्तमाननी,[1]त्रण्य चोवीसी हो सार विवेकी;
बोतेर जिनवर एकएक खेत्रमें,प्रणमीजे वारंवार. वि० सह०२॥

पांच भरत वळी एरवत पांचमे, सरखी रीत समाज विवेकी;
दश चेत्रे थइ थाए सातसें, वीस अधिक जिनराज. वि०सह३॥

पंचविदेहे जिनवर शोठ सो (१६०) उत्कृष्ट एहीज टेव विवेकी;
जिन समान जिन प्रतिमा ओळखी,भक्ती कीजे हो सेव.वि०४॥

पंचकल्याणक जिन चोवीसना, [3]वीसासो(१२०)तेहीज थाय विवेकी
ते कल्याणक त्रिधिशुं साचवी,लाभ अनंत कहाय.वि०सह०५॥

पंच विदेहें हो हमणां विहरता, [4]वीस अछे अरिहंत विवेकी;
शाश्वताजिन ऋषभानन आदिदे चार(४)अनादि अनंत.वि०६॥

एकसहस चोवीस जिनवर तणी, प्रतिमा एकण ठाम विवेकी;
पूजा करतां जनम सफल होवे, सीझे वंछीत काम. वि० ७॥

तीनकाल अढाइ द्वीपमा, केवलनाण पहाण विवेकी;
कल्याणक करी प्रभु इहां सामठा,लाभे गुणमणी खांण.वि०८॥

१–७२०
२–१६०
३–१२०
४–२०
५– ४
१०२४

सहसकूट सिद्धाचल उपरें, तीमहिज धरणी विहार विवेकी;
तेथी अद्भुत ए छे स्थापना, पाटण[६] नगर मझार. वि० ९॥
तीर्थ सकल वळी तीर्थंकर सहु, एणें पूजा ते पूजाय विवेकी;
एक जीह(जीव्हा)थी महिमा एहनो,किणभातें कहेवाय.वि०१०॥
श्रीमाळी कुळदीपक जेतसी, शेठ सुगुणभंडार विवेकी;
तस सुत शेठ शिरोमणि तेजसी,पाटण नगरमें दातार.वि०११॥
तेणें ए बिंब भराव्या भावशुं, सहस अधिका चोवीस विवेकी,
कीधी प्रतिष्टा पुनमगच्छधरु, भावप्रभसूरीस. वि०१२॥
सहस जिनेसर विधीशुं पूजसे, द्रव्यभाव शुचि होय विवेकी;
ए भव परभव परम सुखी होवे,लहस्यें नवनिधि सोय.वि०१३॥
जिनवर भक्ति करें मनरंगशुं, भविजननी ए छे रीत विवेकी,
दीपचंद्र सम श्री जिनराजजी, देवचंद्रनी ए प्रीत वि०॥१४॥

इति सहस्रकूट स्तवन समाप्त ॥

॥ पद ॥ राग होरी. ॥

अजितनाथ चरण तोरे आयो अ० ॥
तुं मनमोहन नाथ हमारो, त्रिभुवनजनकुं सुख प्यारो ॥
अरी अरी लाला त्रि०॥
तृष्णा ताप निवारण वारो,बावना चंदनसें अति प्यारो॥अ०॥१॥
माहा माहांग रक्तंग करीरो, तस भेदनकुं वज्र अटारो ॥अ०॥
धांगधरा पुरमां मनोहारो प्रासाद बन्यो अतिसारो ॥अ०॥२॥
समता रस वरषित घन धारो,समकित बीज उपावत क्यारो॥अ०
देवचंद्र गुणि गुण संभारो,एही अशरण शरणता ऊदारो॥अ०॥३॥

---

६ पाटणमां तांगडीयावाडामां सहस्रफणा पार्श्वनाथजी प्रमुख सात देहेरासरजी छे तेमां १ एक सहस्रकूटछे.

॥ श्री ज्ञान बहुमान नमस्कार ॥

सकल वस्तु प्रतिभाश भानु निरमल सुख कारण,
सम्यग् दर्शन पुष्ट हेतु भवजल निधि तारण;
संयम तप आनंद कंद अन्नाण निवारण,
मार विकार प्रचार ताप तापित जिन ठारण ॥ १ ॥
स्याद्वाद परिणाम धर्म परणति पडि बोहण,
साहु साहुणी संघ सर्व आराधन सोहण;
मोहतिमिर विध्वंस सूर मिथ्यात्व पणासण,
आतम शक्ति अनंत शुद्ध प्रभुता परगासण ॥ २ ॥
मति श्रुति अवधि विशुद्ध नाण मणपज्जव केवल,
भेद पचास क्षायोपशमिक एक क्षायिक निरमल;
दोय परोक्ष प्रथम तिहा दुग परतक्ष देशतः,
सकल प्रतक्ष प्रकाशभाम ध्रुव केवल अपर मित ॥ ३ ॥
धर्म्म सकलनो मूल शुद्ध त्रिपदी जिन भाषै,
बाहिर अंग प्रधान बंध गणधर सुप्रकाशै;
श्री निर्युक्तिभाष्य पडिशाखा दीपै,
चूरण टीका पत्र पुष्प संशय सब जीपै. ॥ ४ ॥
पचांगीसार बोध कह्यो जित पचम अंगे,
नंदी अनुयोग द्वार साख मानो मनरगे;
वीर परंपर जीत अनुभव उपगारी,
अभ्यासो आगम अगम निरुपम सुखकारी. ॥ ५ ॥
मोह पंकहर नीर सिद्धांत अनाधै,
देवचंद्र आणा सहित नय भंग अगाधै;
ए श्रुतज्ञान सोहामणो सकल मोक्ष सुरकंद,
भगतें सेवो भविकजन पामो परमानंद ॥ ६ ॥

॥ श्री सिद्धाचल स्तुति ॥

विमलाचलमंडण जीनवर आदि जीणंद,
निर्भय नीरमोही केवळज्ञान दिणंद;
जे पुरव नवाणुं वार धरी आणंद,
शेत्रुंज गिरिशीखरे समवसर्या सुखकंद ॥ १ ॥

इण चउवीसीमां रुखभादिक जिनराय,
वली काल अतीते अनंत चउवीसी थाय;
ते सवि इण गिरिवर आवी फरसी जाय,
इम भावी काले आवसे सवि मुनिराय. ॥ २ ॥

श्री रुषभना गणधर पुंडरिक गुणवंत,
द्वादश अंगरचना कीधी जेण महंत;
सवि आगम मांहे शेत्रुंज महिम महंत,
भाविजिन गणधर सेवो करी थिर चित्त. ॥ ३ ॥

चक्केसरि गोमुह कपर्दि पमुह सुरसार,
जसु सेवा कारण थापि इंद्र उदार;
देवचंद्र गणिभावे भविजनने आधार,
सवी तिरथ मांहे सिद्धाचल शीरदार. ॥ ४ ॥

॥ वीस स्थानक स्तुति ॥

अरिहंत सिद्ध पवयण आचारज थविराण,
उवज्ञाय साहु नाणदंसण विनयपहाण;
चारित्र ब्रह्म किरिया तप गोयम जिनभाण,
संजमनाणी श्रुत संघ सेवो वीसे ठाण ॥ १ ॥

उत्कृष्टे जिनवर एकसो सित्तेर धीर,
वली काळज घन्ये जिनवर वीम गंभीर;
जिन थाय अनंत अतीत अनागत काल,
ए वीसे थानिक आराधी गुण माल. ॥ २ ॥

आवश्यक बे वेला जिन वंदन त्रिणि काल,
थानक पद गीणवो सहस दोय सुकमाल;
काउसग्ग गुण स्तवना पूजा प्रभावनासार,
इम शासन वच्छल करतां भवनो पार. ॥ ३

समरीजे अहोनिशि गुणरागी सुरसाथ,
जख जखणी सुरपति वैयावच्च कर नाथ;
थानक तप विधिसुं जे सेवे मन रंग,
देवचंद्र आणाए सानिधिकरे तसु चंग. ॥ ४ ॥

॥ गिरनार स्तुति ॥

यादव कुलमंडण नेमिनाथ जगनाथ,
त्रिभुवण जनमोहन शोभव शिवपुरसाथ;
गिरनार शिखर शिर दीक्षानाण निर्व्वाण,
सोरिपुर नयरे चवण जनम सुखकार. ॥ १ ॥

इम भरते पंचे इरवते वलीसार.
चोवीसी जिननी थाये जन आधार;
तसु पंच कल्याणक वंदे पूजे जेह,
निरुपम सुख संपाचि निश्चे पामे तेह ॥ २ ॥

जीन मुख लही त्रीपदी गुंथ्या जेह,
वर अंग अग्यारह दृष्टिवाद गुण गेह;
त्रिणि काले जिनवर कल्याणक विधितेह,
समकित थिरकारण सेवो धरीये सनेह. ॥ ३ ॥

श्री नेमिजीणेसर शासन विनयरत्त,
जिनवर कल्याणक आराधक भविचित्त;
देवचंद्रने शासन सानिधि कर नित मेव,
समरीजे अहनिशि सा अंबाइ देव. ॥ ४ ॥



॥ अथ श्री पंडित देवचंद्रजी कृत ॥

साधुनी पंच भावना ॥

॥ दोहरा ॥

स्वस्ति सीमंधर परम, धर्म ध्यान सुख ठाम ।
स्याद्वाद परिणाम धर, प्रणमुं चेतनराम ॥ १ ॥

महावीर जिनवर नमी, भद्रबाहु सूरीश ।
वदी श्री जिनभद्र गणि, श्री चेमेंद्र मुनीश ॥ २ ॥

सद्गुरु शासन देव नमी, वृहत्कल्प अनुसार ।
शुद्ध भावना साधुनी, भाविश पच प्रकार ॥ ३ ॥

इंद्री योग कषायने, जीपे मुनि निशंक ।
इण जीते कुध्यान जय, जाए चित्त तरंग ॥ ४ ॥

प्रथम भावना श्रुततणी, बीजी तप तिय सत्त्व,
तुरिय एकता भावना, पंचम भाव सुतत्त्व ॥ ५ ॥

श्रुतभावना मन थिर करे, टाले भवनो खेद ।
तपभावना काया दमे, वामे वेद उमेद ॥ ६ ॥

सत्त्वभाव निर्भय दशा, निज लघुता इक भाव ।
तत्त्वभावना आतम गुण, सिद्ध साधना दाव ॥ ७ ॥

॥ ढाल १ ली ॥

लोक स्वरूप विचारो आतम हित भणीरे ॥ ए देशी ॥

श्रुत अभ्यास करो मुनिवर सदारे, अतिचार सहु टालि ।
हीण अधिक अक्षर मत उच्चरोरे, शब्द अरथ संभालि ॥श्रुत० ॥१॥

सूक्ष्म अर्थ अगोचर द्रष्टिथीरे, रूपी रूप विहीण ।
जेह अतीत अनागत वर्त्ततारे, जाणे ज्ञानी लीन ॥ श्रुत० ॥२॥

नित्य अनित्य एक अनेकतारे, सदसद भाव स्वरूप ।
छ ए भाव एक द्रव्य परिणम्यारे, एक समयमां अनूप ॥श्रु०॥३॥

उत्सर्ग अपवादपदे करीरे, जाणे सहु श्रुत चाल ।
वचन विरोध निवारे युक्तिथीरे, थापे दूषण टाल ॥ श्रुत०॥४॥

द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक धरेरे, नयगम भंग अनेक ।
नय सामान्य विशेष बेहु ग्रहेरे, लोकालोक विवेक ॥ श्रुत० ।५॥

नंदिसूत्रे उपगारी कह्योरे, वलि अशुच्चा ठाम ।
द्रव्यश्रुतने वांद्यो गणधरेरे, भगवई अंगे नाम ॥ श्रुत० ॥६॥

श्रूत अभ्यासे जिनपद पामिएरे, छठे अंगे साख ।
श्रुतनाणी केवलनाणी समोरे, पन्नवणिज्जे भाख ॥ श्रुत०॥७॥

श्रुतधारी आराधक सर्व ते रे, जाणे अर्थ स्वभाव ।
निज आतम परमातम सम ग्रहेरे, ध्यावे ते नयदाव ॥श्रुत०॥८॥

संयम दरशन ते ज्ञाने वधेरे, ध्याने शिव साधंत ।
भव स्वरूप चउ गतिनो लखेरे, तेणे संसार तजंत ॥श्रुत०॥९॥

इंद्रिय सुख चंचल जाणी तजेरे, नव नव अर्थ तरंग ।
जिम जिम पामे तिम मन उल्लसेरे, वसे न चित्त अनंग॥श्रु०॥१०॥

काल असंख्याताना भव लखेरे, उपदेशक पण तेह ।
परभव साथी आलंबन खरोरे, चरण विना शिव गेह ॥श्रु०॥११॥

पंचम काले श्रुत बल पण घट्योरे, तो पण ए आधार ।
देवचंद्र जिन मतनो तत्त्व ए रे, श्रुतश्युं धरज्यो प्यार ॥श्रु०॥१२॥

॥ ढाल २ जी ॥

॥ अनुमति दीधी माए रोवती ॥ ए देशी ॥

रयणावली कनकावली, मुत्तावली गुण रयण ।
वज्जमध्यने जवमध्य ए, तप करीने हो जीपो रिपु मयण ॥१॥

भवियण तप गुण आदरो, तप तेजेरे छीजे सहु कर्म ।
विषय विकार सहु टले, मन गंजे रे भंजे भव भर्म ॥भवि०॥२॥

जोगे जय इंद्रिय जय तदा, तप जाणो हो कर्म खंडण सार ।
उवहाणे योग दुहा करी, शिव साधेरे सूधा अणगार ॥भ०॥३॥

जिम जिम प्रतिज्ञा द्रढ थको, वैरागीओ तपसी मुनिराय ।
तिमतिम अशुभ दल छीजवे, रवि तेजेरे जेम शीत विलाय॥भ०॥४॥

जे भिक्षु पडिमा आदरे, आसन अकप सुधीर ।
अति लीन समता भावमां, तृण पेरे हो जाणंत शरीर ॥भ०॥५॥

जिण साधु तप तलवारथी, खंड्यो छे हो अरि मोह गयद ।
तिण साधुनो हुं दास छुं, नित्य वंदुरे तस पय अरविंद ॥भ० ६॥

आचार सूयगडांगमां, तिम कह्यो हो भगवई अंग ।
उत्तराध्ययन गुणतीशमें, तप सगे हो सहु कर्मनो भंग ॥भ०॥७॥

ते दुविध दुक्कर तप तपे, भव पाम आश विरक्त ।
धन्य ! साधु मुनि ढंढण समा, ऋषि खंधक हो तीलग कुरुदत्त ॥भ.८

निज आतम कंचन भणी, तप अग्नि करी शोधंत ।
नव नवि लब्धि बल छते, उपसर्ग हो ते सहंत ॥ भ० ॥ ९ ॥

धन्य ! तेह जे धन गृह तजी, तन स्नेहनो करी छेह ।
निःसंग वनवासे वसे, तपधारी हो ते अभिग्रह गेह ॥भ०॥१०॥

मेतारज सुकोसलो, वली गजसुकुमाल ।
सनतकुमार चक्री पेरे, तन ममता टाल ॥ रे जीव० ॥ २३ ॥

कष्ट पड्यां समता रमे, निज आतम ध्याय ।
देवचंद्र तिण मुनि तणा, नित वंदु पाय ॥ रे जीव० ॥२४॥

॥ ढाल ४ थी ॥

॥ प्राणी धरीए संवेग विचार ॥ ए देशी ॥

ज्ञान ध्यान चारित्रने रे, जो द्रढ करवा चाह ।
तो एकाकी विहरतां रे, जिनकल्पादि साय रे
प्राणी एकल भावना भाव, शिव मारग साधन दाव रे ॥
॥ प्राणी० ए आंकणी ॥ १ ॥

साधु भणी गृहवासनी रे, छुटी ममता तेह ।
तो पण गच्छवासीपणो रे,गण गुरु पर छे नेहरे ॥प्राणी०॥२॥

वन मृगनी परे तेहथीरे, छांडि सकल प्रतिबंध ।
तुं एकाकी अनादिनो रे,किणथी तुज प्रतिबंध रे ॥प्राणी०॥३॥

शत्रु मित्रता सर्वथी रे, पामी वार अनंत ।
कोण सयण दुश्मन किस्यो रे,काले सहुनो अंतरे॥प्राणी०॥४॥

बांधे करम जीव एकलोरे. भोगवे पण ते एक ।
किण ऊपर किण वातनी रे, राग द्वेषनी टेक रे ॥प्राणी०॥५॥

जो निज एकपणुं ग्रहेरे, छोडी सकल परभाव ।
शुद्धातम ज्ञानादिशुं रे एक स्वरूपे भाव रे ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥

आव्यो पण तुं एकलो रे, जाईश पण तुं एक ।
तो ए सर्व कुटुंबथी रे, प्रीत किसी अविवेक रे ॥ प्राणी० ॥७॥

वन मांहे गज सिंहादिथी रे विहरतां न टले जेह ।
जिण आसन रवि आथमेरे,तिण आसन निशि छेहरे॥प्राणी०॥८

आहार ग्रहे तप पारणेजी, करमां लेप विहीण ।
एक वार पाणी पीवता रे,वनचारी चित्त अदीनरे ॥प्राणी०॥९॥
एह दोष पर ग्रहणथीरे, पर संगे गुण हाण ।
पर धन ग्राही चोर ते रे,एकपणो सुखखाण रे ॥प्राणी०॥१०॥
पर संजोगथी बंध छेरे, पर वियोगथी मोक्ष ।
तेणे तजी पर मेलावडोरे,एकपणो निज पोषरे ॥प्राणी०॥११॥
जन्म न पाम्यो साथ कोरे, साथ न मरशे कोय ।
दुःख वहेंचवा को नहींरे,क्षणभंगुर सहु लोयरे ॥प्राणी०॥१२॥
परिजन मरतो देखीनेरे, शोक करे जन मूढ ।
अवसरे वारो आपणोरे, सहु जननी रूढरे ॥ प्राणी० ॥१३॥
सुरपति चक्री हरी बलीरे, एकला परभव जाय ।
तन धन परिजन सहु मिलीरे;कोइ सखाय न थायरे॥प्राणी० ।१४।
ज्ञायक रूप हुं एक छुंरे, ज्ञानादिक गुणवंत ।
बाह्य जोग सहु अवर छेरे,पाम्यो वार अनंतरे ॥प्राणी०॥१५॥
करकंडु नमिने गाईयेरे, दुम्मुह प्रमुख ऋषिराय ।
मृगापुत्र हरिकेशीनारे, वंदुं हुं नित पायरे ॥ प्राणी०॥ १६ ॥
साधु चिलाती सुत भलोरे, वली अनाथी तेम ।
एम मुनि गुण अनुमोदतांरे,देवचंद्र सुख खेमरे ॥प्राणी०॥१७॥

॥ ढाल ५ मी ॥

इणिपरे चंचल आउखुं जीव जाणोरे ॥ ए देशी ॥

चेतन ए तन कारिमो तुमे ध्यावोरे, शुद्ध निरंजन देव ।
भविक तुमे ध्यावोरे, शुद्ध स्वरूप अनूप ॥ भविक० ॥ १ ॥
नरभव श्रावक कुल लह्यो ॥तु०॥ लाधो समकित सार॥भविक०॥
जिन आगम रुचिशुं सुणो ॥तु०॥ आलस निंद निवार॥भविक०॥

समयांतर सहभावनो ॥ तु० ॥ दर्शन ज्ञान अनंत ॥ भ० ॥
आतम भावे थिर सदा ॥ तु०॥ अच्चय चरण महंत ॥भ०॥३॥

तिन लोक त्रिहुं कालनी ॥तु०॥ परिणति तीन प्रकार ॥भ०॥
एक समे जाणे तिणे ॥तु०॥ नाण अनंत अपार ॥भ०॥ ४ ॥

सकल दोषहर शाश्वतो ॥ तु० ॥ वीरज परम अदीन ॥भ०॥
सूक्ष्म तनु बंधन विना ॥तु०॥ अवगाहना स्वाधीन ॥भ०॥५॥

पुद्गल सकल विवेकथी ॥ तु० ॥ शुद्ध अमूर्ति रूप ॥ भ० ॥
इंद्रिय सुख निस्पृह थई ॥तु०॥ अकषाय अबाह स्वरूप ॥भ०॥६॥

द्रव्यतणा परिणामथी ॥ तु० ॥ अगुरु लघुत्व अनित्य ॥भ०॥
सत्य स्वभावमयी सदा ॥तु०॥ असत्य तजो तुमे मित्त ॥भ०॥७॥

निज गुण रमतो राम ए, तु० सकल अकल गुण खाण ॥भ०॥
परमातम पर ज्योति ए, तु० अलख अलेप वखाण भ० ॥८॥

पंच पूज्यथी पूज्य ए, तु० सर्व ध्येयथी ध्येय ॥ भ० ॥
ध्याता ध्यान अरू ध्येय ए, तु० निश्चे अभेद ए श्रेय ॥ भ० ॥९॥

अनुभव करतां एहनो, तु० थाए परम प्रमोद ॥ भ० ॥
एक रूप अभ्यासशुं, तु० शिव सुख छे तसु गोद ॥ भ० ॥१०॥

बंध अबंध ए आतमा, तु० करता अकरता एह ॥ भ० ॥
एह भोगता अभोगता, तु० स्याद्वाद गुण गेह ॥ भ० ॥११॥

एक अनेक स्वरूप ए, तु० नित्य अनित्य अनादि ॥ भ० ॥
सदसद्भावे परिणम्या, तु० मुक्त सकल उन्माद ॥ भ० ॥१२॥

जप तप करिया खपथकी, तु० अष्ट करम न विलाय ॥ भ० ॥
ते सहु आतम ध्यानथी, तु० क्षणमें खेरू थाय ॥ भ० ॥ १३ ॥

शुद्धातम अनुभव विना, तु० बंध हेतु शुभ चाल ॥ भ० ॥
आतम परिणामे रम्या, तु० एहज आस्रव पाल ॥ भ० ॥१४॥

ईम जाणी निज आतमा, तु० वरजी सकल उपाध ॥ भ० ॥
उपादेय अवलंबने, तु० परम सहोदर साध ॥ भ० ॥ १५ ॥
भरत ईलासुत तेतली, तु० ईत्यादिक मुनि वृंद ॥ भ० ॥
आतम ध्यानथी ए तर्या, तु० प्रणमे ते देवचंद्र ॥भ० ॥१६॥

॥ ढाल ६ ठी ॥

शैलग शेत्रुजे सिद्धया ॥ ए देशी ॥

भावना मुक्ति निशाणी जाणी, भावो आसक्ति आणीजी ।
योग कषाय कपटनी हाणी, थाये निर्मल जाणीजी । भा० १
पंच भावना ए मुनि मनने, संवर खाणी वखाणीजी ।
बृहत्कल्प सूत्रनी वाणी, दीठी तेम कहाणीजी ॥ भा० ॥ २ ॥
कर्म कतरणी शिव निसरणी, ध्यान ठाण अनुसरणीजी ।
चेतन रामतणी ए घरणी, भव समुद्र दुःख हरणीजी ॥ भा०॥३॥
जयवंता पाठक गुण धारी, राजसागर सुविचारीजी ।
निर्मल ज्ञान धरम संभाली, पाठक सहु हितकारीजी ॥ भा०॥४॥
राजहस सद्गुरु सुपसाये, देवचद्र गुण गायजी ।
भविक जीव जे भावना भावे, तेह अमित सुख पायजी ॥ भा०॥५॥
जेसलमेरी शाह सुत्यागी, वर्द्धमान वड भागीजी ।
पुत्र कलत्र सकल सोभागी, साधु गुणना रागीजी ॥ भा०॥६॥
तस आग्रहथी भावना भाई, ढालबंधमां गाईजी ।
भणशे गुणशे जे ए ज्ञाता, लहेशे ते सुख शाताजी ॥ भा०॥७॥
मन शुद्ध पंच भावना भावो, पावन जिन गुण पात्रोजी ।
मन मुनिवर गुण सग वसावो, सुख संपति गृह थावोजी ॥ भा०॥८॥



अष्ट प्रवचन मातानी सज्झायो.

॥ दोहरा ॥

सुकृत कल्पतरु श्रेणीनी, वर उत्तरकुरु भोमि ।
अध्यात्म रस शशि कला, श्री जिन वाणी भौमि (नौमि ?)॥१॥
दीपचंद पाठक सुगुरु, पय वंदी अवदात ।
सार श्रमण गुण भावना, गाइशुं प्रवचन मात ॥ २ ॥
जननी पुत्र हित शुभकरी, तिम ए पवयण माय ।
चारित्र गुण गणवर्द्धनी, निरमल शिव सुखदाय ॥ ३ ॥
भाव अयोगी करण रुचि, मुनिवर गुप्ति धरंत ।
जो गुप्ति ना रहि शके, तो सुमते विचरंत ॥ ४ ॥
गुप्ति एक संवरमयी, उछरंगीक परिणाम ।
संवर निर्झर समितिथी, अपवादे गुणधाम ॥ ५ ॥
द्रव्ये द्रव्यत चरणता, भावे भाव चरित्त ।
भाव द्रष्टि द्रव्यत क्रिया, सेवि लहो शिव मित्त ॥ ६ ॥
आतम गुण प्राग्भावथी, जे साधक परिणाम ।
समिति गुप्ति ते जिन कहे, साध्य सिद्धि शिव ठाम ॥ ७ ॥
निश्चय करण रुचि थई, समिति गुप्तिधर साधि ।
परम अहिंसक भावथी, आराधे निरुपाधि ॥ ८ ॥
परम महोदय साधवा, जेह थया उजमाल ।
श्रमण भिक्षु माहण यति, गावुं तस गुणमाल ॥ ९ ॥

॥ ढाल पहेली ॥

प्रथम गोवालणतणे भवेजी ॥ ए देशी ॥

प्रथम अहिंसक व्रततणीजी, उत्तम भावना एह ॥
संवर कारण उपदिशीजी, समता रस गुण गेह ॥

मुनीसर इरिया समिति संभार, आश्रव कर तनु योगथीजी,
दुष्ट चपलता वार ॥ मुनीसर० ॥ १ ॥
काय गुप्ति उत्सर्गनोजी, प्रथम समिति अपवाद ॥
इरिया ते जे चालवोजी, धरि आगम विधिवाद. मुनी० ॥२॥
ज्ञान ध्यान सिज्झायमांजी, थिर बेठा मुनिराज ॥
श्याने चपलपणो करेजी, अनुभव रस सुखराज ॥ मुनी० ॥३॥
मुनि ऊठे वसही थकीजी, पामी कारण च्यार ।
जिन वंदन ग्रामांतरेजी, के आहार निहार ॥ मुनी० ॥ ४ ॥
परम चरण संवर धरुंजी, सर्व जाण जिन दीठ ॥
शुचि समता रुचि ऊपजेजी, तिणे मुनिने ए ईठ ॥ मुनी० ॥५॥
राग वधे थिर भावथीजी, ज्ञाने विना परमाद ॥
वीतरागता ईहताजी, विचरे मुनि साल्हाद ॥ मुनी० ॥ ६ ॥
ए शरीर भव मूल छे जी, तसु पोषक आहार ।
जाव अयोगी नवि हुवेजी, त्यां अनादि आचार ॥मुनी०॥७॥
कवलाहारे निहार छे जी, एह अंग व्यवहार ।
धन्य अतनु परमातमाजी, जिहां निश्चलता सार. मुनी० ॥८॥
पर परिणति कृत चपलताजी, कीम मूकस्येरे एह ।
एम विचारी कारणेजी, करे गोचरी तेह ॥ मुनी० ॥ ९ ॥
क्षमावंत दयालुआजी, निस्पृही तनु नीराग ।
निर्विषयी गजगतिपरेजी, विचरे मुनि महा भाग ॥ मुनी० ॥१०॥
परमानंद रस अनुभव्याजी, निज गुण रमता धीर ।
देवचंद मुनि वंदतांजी, लहिये भवजल तीर ॥ मुनी० ॥११॥

॥ ढाल बीजी ॥

॥ भावना मालती चूसीए ॥ ए देशी ॥

साधुजी समिति बीजी आदरो, वचन निर्दोष परकासरे।
गुप्ति उत्सर्गनो समिति ते, मार्ग अपवाद सुविलासरे ॥साधु०॥१॥

भावना बीजा महाव्रततणी, जिन भणी सत्यता मूलरे।
भाव अहिंसकता वधे, सर्व संवर अनुकूलरे ॥ साधु० ॥ २ ॥

मौनधारी मुनि नवि वहे, वचन जे आश्रव गेहरे।
आचरण ज्ञानने ध्याननो, साधक उपदिसे तेहरे ॥साधु०॥३॥

उदित पर्याप्ति जे वचननी, ते करी श्रुत अनुसाररे।
बोध प्रागभावी सज्झायथी, वलि करे जगत उपगाररे॥साधु०॥४॥

साधु निज वीर्यथी परतणो, नवि करे ग्रहणने त्यागरे।
ते भणी वचन गुप्ति रहे, एह उत्सर्ग मुनि मार्गरे ॥साधु०॥ ५ ॥

योग जे आश्रवपद हतो, ते कर्यो निर्झरा रूपरे।
लोहथी कंचन मुनि करे, साधता साध्य चिद्रूपरे ॥साधु०॥६॥

आत्म हित पर हित कारणे, आदरे पांच सिझायरे।
ते भणी असन वसनादिका, आश्रय सर्व अववाय रे ॥साधु०॥७॥

जिन गुण स्तवन निज तत्त्वने, जोइवा करे अविरोधरे।
देशना भव्य प्रतिबोधवा, वायणा करण निज बोधरे ॥साधु०॥८॥

नय गम भंग निक्षेपथी, स्वहित स्याद्वादयुत वाणरे।
सोल दश चार गुणसु मिलि, कहे अनुयोग सुपहाणरे ॥साधु०॥६॥

सूत्रने अर्थ अनुयोग ए, बीय निर्युक्ति संजुत्तरे,
तीय भाष्ये नये भावियो, मुनि वदे वचन एम तंतरे ॥साधु०॥१०॥

ज्ञान समुद्र समता भर्या, संवरी दया भंडाररे।
तत्त्व आनंद आस्वादता, वंदिए चरण गुणधाररे ॥साधु०॥११॥

मोह उदये अमोही जिमा, शुद्ध निज साध्य लयलीनरे ।
देवचंद्र तेह मुनि वंदिये, ज्ञान अमृत रस पीनरे साधु० ॥१२॥

॥ ढाल त्रीजी ॥

॥ झाझरिया मुनिवर ॥ ए देशी ॥

समिति तीसरी एषणाजी, पांच महाव्रत मूल ।
अणहारी उत्सर्गनोजी, ए अपवाद अमूल;
मनमोहन मुनिवर समिति सदा चित्त धार ॥ १ ॥
चेतनता चेतनतणीजी, नवि परसंगी तेह ।
तिण पर सन्मुख नवि करेजी, आतमरती व्रती जेह ॥मन०॥२॥
काय योग पुद्गल ग्रहेजी, एह न आतम धर्म ।
जाणग करता भोगताजी, हु माहरो ए मर्म ॥ मन० ॥ ३ ॥
अणभिसंधि चल वीर्यनीजी, रोधक शक्ति अभाव ।
पण अभिसंधिज वीर्यथीजी, कीम ग्रहे परभाव ॥मन० ॥४॥
इम पर त्यागी संवरीजी, न ग्रहे पुद्गल खंध ।
साधक कारण राखवाजी, अशनादिक संबंध ॥ मन० ॥ ५ ॥
आतम तत्त्व अनंतताजी, ज्ञान विना न जणाय ।
तेह प्रगट करवा भणीजी, श्रुत सज्झाय उपाय ॥ मन० ॥ ६ ॥
तेह जेहथी देह रहेजी, आहारे बलवान् ।
साध्य अधूरे हेतुनेजी, केम तजे गुणवान् ॥ ७ ॥
तनु अनुयायी वीर्यनोजी, वर्तन अशन संजोग ।
वृद्ध यष्टि सम जाणीनेजी, अशनादिक उपभोग ॥ मन० ॥८॥
जो साधकता नवी अडेजी, तो न ग्रहे आहार ।
बाधक परिणति वारवाजी, अशनादिक उपचार ॥मन०॥९॥
सुडतालीसे द्रव्यनाजी, दोष तजी नीराग ।
असंभ्राति मूर्च्छा विनाजी, अमर पेरे वडभाग ॥मन० ॥१०॥

तत्त्व रुचि तत्त्वाश्रयीजी, तत्त्व रसीक निग्रंथ ।
कर्म उदये आहारताजी, मुनि माने पली पंथ ॥ मन० ॥११॥

लाभथकी पण घन लहेजी, अति निर्झरा करंत ।
पाम्ये अण व्यापकपणेजी, निरमल संत महंत ॥ मन० ॥१२॥

अणाहारता साधताजी, समता अमृत कंद ।
भिक्षु श्रमण वाचंयमीजी, ते वंदे देवचंद ॥ मन० ॥ १३ ॥

॥ ढाल चोथी ॥

॥ भोलीडा हंसारे विषय न राचीए ॥ ए देशी ॥

समिति चोथीरे चउ गति वारणी,
भाखी श्री जिनराज ।
राखा परम अहिंसक मुनिवरे,
चाखी ज्ञान समाज ॥ १ ॥

सहज संवेगीरे समिति परिणमे,
साधन आतम काज ।
आराधन ए संवर भावनो,
भव जल तारण जहाज ॥ सहज० ॥ २ ॥

अभिलाषी निज आतम तत्त्वना,
साखी करि सिद्धांत ॥
नाखी सर्व परिग्रह संगने,
ध्यानाकाशीरे संत ॥ सहज० ॥ ३ ॥

संवर पंचतणी ए भावना,
निरुपाधिक अप्रमाद ।
सर्व परिग्रह त्याग असंगता,
तेहनो ए अपवाद ॥ सहज० ॥ ४ ॥

श्याने मुनिवर उपकरण संग्रहे,
जे परभाव विरत्त ।
देह अमोही रे नवि लोही कदा,
रत्नत्रयी संपत्त ॥ सहज० ॥ ५ ॥

भाव अहिंसकता कारण भणी,
द्रव्य अहिंसक साधि ।
रजोहरण मुख वस्त्रादिक धरे,
वरवा योग समाधि ॥ सहज० ॥ ६ ॥

शिव साधननो मूल ते ज्ञान छे,
तेहनो हेतु सज्झाय ।
ते आहारे ते वलि पात्रथी,
जयणाए ग्रहवाय ॥ सहज० ॥ ७ ॥

बाल तरुण नर नारी जंतुने,
नग्न दुगंच्छानो हेतु ।
तिणे चोलपट ग्रही मुनि उपदिशे,
शुद्ध धरम संकेत ॥ सहज० ॥ ८ ॥

दंस मसक शीतादि परिसहे,
न रहे ध्यान समाधि ।
कल्पक आदिक निरमोहीपणे,
धारे मुनि निरबाध ॥ सहज० ॥ ९ ॥

लेप अलेप नदीना ज्ञाननो,
कारण दंड ग्रहंत ।
दश वैकालीक भगवई साखथी,
वन थिरताने रे तंत ॥ सहज० ॥ १० ॥

लघु सजीव सचित्त रजादिनो,
वारण दुःख संघट्ट ।
देखी पूंजेरे मुनिवर तेहथी,
ए पूरव मुनिवट्ट ॥ सहज० ॥ ११ ॥

पुद्गल खंध ग्रहण निखेवना,
द्रव्ये जयणारे तास ।
भावे आतम परिणति नवनवी,
ग्रहतां समिति प्रकाश ॥ सहज० ॥ १२ ॥

बाधक भाव अद्वेषपणे तजे,
साधक ले गत राग ।
पूरव गुण रक्षक पोषकपणे,
नीपजते शिव माग ॥ सहज० ॥ १३ ॥

संजम श्रेणोरे संचरता मुनि,
हरे कर्म कलंक ।
धरता समता रस एकत्वतः,
तत्त्व रमणी निशंक ॥ सहज० ॥ १४ ॥

जग उपगारी रे तारक भव्यना,
लायक पूर्णानंद ।
देवचंद एहवा मुनिराजना,
वंदे पय अरविंद ॥ सहज० ॥ १५ ॥

॥ ढाल पांचमी ॥

॥ चेतन चेतजोरे ॥ ए देशी ॥

पंचमी समिति कहि अति सुंदररे,
पारिठावणिया नाम ।

परम अहिंसक धर्म वधारखी रे,
मृदु करुणा परिणाम ॥ १ ॥

मुनिवर सेवज्यो रे,
समिति सदा सुखदाय ।
थिरता भावे संयम सोहाय छे रे,
निरमल संवर थाय ॥ मुनिवर० ॥ २ ॥

देह नेहथी चंचलता वधे रे,
विकसे दुष्ट कषाय ।
तिण तनु राग ध्याने रमेजी,
ज्ञान चरण सुपसाय । मुनि० ॥ ३ ॥

।जिहां शरीर तिहां मल उपजे रे,
तेह तणो परिहार ।
करे जंतु चर थिर अणदूहव्यारे,
सकल दुगंछा वार ॥ मुनि० ॥ ४ ॥

संयम बाधक आतम विराधना रे
आणा घातक जाणि ।
उपधि अशन शिष्यादिक परठवे रे,
आयति लाभ पिछाणि ॥ मु० ॥ ५ ॥

वध्या आहारे तपीया परठवे रे,
निज कोठे अप्रमाद ।
देह अरागी भाव अव्यापतारे,
धीरनो ए अपवाद ॥ मु० ॥ ६ ॥

संलोकादिक दूषण परिहरी रे,
वरजी रागने द्वेष ।

आगम रीते परठवणी करेरे,
लाघव हेतु विशेष ॥ मु० ॥ ७ ॥

कल्पातीत आहालंदी चमी रे,
जिन कल्पादि मुनीश ॥
तेने परठवणा एक मल तणी रे,
तेह अल्प वली दीस ॥ मु० ॥ ८ ॥

रात्रे प्रश्रवणादिक परठवे रे,
विधिकृत मंडल ठाम ।
थिविर कल्पनो प्रति अपवाद छे रे,
ग्लानादिक नहि काम ॥ मु० ॥ ९ ॥

एह द्रव्यथी भावमांरे,
बाधक जे परिणाम ।
द्वेष निवारी मादकता विना रे,
सर्व विभाव विराम ॥ मु० ॥ १० ॥

आतम परिणति तत्त्वमयी करेरे,
परिहरता परभाव ॥
द्रव्य समिति विण भावमणी धरे रे,
मुनिनो एह स्वभाव ॥ मु० ॥ ११ ॥

पंच समिति समता परिणामथी रे,
क्षमा कोष गत रोष ।
भावन पावन संयम साधतारे,
करता गुण गण पोष ॥ मु० ॥ १२ ॥

साध्यरसी निज तत्त्वे तन्मयीरे,
उछरंगी निरमाय ।

योग क्रिया फल भाव अवंचतारे,
शुचि अनुभव सुख दाय ॥ मु० ॥ १३ ॥
आणायुत नाणी दर्शनी रे,
निश्चय निग्रह वंत ।
देवचंद्र एहवा निर्ग्रंथ ते रे,
मुज गुरु तत्त्व महंत ॥ मु० ॥ १४ ॥

॥ ढाल छट्ठी ॥

॥ वैरागी थयोरे ॥ ए देशी ॥

मुनि मन वसि करो, मन ए आस्रव गेहोरे ।
मन ममता रसी, मनथीरे टालो यति वर तेहोरे ॥ मुनि०॥१॥
दुष्ट तुरग चित्त ते कह्युं रे, सो मोह नृपति प्रधान ।
आर्त रौद्रनो खेत्र एरे, रोक !!! तुं ज्ञान निधानरे ॥मुनि०॥२॥
गुप्ति प्रथम ए साधुनेरे, धर्म शुकलनोरे कंद ।
वस्तु धर्म चिंतन रम्यारे, साधे पूर्णानंदरे ॥ मुनि० ॥ ३ ॥
योग ते पुद्गल जोग छेरे, बांधे अभिनव कर्म ।
योग वर्त्तना कंपनारे, नवि ए आतम धर्मरे ॥ मुनि० ॥ ४ ॥
वीर्य चपल परसगमीरे, एह न साधक पक्ष ।
ज्ञान चरण सहकारनारे, वरतावे मुनि दक्षरे ॥ मुनि० ॥ ५ ॥
सविकल्पक गुण साधनारे, ध्यानीने न सुहाय ।
निर्विकल्प अनुभव रसीरे, आत्मानंदी थायरे ॥ मुनि० ॥ ६ ॥
रत्नत्रयीनी भेदतारे, एह समल व्यवहार ।
त्रिगुण वीर्य एकत्वतारे, निर्मल आत्माचाररे ॥ मुनि० ॥ ७ ॥

शुक्लध्यान श्रुतलंबनी रे, ए पण साधन दाव ।
वस्तु धर्म उछरंगमां रे, गुण गुणी एक स्वभावरे ॥ मुनि०॥८॥

परसहाय गुण वर्त्तना रे, वस्तु धरम न कहाय ।
साध्यरसी तो कीम ग्रहेरे, साधु चित्त सहाय रे ॥ मुनि० ॥९॥

आत्म रुचि आत्मालयी रे, ध्याता तत्त्व अनंत ।
स्यादवाद ज्ञानी मुनिरे, तत्त्व रमण उपसंत रे ॥ मुनि० ॥१०॥

नवि अपवाद रुचि कदारे, शिव रसीया अनगार ।
शक्ति यथागम सेवतारे, निंदे कर्म प्रचार रे ॥ मुनि० ॥११॥

शुद्ध सिद्ध निज तत्त्वता रे, पूर्णानंद समाज ।
देवचंद्र पद साधतारे, नमीए ते मुनिराज रे ॥ मुनि० ॥१२॥

॥ ढाल सातमी ॥

सुमति सदाए दीलमे धरो ॥ ए देशी ॥ हमि० ॥

वचन गुप्ति सुधी धरो, वचन ते कर्म सहाय, सलुणा ।
उदयाश्रित जे चेतना, निश्चय तेह अपाय, सलुणा ॥ व० ॥१॥

वचन अगोचर आतमा, सिद्ध ते वचनातीत, सलुणा ।
सत्ता अस्ति स्वभावमां, भाषक भाव अनीत, सलुणा ॥व०॥२॥

अनुभव रस आस्वादता, करता आतम ध्यान सलुणा ।
वचन ते बाधक भाव छे, न वदे मुनि अदीन, सलुणा ॥ व० ॥३॥

वचनास्रव पलटाववा, मुनि साधे स्वाध्याय, सलुणा ।
तेह सर्वथा गोपवो, परम महारस थाय, सलुणा ॥ व० ॥ ४ ॥

भाषा पुद्गल वर्गणा, ग्रहण निसर्ग उपाधि, सलुणा ।
करवा आतम वीर्यने, श्याने प्रेरे श्याथी, सलुणा ॥ व० ॥ ५ ॥

यावत वीरज चेतना, आतम गुण संपत्त, सलुणा ।
तावत सर्वे निर्झरा, आस्रवपर आयत्त, सलुणा ॥ व० ॥ ६ ॥

ईम जाणी थिर संजमी, न करे चपलीमंथ, सलुणा ।
आत्मानंद आराधतां, आनेच्छी निर्ग्रंथ, सलुणा ॥ व० ॥७॥

साध्य शुद्ध परमात्मा, तसु साधन उत्सर्ग, सलुणा ।
बारे भेदे तप द्विविधे, सकल श्रेष्ठ व्युत्सर्ग, सलुणा ॥ व० ॥८॥

समकित गुण गुणठाणे कर्यो, साध्य अयोगी भाव, सलुणा ।
उपादानता तेहनी, गुप्तिरुप थिरभाव, सलुणा ॥ व० ॥ ९ ॥

गुप्ति रुचि गुप्ते रम्या, कारण समिति प्रपंच, सलुणा ।
करता थिरता ईहता, ग्रहे तत्त्व गुण सच, सलुणा ॥व०॥१०॥

अपवादे उत्सर्गनी, दृष्टि न चूके जेह, सलुणा ।
प्रणमे नित्यप्रत्ये भावशु, देवचंद्र मुनि तेह, सलुणा ॥व०॥११॥

॥ ढाल आठमी ॥

॥ फूलना चोरस प्रभुजीने शिर चढे ॥ ए देशी ॥

गुप्ति संभारो रे त्रीजी मुनिवरु,
जेहथी परम आनदोजी ।
मोह टले घनघाती परिगले,
प्रगटे ज्ञान अमदोजी ॥ गुप्ति० ॥ १ ॥

करि शुभ अशुभे मन भ्रम जे छे,
तिण तजि तनु व्यापारोजी ।
चंचल भाव ते आस्रव मूल छे,
जीव अचल अविकारीजी ॥ गुप्ति० ॥ २ ॥

इंद्रि विषय सकलनो द्वार ए,
बंध हेतु द्रढ एहोजी ।
अभिनव कर्म ग्रहे तनु योगथी,
तिण थिर करिए देहोजी ॥ गुप्ति० ॥ ३ ॥

आतम वीर्य फुरे परसंग जे,
ते कहिये तनु योगजी ।
चेतन सत्ता रे परम अयोगी छे,
निर्मल थिर उपयोगजी ॥ गुप्ति० ॥ ४ ॥

जावत कंपन तावत बंध छे,
भाख्युं भगवइ अंगेजी ।
ते माटे ध्रुव तत्त्व रसे रमे,
माहण ध्यान प्रसंगेजी ॥ गुप्ति० ॥ ५ ॥

वीर्य सहायी रे आतम धर्मनो,
अचल सहज अप्रयासोजी ।
ते परभाव सहायी किम करे,
मुनिवर गुण आवासोजी ॥ गुप्ति० ॥ ६ ॥

खंती मुत्ती अकिंचनी,
शौच ब्रह्मधर धीरोजी ।
विषय परिषह सैन्य विदारवा,
वीर परम सौंडीरोजी ॥ गुप्ति० ॥ ७ ॥

कर्म पडल दल क्षय करवा रसी,
आतम ऋद्धि समृद्धोजी ।
देवचंद्र जिन आणा पालता,
वंदो गुरु गुण वृद्धोजी ॥ गुप्ति० ॥ ८ ॥

॥ ढाल नवमी ॥

॥ रसीयानी देशी ॥

धर्म धुरंधर मुनिवर सद्दही,
नाण चरण संपन्न, सुगुण नर ।
इंद्रि भोग तजी निज सुख भजी,
भवचारक उद्विग्न, सुगुण नर ॥ धर्म० ॥ १ ॥

द्रव्य भाव साची सरधा धरी,
परिहरी शंकादि दोष । सुगुण नर ।
कारण कारज साधन आदरी,
धरी सुध्यान संतोष ॥ सुगु० ॥ २ ॥

गुण पर्याये वस्तु परखता,
शील उभय भंडार । सु० ।
परिणति शक्ति स्वरूपमां परिणमि,
करता तसु व्यहार ॥ सुगु० ॥ ३ ॥

लोकसन्न वीतिगिच्छा वारता,
करता संयम वृद्धि ।
मुल उत्तर गुण सर्व संभारता,
धरता आतम शुद्धि ॥ सुगु० ॥ ४ ॥

श्रुतधारी श्रुतधरनिश्रारसी,
वसि कर्या त्रिक जोग ।
अभ्यासी अभिनय श्रुतसारना,
अविनासी उपयोग ॥ सुगु० ॥ ५ ॥

द्रव्य भाव आस्रव मल टालता,
पालता संयम सार । सुगु० ॥

साची जैन क्रिया संभालता,
गालता कर्म विकार ॥ सुगु० ॥ ६ ॥

सामायिक आदिक गुण श्रेणिमां,
रमता चढते रे भाव ॥ सुगु० ॥
तीन लोकथी भिन्न त्रिलोकमां,
पूजनिक छे जसु पाय ॥ सुगु० ॥ ७ ॥

अधिक गुणी निज तुल्य गुणीथकी,
मिलता ते मुनिराज ॥ सुगु० ॥
परम समाधि निधि भवजलधिना,
तारण तरण जहाज ॥ सुगु० ॥ ८ ॥

समकितवंत संयम गुण ईहता,
ते धरवा असमर्थ ॥ सुगु० ॥
संवेग पक्षी भावे शोभता,
कहेता साचो रे अर्थ ॥ सुगु० ॥ ९ ॥

आप प्रशंसाए नवि माचता,
राचता मुनि गुणरंग ॥ सुगु० ॥
अप्रमत्त मुनि श्रुत तत्त्व पूछवा,
सेवे जासु अभंग ॥ सुगु० ॥ १० ॥

सद्दहणा आगम अनुमोदता,
गुणकर संयम चालि ॥ सुगु० ॥
व्यवहारे साचो ते साचवे,
आयति लाभ संभालि ॥ सुगु० ॥ ११ ॥

दुकरकारीथी अधिका कहे,
बृहत्कल्प व्यवहार ॥ सुगु० ॥

उपदेश माला भगवई अंगने,
गीतारथ अधिकार ॥ सुगु० ॥ १२ ॥

भाव चरण स्थानक फरस्या विना,
न हुवे संयम धर्म । सुगु० ॥
ते श्याने जूठ ते ऊचरे,
जे जाणे प्रवचन मर्म ॥ सुगु० ॥ १३ ॥

यश लाभे निज सम्मत थापवा,
परजनरंजन काज ॥ सुगु० ॥
ज्ञान क्रिया द्रव्यत विधि साचवे,
तेह नहि मुनिराज ॥ सुगु० ॥ १४ ॥

बाह्य दया एकांते उपदिशे,
श्रुत आम्नाय विहीण ॥ सुगु० ॥
बग पेरे ठगता मूरख लोकने,
बहु भमसे तेह दीन ॥ सुगु० ॥ १५ ॥

अध्यातम परिणति साधन ग्रही,
उचित वहे आचार ॥ सुगु० ॥
जिन आणा अविराधक पुरुष जे,
धन्य तेहनो अवतार ॥ सुगु० ॥ १६ ॥

द्रव्य क्रिया नैमित्तिक हेतु छे,
भावधर्म लयलीन ॥ सुगु० ॥
निरुपाधिकता जे निज अशनी,
माने लाभ नविन ॥ सुगु० ॥ १७ ॥

परिणति दोष भणी जे निंदता,
कहेता परिणति धर्म ॥ सुगु० ॥

योग ग्रंथना भाव प्रकाशता,
तेह विदारे हो कर्म ॥ सुगु० ॥ १८ ॥

अन्य क्रिया पण उपकारीपणे,
ज्ञानि साधे हो सिद्ध ॥ सुगु० ॥
देवचंद्र सुविहित मुनिवृंदने,
प्रणम्यां सयल समृद्धि ॥ सुगु० ॥ १९ ॥

॥ कळश ॥

॥ राग धन्याश्री ॥

ते तरिया रे भाई ते तरिया,
जे जिनशाशन अनुसरियाजी ।
जेह करे सुविहित मुनि किरिया,
ज्ञानामृत रस दरियाजी ॥ ते तरिया० ॥ १ ॥

विषय कषाय सहु परिहरिया,
उत्तम समता वरियाजी ।
शील संनाहथकी पाखरिया,
भवसमुद्र जल तरियाजी ॥ ते तरिया० ॥ २ ॥

समिति गुपतिशुं जे परिवरिया,
आत्मानंदे भरियाजी ।
आस्रव द्वार सकल आवरिया,
वर संवर संवरियाजी ॥ ते तरिया० ॥ ३ ॥

खरतर मुनि आचरणा चरिया,
राजसार गुण गिरियाजी ।

ज्ञान चरम तप ध्याने वसिया,
श्रुत रहस्यना रसियाजी ॥ ते तरिया० ॥ ४ ॥

दीपचंद पाठक पद धरिया,
विनय रयण सागरियाजी ।
देवचंद मुनि गुण उचरिया,
कर्म अरि निर्भरियाजी ॥ ते तरिया० ॥ ५ ॥

सुरगिरि सुंदर जिनवर मंदिर,
शोभित नगर सवाईजी ।
नवानगर चोमासु करिने,
मुनिवर गुण श्रुति गाईजी ॥ ते तरिया० ॥ ६ ॥

अरिहा अणविचार्यो,
विस्तरि जस संपदा ।
निर्ग्रंथ वदन स्तवन करतां,
परम मंगल सुख सदा ॥ १ ॥

॥ अथ श्री प्रभंजनानी सज्झाय लिख्यते ॥

॥ ढाल १ ली ॥

नाटकीयानी नदनी ॥ ए देशी ॥

गिरि वैताढ्यने उपरे, चक्रांका नयरी लो ॥ अहो चक्रांका० ॥
चक्रायुध राजा तिहां, जीत्या सवि वयरी लो ॥
अहो जीत्या० ॥१॥

मदन लता तसु सुंदरी, गुण शील अचंभा लो ॥ अहो गुण० ॥
पुत्री तास प्रभंजना, रूपे रति रंभा लो ॥
अहो रुपे० ॥ २ ॥

विद्याधर भूचर सुता, बहु मिलि इक पंते लो ॥ अहो बहु० ॥
राधावेध मंडावियो, वर वरवा खंते लो ॥ अहो वर० ॥ ३ ॥

कन्या एक हजारथी, प्रभंजना चाली लो ॥ अहो प्रभंजना० ॥
आर्य खंडमां आवतां, वन खंड विचाली लो ॥
अहो वन० ॥ ४ ॥

निग्रंथी सुप्रतिष्टता, बहु गुणणी संगे लो ॥ अहो बहु० ॥
साधू विहारे विचरतां, वंदे मन रंगे लो ॥
अहो वंदे० ॥ ५ ॥

आर्या[1] पूछे ए वडो, उमाहो स्यो छे लो ॥ अहो उमाहो० ॥
विनये कन्या विनवे, वर वरवा इच्छे लो ॥
अहो वर० ॥ ६ ॥

ए श्यो हित जाणो तुमे, एथी नवि सिद्धि लो ॥ अहो एथी० ॥
विषय हलाहल विष जिहां, शी अमृत बुद्धि लो ॥
अहो शी० ॥ ७ ॥

भोग संग कारमा कह्या, जिनराज सदाई लो ॥ अहो जिन० ॥
राग द्वेष संगे वधे, भव भ्रमण सदाई लो ॥
अहो भव० ॥ ८ ॥

राज सुता कहे साच ए, जे भाखो वाणी लो ॥ अहो जे० ॥
पण ए भूल अनादिनी, किम जाए छंडाणी लो ॥
॥ अहो ॥ किम० ॥ ९ ॥

---

१ साध्वीजी.

जेह तजे ते धन्य छे, सेवक जिनजीना लो ॥ अहो सेवक० ॥
हमे जड पुद्गल रस रम्या, मोहे लयलीना लो ॥
अहो मोहे० ॥ १० ॥

अध्यात्म रस पानथी, मीना मुनि राया लो ॥अहो मीना०॥
ते परपरिणतिविरति तजी, निज तत्त्वे समाया लो ॥
अहो निज० ॥ ११ ॥

अमने पिण करवो घटे, कारण संयोगे लो ॥ अहो कारण० ॥
पण चेतनता परिणमे, जड पुद्गलना भोगे लो ॥
अहो जड० ॥ १२ ॥

अवर कन्या पण उच्चरे, चिंतित हवे कीजे लो ॥ अहो चिं० ॥
पछी परम पद साधवा, उद्यम साधिजे लो ॥
अहो उद्यम० ॥ १३ ॥

प्रभंजना कहे हे सखी, ए कायर प्राणी लो ॥ अहो ए कायर० ॥
धर्म प्रथम करवो सदा, देवचंद्रनी वाणी लो ॥
अहो देवचंद्रनी० ॥ १४ ॥

॥ ढाल २ जी ॥

॥ हु वारो धना तुझ जाण न देस ॥ ए देशी ॥

कहे साहुणी सुण कन्यकारे । धन्या । ए संसार कलेश ॥
एहने जे हित करि गणे रे । धन्या । ते मिथ्या आवेशरे ॥
सुज्ञानी कन्या सांभळ हित उपदेश । जग हितकारी जिनेशरे ॥
सुज्ञानी० । कीजे तसु आदेशरे ॥ सुज्ञानी० ॥१॥ ए आंकणी ॥
खरडीने जे धोवबुं रे । [illegible]न्या । तेह न श्रेष्ठाचार ॥
रत्नत्रयी साधन करे [illegible]न्या । मोहाधीनता धाररे ॥सु०२ ॥

जे पुरुष वरवा तणी रे । कन्या । इच्छा छे ते जीव ॥
श्ये संबंधपणे भणो रे । कन्या । द्वारी काल सदीव ॥ सु० ३ ॥

तव प्रभंजना चिंतवेरे । अप्पा तुं छे अनादि अनंत ॥
ते पण मुज सत्ता समोरे । अप्पा । सहज अकृत सुमहंतरे ॥
सु० ॥ ४ ॥

भव भमतां सवि जीवथी रे । अप्पा । पाम्या सवि संबंध ॥
मात पिता भ्राता सुतारे, अप्पा । पुत्र वधु प्रतिबंधरे ॥ सु० ५ ॥

श्यो संबंध कहुं इहांरे । अप्पा । शत्रु मित्र पण थाय ॥
मित्र शत्रुता वली लहे रे । अप्पा । इम संसार स्वभावरे ॥
सु० ॥ ६ ॥

सत्ता सम सवि जीव छे रे । अप्पा । जोतां वस्तु स्वभाव ॥
ए माहरो ए पारको रे । अप्पा । सवि आरोपित भावरे ॥
सु० ॥ ७ ॥

गुरुणी आगल एहवुं रे । अप्पा । जूठुं केम कहेवाय ॥
स्वपर विवेचन कीजतां रे । अप्पा । माहरो कोइ न थाय रे ॥
सु० ॥ ८ ॥

भोगपणो पण मूलथी रे अप्पा । माने पुद्गल खंध ॥
हुं भोगी निज भावनोरे । अप्पा । परथी नहि प्रतिबंध रे ॥
सु० ॥ ९ ॥

सम्यक्ध्याने वहेंचतांरे । अप्पा । हुं अमूर्त्त चिद्रूप रे ॥
कर्त्ता भोक्ता तत्त्वनो रे । अप्पा । अक्षय अक्रिय अनुप रे ॥
सु० ॥ १० ॥

सर्व विभाव थकी जुदो रे । अप्पा । निश्चय निज अनुभूति ॥
पूर्णानंदी परिणामे रे । अप्पा० । नहि पर परिणति रीति ॥
सु० ॥ ११ ॥

सिद्ध समो ए संग्रहे रे । अप्पा० । पर रंगे पलटाय ॥
सर्वांगी भावे करी रे । अप्पा० । अशुद्ध विभाव अपाय रे ॥
सु० ॥ १२ ॥

शुद्ध निश्चय नये करी रे । अप्पा । आतम भाव अनंत ।
तेह अशुद्धनये करी रे । अप्पा० । दुष्ट विभाव महंत रे ॥
सु० ॥ १३ ॥

द्रव्य करम कर्त्ता थयो रे । अप्पा० । नय अशुद्ध व्यवहार ॥
तेह निवारो स्वपदे रे । अप्पा० । रमतां शुद्ध व्यवहार रे ॥
सु० ॥ १४ ॥

व्यवहारे समरे थके रे । अप्पा० । समरे निश्चय तिवार ।
प्रवृत्ति समारे विकल्पने रे । अप्पा० । तेथी परिणति सार रे ।
सु० ॥ १५ ॥

पुद्गलने पर जीवथी रे । अप्पा० । कीधो भेद विज्ञान ॥
बाधकता दूरे टलि रे । अप्पा० । हवे कुण रोके ध्यान रे ॥
सु० ॥ १६ ॥

आलंबन भावन वसे रे । अप्पा० । धरम ध्यान प्रगटाय ॥
देवचद्र पद साधवा रे । अप्पा० एहिज शुद्ध उपाय रे ॥
सुज्ञानी० ॥ १७ ॥

॥ ढाल ३ जी ॥

॥ तुठो तुठोरे मुज साहेब जगनो तूठो ॥ ए देशी ॥

आयो आयोरे अनुभव आतमचो आयो ।
शुद्ध निमित्त आलबन भजतां, आत्मालंबन पायो रे ॥
अनुभव० ॥ १ ॥

आतमक्षेत्री गुण परजाय विधि, तिहां उपयोग रमायो ।
पर परिणति पररीते जाणी, तास विकल्प गमायो रे ॥
अनुभव० ॥ २ ॥

पृथकत्व वितर्क शुकल आरोही, गुण गुणी एक समायो ।
परजय द्रव्य वितर्क एकता, दुर्द्धर मोह खपायो रे ॥
अनु० ॥ ३ ॥

अनंतानुबंधी सुभटने काढी, दर्शन मोह गमायो ।
तिरि गति हेतु प्रकृति चय करी, थयो आतमरस रायो रे ॥
अनु० ॥ ४ ॥

द्वितीय तृतीय चोकडी खपावी, वेद युगल क्षय थायो ।
हास्यादिक सत्ताथी ध्वंसी, उदय वेद मिटायो रे ॥अनु०॥५॥

थइ अवेदी ने अविकारी, हण्यो संजलनो कषायो !
मार्यो मोहचरण खायक करी, पूरण समता समायो रे ॥अनु०॥६॥

घनघाती त्रिक योद्धा लडिया, ध्यान एकत्वने ध्यायो ।
ज्ञानावरणादिक भट पडिया, जीत निशान धरायो रे ॥
अनु० ॥ ७ ॥

केवलज्ञान दरशनगुण प्रगट्या, महाराजपद पायो ।
शेष अघाती कर्म क्षिण दल, उदय अबंध दिखायो रे ॥
अनु० ॥ ८ ॥

सयोगी केवली थयां प्रभंजना, लोकालोक जणायो ।
तीन कालनी त्रिविध वर्त्तना, एक समे ओलखायो रे ॥
अनु० ॥ ९ ॥

सर्व साधवीये वंदना कीधी, गुणी विनय उपजायो ।
देव देवी तव स्तवे गुणस्तुति, जगजय पडह वजायो रे ॥
अनु० ॥ १० ॥

सहस्र कन्यका दीक्षा लीधी, आश्रव सर्व तजायो ।
जग उपगारी देश विहारे, शुद्ध धरम दीपायो रे ॥
अनु० ॥ ११ ॥

कारण जोगे कारज साधे, तेह चतुर गाइजे ।
आतम साधन निर्मल साधे, परमानंद पाइजे रे ॥
अनु० ॥ १२ ॥

ए अधिकार कह्यो गुणरागे, वैरागे मन भावी ।
वसुदेव हींडतणे अनुसारे, मुनि गुण भावना भावी रे ॥
अनु० ॥ १३ ॥

मुनि गुण थुणतां भावविशुद्धे, भव विछेदन थावे ।
पूर्णानंद पद एहथी उलसे, साधन शक्ति जमावे रे ॥
अनु० ॥ १४ ॥

मुनि गुण गावो भावो भावना, ध्यावो सहज समाधि ।
रत्नत्रयी एकत्ते खेलो, मिटे अनादि उपाधि रे ॥
अनु० ॥ १५ ॥

राजसागर पाठक उपगारी, ज्ञानधरम दातारी ।
दीपचंद पाठक खरतर वर, देवचद्र सुखकारी रे ॥
अनु० ॥ १६ ॥

नयर लींबडी मांहे रहीने, वाचंयम स्तुति गाइ ।
आत्म रसिक श्रोता जन मनने, साधन रुचि उपजाई रे ॥
अनु० ॥ १७ ॥

इम उत्तम गुण माला गावो, पावो हरप वधाइ ।
जैन धरम मारग रुचि करता, मगल लील सदाई रे ॥
अनु० ॥ १८ ॥



॥ अथ ढंढणमुनिजीनी सज्झाय ॥

॥ वनिता विहसीने विनवें ॥ ए देशी ॥

धन धन ढंढण मुनिवरु, कृष्णनरेसर पुत्रो रे;
गुणमणि लवणिम शोभतो, लखमी लीला जुतो रे. धन० ॥१॥
कोमल कमला कामिनी, मूकी एक हजारो रे;
नेमिवचनें वैरागीयो, लीधो संजम भारो रे. धन० ॥२॥
ग्रहणा ने आसेवना, शीखी शिक्षा सारो रे;
विचरता आव्याजी द्वारिका, नेमि सार्थे सुखकारो रे. धन० ॥३॥
एकदिन गोचरी संचर्या, करता गवेखणा शुद्धि रे;
आहार कांइ मिळ्यो नही, मुनि मन समता बुद्धि रे. धन० ॥४॥
मुनि चिंते पुद्गल बलें, श्यो निजगुण अभ्यासो रे;
उत्सर्गे (उछरंगें) आतमबलें, कीजे शिवपद वासो रे. धन० ॥५॥
शक्ति यथामें आदरे, अपवादें अनेको रे;
सहजें जो संवर वधे, तो न ग्रहे पर टेको रे. धन० ॥६॥
नितप्रति गोचरी संचरे, न मिळे अन्नने पानो रे;
प्रभुचरणे आवी नमी, पूछे तजी अभिमानो रे. धन० ॥ ७ ॥
श्युं कारण कहो नाथजी, एवडो ए अंतरायो रे;
जिन भाखे कृत कर्मनो, एहवो छे व्यवसायो रे. धन० ॥ ८ ॥
पूरवभव धन लोभथी, कीधुं क्रूर अपायो रे;
तीव्ररसें जे बांधीयां, तेहनो फल दुःखदायो रे. धन० ॥ ९ ॥
नृप आदेशें पांचसें, हल खेडवा अधिकारो रे;
चास एक निज क्षेत्रनी, खेडावी धरी प्यारो रे. धन० ॥ १०॥

भात चारीनो सर्वने, तुम्हे कीधो अंतरायो रे;
तीव्ररसें जे बांधीयो, तसु निपाक ए आयो रे. धन० ॥११॥
मुनिवर अभिग्रह आदर्यो, एह करम चय कीवे रे;
लेश्युं हवें आहारनें, धीरज कारज सीधे रे. धन० ॥ १२ ॥
मास गया षट इणीपेरे, पण मुनि समतालीनो रे;
अणपामें अति निर्जरा, जांणे तिणें ननि दीनो रे. धन०॥१३॥
वासुदेव जिन वदीने, पूछे धरी आनंदो रे;
साधक साधुमें निरमलो, कवण कहो जिनचंदो रे. धन०॥१४॥
नेमि कहे ढंढण मुनि, संवर निर्जरा धारी रे;
सहु साधुथकी अधिक छे, समता शुद्ध विहारी रे. धन०॥१५॥
निजघर आवतां नरपति, वंद्यो मुनि शमकंदो रे;
दीठो तव इक गृहपति, पाम्यो हरख आनंदो रे. धन०॥१६॥
मुनि आव्या तसु आंगणें, पडिलाभ्या मन रागें रे;
मोदक सूजता मुनि ग्रही, चढते मन वैरागें रे. धन० ॥१७॥
जिन वंदीने पूछीयो, त्रुटयो ते अतरायो रे;
नाथ कहे जदुनाथने, कारणथी तुम्हे पायो रे. धन० ॥१८॥
सांभळी मुनि ज्ति हरखीया, धन धन ए गुरुराजो रे;
वीतराग उपगारीया, कृपा करी मुज आजो रे. धन० ॥१९॥
माध्य मधुरे कुंण करे, ए आहार असारो रे;
पुद्गल जगनी एठए, किम ल्ये मुनि सुविचारो रे.धन०॥२०॥
साधन वधते आदरे, ए साधक व्यवहारो रे;
निःकारण परवस्तुने, छीपे नहीं अणगारो रे. धन० ॥ २१ ॥
इम चिंतवी शुद्ध थंडिलें, परठवतो ते पिंडो रे;
पुद्गल संगनी निंदना, निजगुण रमण प्रचंडो रे. धन०॥२२॥

पर परिणति विच्छेदतां, निज परिणति प्रागभावो रे;
क्षपकश्रेणि ध्याने रम्या, पाम्यो आतम स्वभावो रे. धन० ॥२३॥

आत्मतत्त्व एकाग्रता, तन्मय वीरज धारे रे;
घन घाती सवि खेरव्या, रत्नत्रयी विस्तारे रे. धन० ॥ २४ ॥

क्षीणमोह करी चरणनी, क्षायिकता करी पूरी रे,
केवलज्ञानदर्शन वर्या, अंतराय सवि चूरी रे. धन० ॥२५॥

परम दान लाभ नीपनो, कीधो कारज सुधो रे;
समवसरणमें आवीया, साध्य संपूरण सीधो रे. धन० ॥२६॥

एहवा मुनिनें गाइये, ध्याइयें धरी आणंदो रे;
देवचंद्र पद पाइये, लहीये परमानंदो रे. धन० ॥ २७ ॥

इति श्री ढंढणमुनिवर स्वाध्याय समाप्त.

॥ श्री समकितनी सज्झाय ॥

समकित नवि लह्युं रे, ए तो रुल्यो चतुर्गति मांहे;
त्रस थावरकी करुणा कीनी, जीव न एक विराध्यो;
तीन काळ सामायिक करतां, शुद्ध उपयोग न साध्यो. स० १

जूठ बोलवाको व्रत लीनो, चोरी को पण त्यागी;
व्यवहारादिक निपुण भयो, पण अंतरदृष्टि न जागी. स० २

ऊर्ध्व बाहु करी उंधो लटके, भस्म लगा धूम घटके;
जटा जूट शिर मुंडे जूठो, विण श्रद्धा भव भटके. स० ३

निज परनारी त्याग ज करके, ब्रह्मचारी व्रत लीधो;
स्वर्गादिक याको फळ पामी, निज कारज नवि सिध्यो स० ४

बाह्य क्रिया सब त्याग परिग्रह, द्रव्य लिंग धर लीनो;
देवचंद्र कहे या विध तो हम, बहुत वार कर लीनो. स० ५

॥ गजसुकुमाल मुनीश्वर सज्झाय ॥

॥ ढाल १ ली ॥

॥ आस फळी मेरी आस फळी ॥ ए देशी ॥

द्वारिकानगरी ऋद्धि समृद्धि, कृष्णनरेश्वर भुवन प्रसिद्ध;
चेतन सांभळो. (ए टेक)
वसुदेव देवकी अंग सुजात, गजसुकुमाल कुमर विख्यात. चे. १

नयरी परिसरें श्रीजिनराय, समवसर्या निरमम निर्माय;
यादवकुल अवतंस मुणिंद, नेमिनाथ केवल गुण वृंद. चे० २

त्रिभुवनपति श्रीनेमजिणंद, आव्या सुणी हरख्या गोविंद;
सर्जी सामईयो वंदन काज, हरखें वांद्या श्रीजिनराज. चे० ३

लघु वयें पण श्री गजसुकुमाल, रुप मनोहर लील विशाळ;
वीतराग वंदण अतिरंग, सुवेविकी आवे उछरंग चे० ४

समवसरण देखी विकसंत, त्रिकरणजोगें अति हरखंत;
धन धन माने निज मनमांहिं, गयो पाप हुं थयो सनाह. चे० ५

कुमरे वंदी जिनवर पाय, आनंद लहरी अग न माय;
निःकामी प्रभु दीठा जांम, विसरी वामा नें धन धाम चे० ६

जिनमुख अमृत वयण सुणंत, भाग्यो मिथ्या मोह अनंत;
दरशन नाण चरण सुखखांण, शुद्धातम निज तत्त्व पिछांण. चे. ७

परपरिणति संयोगी भाव, सर्व विभाव न शुद्ध स्वभाव,
द्रव्यकर्म नोकर्म उपाधि, बंध हेतु पमुहा सविव्याधि. चे० ८

देहथी भिन्न अमूरति रूप, चिन्मय चेतन निज गुण रूप;
श्रद्धा भासन थिरता भाव, करतां प्रगटे शुद्ध स्वभाव. चे. ९

नेमि वचन जाग्यो वडवीर, धीर वचन भाषे गंभीर;
देहादिक ए मुज गुण नांहि, तो किम रहेवुं मुज ए मांहि. चे० १०

जेहथी बंधाये निजतत्त्व, तेहथी संग करे कुण सत्त्व,
प्रभुजी रहेवुं करि सुपसाय, हुं आवुं माता समजाय. चे० ११

॥ ढाल २ जी. ॥

॥ वहिलडा आवज्यो ॥ ए देशी ॥

माताजी नेमि देशन सुणी, मुज थयो आज आणंद रे;
मनुजभव आज सफळो थयो, आज शुभ उदय आणंद रे;
माताजी नेम देशन सुणी. १२ (ए आंकणी)

देवकी चित्त अति गहगही, इम कहे मधुर मुख वाणि रे;
धन्य तु धन्य माति ताहरी, जेणें सुणी नेमि मुख वाणि रे. मा०१३

माताजी एह संसारमां, सुखतणो नहीं लवलेश रे;
वस्तुगत भाव अवलोकतां, सर्व संसार कलेश रे. मा० १४

कर्मथी जन्म, तनु करमथी, कर्म ए सुखदुःख मूळ रे;
आतमधर्म नवि ए कदा, आज मुज टळी सवि भूल रे. मा०१५

नेमिचरणे रहि आदरुं, चरण गुण शिवसुखकंद रे;
विषय विष हिवें मुज नवि रुचे, सांभळे अमृतानंद रे. मा०१६

माताजी अनुमति आपीये, हवें मुज एम न रहाय रे;
एक खिण अविरतदोषनी, वातडी वचन न कहाय रे. मा०१७

मोहवशें मुंझी देवकी, विलवती इम कहे वात रे;
पुत्र तें ए किश्युं भाखियुं, तुज विरह मुज न सुहात रे. मा०१८

वत्स ! संयम अति दोहिलुं, तोळवो मेरु एक हाथ रे;
प्राणजीवन मूज वालहो, माहरे तुंहिज आथ रे. मा० १९

मात तुंमे श्राविका नेमिनी, तुमें एम न कहाय रे;
मोक्ष सुख हेतु संयमतणो, किम करो मात अंतराय रे. मा० २०

वत्स ! मन भाव दुक्कर घणो, जीपवो मोह भूपाल रे;
विषय सेना सहु वारवी, तमे छो बाल सुकुमाल रे. मा० २१

मातजी निजघर आंगणें, बालक रमे निरबीह रे;
तेम मुज आतम धर्ममें, रमण करतां किसी बीह रे. मा० २२

मोह विष सहित जे वचनडां, ते हिवें मुज न छिवंत रे;
परम गुरु अमृत वचनथकी, हुं थयो उपशमवंत रे. मा० २३

भवतणो कंद हवें भांजवो, साधवो मोह अरिवृंद रे;
आतमानंद आराधवो, साधवो मोक्ष सुखकंद रे. मा० २४

नेंमथी कोई अधिको होवे, (तो) मानीयें तास वचन्न रे;
माताजी कांइ नवि भाखीये, माहरे संयमें मन्न रे. मा० २५

॥ ढाल ३ जी ॥

धन धन साधु शिरोमणि ढढणो ॥ ए देशी ॥

धन धन जे मुनिवर ध्याने रम्यारे, समतासागर उपशमवंत रे;
विषय कषायें जे नडिया नहीं रे, साधक परमारथ सुमहंत रे.
धन धन जे मुनिवर ध्याने रम्या रे (ए आंकणी) २६

जादवपति परिवारें परिवर्योरे,नेमि चरणे पुहुंता गजसुकुमालरे;
मात पिता आर्ते वहिरावीयारे, नंदन बाल मनोहर चालरे.
धन धन जे० २७

प्रभुमुख सर्व विरति अंगीकरी रे, मुकी सरव अनादि उपाधिरे;
पूछे स्वामी कहो केम नीपजे रे, मुजने वहेली सिद्धि समाधिरे.
धन धन जे० २८

प्रभु भाखे निज तत्त्व एकाग्रतारे, उदय अव्यापकता परिणामरे;
संवरबाधे साधे निर्जरा रे, लघुकालें लहिये शिवधाम रे.
धन धन जे० २९

एगराई पडिमा तुमे आदरो रे, धरजो आतमभाव सुधीर रे;
समतासिन्धु मुनिवरें तिम कर्यो रे, शिवपद साधन वडवीर रे.
धन धन० जे० ३०

शिर उपर सिगडी सोमिलें करीरे,समता शीतल गजसुकुमालरे
खमा नीरें न्हवराव्यो आतमा रे, श्युं दाझे तेहनो ए झाले-१ रे.
धन धन जे० ३१

दहनधर्म ते दाह जे अगनिथी रे, हुं तो परम अदाज अगाह रे
जे दाझे ते तो माहरो धन नथी रे, अक्षय चिन्मय तत्त्व प्रवाह रे.
धन धन जे० ३२

क्षपकश्रेणि ध्यान आरोहणें रे, पुद्गल आतम भिन्न स्वभाव रे;
निजगुण अनुभव वळी एकाग्रता रे, भजतां कीधो कर्म अभाव रे.
धन धन जे० ३३

निरमल ध्याने तत्त्व अभेदता रे, निर्विकल्प ध्याने तद्रूप रे;
घातकक्षयें निजगुण उल्लस्यां रे, निर्मल केवलज्ञान अनूप रे.
धन धन जे० ३४

थई अजोगी शैलेसी करी रे, टाळ्यो सर्व संजोगीभाव रे;
आतम आतमरूपें परिणम्या रे, प्रगट्यो पूरण वस्तुस्वभाव रे.
धन धन जे० ३५

सहज अकृत्रिम वळी असंगता रे, निरुपचरित वळी निर्द्वन्द्व रे;
निरुपम अव्याबाध सुखी थया रे, श्रीगजसुकुमाल मुनींद रे.
धन धन जे० ३६

नित्य प्रति एहवा मुनि संभारीये रे, धरीये एहनुं मनमांही ध्यानरे,
इच्छा कीजे ए मुनिभावनी रे, ज्युं लहीये अनुभव परमनिधान रे.
धन धन जे० ३७

खरतर गच्छ पाठक दीपचंदनो रे, देवचंद्र वंदे ए मुनिराय रे;
सकल सिद्ध सुख कारण साधुजी रे, भव भव होज्यो सुगुरु सहाय रे.
धन धन जे० ३८

इति श्री गजसुकुमाल सज्झाय समाप्त.

पंचेन्द्रिय विषयत्याग.

पद.

विषयनको परसग चेतन छोड दे,
गिरोई फीरत विलालत फरश वश चंघोई फीरत मातंग. चे० १
कंठ छिदायो मिन आपणो रसनाके परसंग;
नेत्र विषय कर दीप शिखापें, जल जल मरत पतंग चे० २
खटपद जलजमाहे फस मूरख, खोयो अपनो अंग,
जिण शब्द सुण श्रवण ततखिन, मोही भयो रे कुरग चे० ३
एकएक इंद्री चलत बहु दुःख, पायो हे सरभग,
पाचो इंद्री चलत महा दुःख, ईम भाषत देवचद. चे० ४

आत्म पद.

अहो जिनवरजी निके नयण निहारे यामे केवल दर्शन झकजत.
अतितिखे अनिहां रे अहो० १
सुमता सोहन कुमता खोयन, मनिकु लागत प्यारे. अ० २
देवचंद्र असे प्रभु निरखत, निज निज जनम सुधारे. अ० ३

मुनिगुणस्वाध्याय.

राग प्रभाति.

जगतमें सदा सुखी मुनिराज पर विभाव परिणतके त्यागी,
जागे आत्म समाज, निजगुण अनुभवके उपयोगी
जोगी ध्यान जिहाज ॥ ज० ॥ १ ॥

हिंसा मोस अदत्त निवारी, नहि मैथुनको पास,
द्रव्यभाव परिग्रह त्यागी, लीने तत्त्व विलास ॥ ज० ॥ २ ॥

निर्भय निर्मल चित्त निराकुल, विलगे ध्यान अभ्यास
देहादिक ममता सवि वारी, विचरे सदा उदास ॥ ज०॥ ३ ॥

ग्रहे आहारवृति पात्रादिक, संयम साधनकाज
देवचंद्र आणानुजाई, निज संपति महाराज ॥ ज० ॥ ४ ॥

साधुपदस्वाध्याय.

साधक साधज्यो रे निज सत्ता ईक चित्त,
निजगुण प्रगटपणे जे परिणमें रे, एहिज आतम वित्त॥सा० १

पर्य्याय अनंता निज कारजपणें रे वरते ते गुण शुद्ध;
पर्यायगुण परिणामें कर्तृता रे, ते निज धर्म प्रसिद्ध ॥ सा० २

परभावानुगत वीरज चेतना रे, तेह वक्रताचाल,
करता भोक्तादिक सवि शक्तिमारे,व्याप्यो उलटो ख्याल सा० ३

क्षयोपशमिक ऋजुतानें उपनें रे तेहिज शक्ति अनेक,
निजस्वभाव अनुगतता अनुसरेरे, आर्यव भाव विवेक सा० ४

अपवादें पर वंचकतादिकारे, ए माया परिणाम;
उत्सर्गे निजगुणनी वंचना रे परभावे विश्राम ॥ सा० ५

सातें वरजी अपवादें आर्जवी रे न करे कपट कषाय
आतमगुण निजनिजगति फोरवे रे, ए उत्सर्ग अमाय. सा० ६
सत्तारोध अमणगति चारमें रे, पर आधीने वृत्ति
वक्रचालथी आतम दुःख लहेरे, जिम नृपनीति विरत्त.सा० ७
ते माटे मुनि ऋजुतायें रमे रे, वमे अनादि उपाधि
समता रंगी संगी तत्त्वना रे, साधे आत्म समाधि ॥ सा० ८
माय चयें आर्जवनी पूर्णता रे, सवि गुण ऋजुतावंत
पूर्व प्रयोगें परसंगीपणो रे, नही तसु कर्त्तावंत ॥ सा० ९
साधनभाव प्रथमथी नीपजे रे, तेहिज थाये सिद्ध
द्रव्यत साधन विघन निवारणा रे, नैमित्तक सुप्रसिद्ध. सा०१०
भावें साधन जे इक चित्तथीरे, भाव साधन निजभाव
भावसिद्ध सामग्री हेतु ते रे निस्संगी मुनि भाव ॥ सा० ॥ ११
हेय त्यागथी ग्रहण स्वधर्मनो रे, करे भोगवे साध्य
स्वस्वभाव रसिया ते अनुभवे रे, निज सुख अव्याबाध. सा०१२
निःस्पृह निर्भय निर्मम निर्मलारे, करता निज साम्राज
देवचंद्र आणायें विचरवा रे. नमिये ते मुनिराज सा० १३

॥ इति श्री देवचंद्रजीकृत स्वाध्याय संपूर्णमगात् ॥



साधुपद सज्झाय.



साधक साधज्यो रे
निज सत्ता इक चित्त ।
निज गुण प्रगटपणें जे परिणमें रे
एहीज आतम वित्त ॥ सा० ॥ १ ॥

×टबार्थः—अहो आतम स्वरूपानुभव साधक भव्यो ! साधज्यो—नाम साधन करज्यो, साधने साध्यनी सिद्धता एषामदुक्तिः ईहां साध्यस्वस्वरूपानुभवकारिका निज सत्ता ईक चित्त—एक चित्ते नाम तदाकार वृत्तियें—तल्लयी तन्मयी तन्नयी छते आतम सत्ता चिंतववी, किम ते लीखे. आत्मद्रव्यमें आत्मत्वधर्म रह्युं छे, तेमां आत्मता आत्मत्वपणें रही छे, आत्मता निज सत्ता अभेदोपचारीपणो छे, एटले आत्मता निज सत्तामें भेद नहीं, एक छे, एटले अनादिए सिद्धनी सत्ता असंख्यात प्रदेशात्मक, तिमज संसारमें रह्यो केवली असंख्यात प्रदेशाकीनां सत्ता एक सुक्ष्म निगोदीयानी आठ रुचकवर प्रदेशात्मक सत्ता एक ॥ यदुक्तं नंदि सूत्रे ॥ सव्व जीवाणं पिणं अख्वरस्स अणंतमो भागोनिच्चुग्घाडियो चिट्ठइ इति सिद्धांत वचन प्रामाण्यात् ॥ सत्ता एक अखंड अबाधित ईह सिद्धांत श्रीळ जोइ एषाममपिमदुक्तिपुनः स्वसत्ता इहगरूपा एषामदुक्तिः सत्तैवतत्त्वमिति सिद्धांत वचन प्रामाण्यात् ॥ ईणहीज एकांत पक्षनें ग्रहण करी तिमहीज सप्तभंगी थकी स्यादस्ति भंगो ग्रहण करीने अद्वैतपक्ष स्थापन कर्यो छे ते

× आ टबो श्रीमद् ज्ञानसारजी महाराजे लखेलो छे.

१ एहज २ तेमज.

एक नयात्म एक भंगात्मक छे. आत्मा तुपुष्करपत्रवन्निर्लेपः प्रकृतिः कर्त्री इति सिद्धांत. ए पदें हीज सिद्ध समान सत्पद मेरो दुसेरो नथी, श्रोर एक आतमाही राम हे, ए कथन छे परं सत्पदनो जैनमतने आश्रये एक नय एक भंगीनुं कथन छे. सर्व नयाश्रयी नथी, सकथं भव्य १ अभव्य २ जातिभव्य ३ ए तीनें जीवनी जाति छे तेमां एक भव्य जीव जाति आश्रयी ए कथन छे. इहाँ जैन न्यायसम्मतिची ७५००० प्रकरण, तेमां हजार च्यारेक म्हारो वांचेल छे तेनुं आंइ लिखत लिखवे अर्थ वधी जाय इत्यलम्. साधक साधज्यो रे निज सत्ता इकचित्त ए बे पदोमें विरोधाभास छे ते किंचित् लिखुं, परं हुं महा निर्बुद्धि वज्रठार छुं जैनरो जिंदो छुं. म्हारो माजनो अतिमंद छे, मिझाय कर्तानो मोटो माजनो छे, परं सिद्धांत वाक्यार्थ विरोधाभास कथन लच लचण जैन विरुद्ध जाण्या पछी न लिखवुं ते अनत जिननु चोर थावुं छे, तेथी लिखुं. चेतन निर्मल मेलो थाय, मेलो उजलो थाय, ते बे हेतुए थाय तत्र हेतु लचणमाह ॥ हिनोति प्रापयति साध्यमर्थमितिहेतुः साधवायोग्य कार्य तिणप्रतें प्रसिद्ध करे ते हेतु कहीजे. तद्हेतुस्त्रिधा सद्हेतुः असद्हेतुः । सद्सद्हेतुश्च ॥ यत्सत्वे यत्सत्वमित्यन्वयः जे छते जे छतूं ते अन्वय० अन्यहेतुसत्वेचेतनासत्वं–चेतनासत्वे परमात्मतासत्वं परमात्मपणुं छतु छे तद्भावेतद्भावोव्यतिरेकः चेतना-अभावे परमात्मनो अभावः ए व्यतिरेक हे ॥ अन्वय अरु व्यतिरेक हेतु लखी भेदरुप अघेरो; परमातम अंतर बहिरातम साहिज हूवे सुरभेरो. मदुक्ति. हिवे मझायना बे पदोमां विरोधाभास जणावु. साध्यव्यापकत्वे साधनाव्यापकत्व-

१ मारो २ बीजो ३ त्रण ४ अहीं.

मुपाधिः तिहां साधवा योग्य वस्तुने विषे व्यापीने रही छे, हेतु तेहने विषे अव्यापक रही छे ते उपाधि **साध्यसमानाधिकरणात्यंताभाव प्रतियोगित्वं साधनाव्यापकत्वं.** साध्य वस्तुने अधिकरण मिलाप हुवे अत्यंतपणे अभाव हुवे अत्यंत पणे विरोधी साधना व्यापकत्वं नाम तेनुं साध्य कहीजे. साधवा योग्य पदार्थने व्यापक कहीजे, साधवा योग्य पदार्थमें व्यापिने रह्यो छे इहां साधवा योग्य पदार्थ स्वरुपानुभव छे. ए गाथामां ए कथनपूर्वक दलनो कथन उत्तरदल थकी विरोध पामे छे ते आगळ लिखुं छुं, तिहांथी वांची जाण लेज्यो. **साधक साधज्योरे** इत्यादिक पद द्रव्यार्थ गतम् ॥ निज-गुण आत्मगुण अनंतज्ञानादिक क्षायिकभावें स्वस्वरूपमें साक्षा-त्कार अनंतकालें अविनश्वर सूत्रभावी ज्ञाननुं अंहि कथन नथी तेइऐं इहां केहनुं कथन छे ते लिखे. क्षयोपशमभावें ध्यानारूढ थवानी इच्छा थये छते रेचक कुंभक पूरक मन पवननां द-लियां रेचावी नाम पगना अंगूठाथी खिसोवीनें मूलद्वारे अपान पवनथी ते दलियांनो कुंभक घडानो आकार करी पछे पूरक करे ते पोला घडामें तेज दलियां पूरे–भरे, भरीने दडो करे पछी एज पूर्वोक्त रीतें बीजा घोरीचक्र नाभिचक्रें तिमज त्रीजे थण माथे हाथ दीधे घडघडाट करे ए चक्रे ल्यावीनें चोथा हृदयकमलचक्रें तेजचक्रे ध्यान निजगुण चिंतवन करतो अंतर आत्मावंत कहिवाय यथा आनंदघनमुनिराजोक्तिः पाप व्यापारवान् बहिरात्मा बहिरातम तजी काया मन वचन एहवा निश्चल कर्या छे ते कोइके कह्युं ए तो मरी गयो तेनी परीक्षा करवा कारण दशमें द्वार टोया दीधें लोही दीठुं तिवारे जी-वतो जाण्यो ते अंतर आत्मावान्. गाथा तवननी

१ थये २ आणी ३ अहीं ४ त्यारे ५ खशेडी ६ कहेवाय ७ त्यारे.

बहिरातम तज अंतरआतमा रूप थइ थिरभाव,
परमातमनुं आतमभाववुं आतम अरपण दाव ॥ १ ॥

एहवो छतो थिरभावें थइनें परमातमनुं परमातमा अनंतज्ञानादिगुणमयी छतो अछेद्य, अभेद्य, अवेद्य, अक्लेद्यादि एहवुं पोताना आत्मामां भाववु चिंतववुं विचारवुं ते चयोपशमभावमें रह्युं छे, ने सिज्झाय कर्ता "निजगुण प्रगटपणें जे परिणमें" ते तो ज्ञानादि गुण आत्मामां प्रगटपणे ते तो आत्मांथी साचात्कार थए प्रगटें कहिवाय ने प्रगट कह्यां विना जे परिणमें तदाकार थावुं संभवे नहीं वली ते विना एहीज आतमवित्त। धन छे ए तो कथन चायकभावें छे. परं चायिकभावें आत्मवित्तनें सिद्धमां तो अभेदोपचारीपणुं छे ए विरोधाभास छे. तिहां पूर्वकदलें तो चयोपशमभावे कथन साधकसाधक्योरे निजसत्ता इकचित्त ते उत्तरदलमां सिज्झाय कर्तायें निजगुण प्रगटपणे जे परिणमेरे एहिज आतमवित्त। एहवुं जे कह्युं ए चायिकभावे कथन ते विरोध.इति संटकः हिवे[1] आगळ सिज्झायनी गाथाओमां स्यो वर्णन करस्यों. परं ए कविराजनी योजनानो एज सुभाव छे तेज वातने गटरपटर आगेंनी पाछे पाछेंनी आगे हांकतो चाल्यो जाय ते तमे पोते विचार लेज्यो. संबध विरुद्ध अंगोपंगभंग कविता वारवार एकपद गुंथाणो ते पुनरुक्ति दूषण कविता ते एहीज सिज्झायमें तमेही जोइ लेज्यो, एक निजपद दश जांगा गुथ्यो छे ते गिर्णलेज्यो, इकलो मूजने दूषण मत देज्यो, बीजु एहुंनो छूटक लिखत सप्तनयाश्रयी सप्तभग्याश्रयी चुस्त छे, स्वरूपना कथननी योजना तेमां तो गटरपटरछे, ए विना बीजी सहिज

१ हवे २ करीशु ३ जग्याए ४ गणी ५ एमनो.

छूटक योजना सटंक छे, योजना करवी ए पिण विद्या न्यारी छे, कौमुदी कर्ता यें शिष्यथी आद्य श्लोक करायो आपथी न थयो. वली ए वात खुली न लिखुं तो ए लिखत वांचण वालो मूर्खशेखर जाणे ए कारणे लिखुं. गुजरातमां ए कहिवत छे आनंदघन टंकशालि, जिनराजसूरिबाबा तो अवध्यवचनी, उ० यशोविजय टानरटुनारिया, पोते थाप्यो तेज उथाप्यो, उ० देवचंद्र×जीने एकपूर्वनुं ज्ञान हतुं तेथी गटरपटरीया, मोहनविजयपन्यास ते लटकाला, मुजने आगळ अर्थ लिखवुं छे ते अक्षर प्रमाणे अर्थ लिखिश, किहां सरीखो अर्थ दीसे ते म्हारो दूषण न काढश्यो, अक्षर विरुद्ध अर्थे मारो दूषण सही इहां सर्व गाथा लिखुं. हिवे दूजी गाथारो अर्थ लिखुं.

पर्याय अनंता निज कारणपणें रे,
वरते ते गुणशुद्ध;
पर्यायगुण परिणामें कर्तृतारे,
ते निज धर्म प्रसिद्ध ॥ सा० २ ॥

प्रथम गाथारे अंते कह्यो छे, एहिज आतमवित्त वित्त शब्दें आत्मद्रव्य नाम आत्मारो धन दूजी गाथारे आदें पर्याय ईसो पद धर्यो छे तेथी प्रथम द्रव्यरो लक्षण लिखें पछे पर्याय लक्षण लिखसुं. किम द्रव्य विना पर्यायरो असंभव, ते माटे द्रव्यलक्षणमाह गुणपर्यायवत्वं द्रव्यत्वम् । इण कहिणे शुं ज्ञानपदार्थ द्रव्य छे. गुण कांइ ? तत्र गुणलक्षणमाह । सहजातित्वं गुणत्वम् इतिगुणलक्षणम् ॥ जिम स्वर्ण द्रव्यमें पीतताग्रुण सहजातिपणो छे तिमहीज ज्ञानद्रव्य प्रगट हुवा छतां घट-

१ पण २ बीजी ३ गाथानो ४ आत्मानो ५ बीजी गाथाने ६ एहवो ७ रुखीने.

पटादि पदार्थनो जाणपणो हुओ ते गुण कहीजे, तेपिण ज्ञानथकी भिन्या हुवो छे तिमहीज द्रव्यने विषे पर्याय रह्या छे. पर्याय लक्षणमाह। पूर्वपूर्वाकार परित्यागोत्तरोत्तराकार परि स्फूर्त्ति मंतोहि विशेषाः अपरमान पर्यायाः ए पर्याय- रा दोय नाम छे, जिम स्वर्ण द्रव्य तिणमें पीतता लक्षण, सर्व धातुथी भारी ए पिण स्वर्ण द्रव्यनोहीज गुण लक्षण ति स्व- र्णना अनेक आभूषण करणा ते पर्याय तिमहीज जगतने विषे यावंतः परिच्छेद्याः पर्यायास्तावंतः परिच्छिदिकास्तस्य केवलज्ञानस्य स्वभावा वेदितव्याः स्वभावाश्च पर्याया इति। यावंतो नाम जितरा, परिच्छेद्याः नाम परिछेदन नाम एकेक लक्षणे करीने भिन्न करिवा योग्य नाम परिमाण करवा योग्य जे अनंता घटपटादि पदार्थ एतले ज्ञानथकी जगतमें घटपटादि अनंता पदार्थ तेऊ एक एकने भिन्न भिन्न लक्षणे केवलज्ञानथी ओलखवा जे ते पदार्थ परिछेद्य कहीजे, नाम पदार्थ भिन्न लक्षणे ओलखवा योग्य छे हिवे परिछेद्यनो अर्थ लिखु. तावंतः परिच्छेदकाः नाम तितराहीज परिछेद्य पदार्थ भिन्न भिन्न करी ओलखवा जाणवा ते परिछेदक कहीजे, तस्य केवलज्ञानस्य स्वभावावेदितव्याः नाम तिके परिछेद्य पर्यायनें वली परिछेयक पर्याय ते सर्व केवलज्ञान केवल दर्श- नरा स्वभाव छे, स्वभावाश्च पर्यायाः पर्याय अनता ज्ञान द्रव्यरा पर्याय अनता ते निज कारजपणेरे निज स्वरूपानु- भव तद्रूप जे कार्य तिणे स्वरूप रूप कार्य प्राप्तिपणे वरते ते गुण शुद्ध वरते नाम प्रवर्ते, स्वरूप कार्य चिंतवनमें ते गुण शुद्ध तिकोशुद्ध निर्मळ आत्मारो गुण छे. पर्याय गुण परि- णामें पर्याय परिणाम तिमज गुण परिणामे ज्ञानादि गुण परिणामे कर्तृतारे, आत्मारे स्वरूप कार्यनी प्राप्तिमां वीर्य फोर-

वणो ते वीर्यने विषे आत्मानो कर्त्तापणो छे, ते निज धर्म प्रसिद्ध तेहिज निज धर्म आत्मारो आत्मत्व धर्म, ते धर्मने विषे स्वरूप कार्यनी सिद्धतारो वीर्य पराक्रमीपणो आत्माने विषे रह्यो ए कथन शास्त्रांरे विषे रह्यो प्रसिद्धहीज छे. एहमेंहीज विशेषपणे खुलीनें लिखूं. हिवे गाथाना अक्षर उपर एहिज वात उतारिये छे, तिहां ज्ञानावरणादि आठ कर्म ते तो आठेही द्रव्य छे, ते द्रव्य द्रव्य दीठ अनंती कर्म वर्गणा तेंहीज द्रव्य, द्रव्य अनंता अनंता पर्याय छे. यदुक्तं प्रज्ञापनायाः पंचम पद टीकायाम् ॥ एकमपि द्रव्य मनंत पर्यायम् ॥ निज कारजपणेरे जो टाणे आत्मा आत्मिक स्वरूपानुभव प्रत्यक्ष रूप कार्यमें प्रवर्त्तै ते टाणें पोतानो कोइ ज्ञानादि गुण तेहना जे अनंता पर्याय ते कर्म वर्गणाना एक एक पर्याय दीठ ज्ञान पर्याय कहिलावीनें पर्याय सहित कर्म द्रव्यनो नाश करे, पणेंरे ते पणें आत्मा वर्त्ते प्रवर्त्ते ते गुण शुद्ध नाम ते आत्मा शुद्ध आत्मिक स्वरूपनावच्छेदिकावच्छिन्न शुद्ध निर्मळ आत्मिक स्वरूपता आत्मारे विषे रह्यो जे आत्मत्वधर्म तेहने विषे रही आत्मता आत्मत्वपणोतिणे करनें अवछेदिक रहित नहीं एटलें आत्मिक स्वरूपतायें करनें सहित तिर्णे करीनें अवछिन्न व्याप्ततदाकारपणें छे तेमां प्रवर्त्तीज रह्यो छे. आत्मिकशुद्धगुण छे. पछे पर्यायगुणतामें कर्त्तृतारे ते पर्यायना जे गुणज्ञान पर्यायना जे गुण ते एकेक गुण दीठ आत्मारे कर्त्तृतापणो छे कर्त्तापणो छे. ते निज-धर्म प्रसिद्ध नाम आत्मत्वधर्म ते आत्मारे विषे तेहने थये आत्माने विषे प्रसिद्ध छे. जिम केवली केवल समुद्घात करते चोथे समये अंतरालपूरते १४ राजलोकमें सातकर्मनी तिम

१ जे समये. २ ते समये.

एकेका कर्मनी अनती अनंतीकर्मवर्गणा, वर्गणा लक्षण-माह ॥ पंचमकर्म ग्रथनी गाथा ॥ इगदुगुणू गाइजा अभवणंत गुणअणूखंधाउरलोचियवग्गणाउ ॥ इत्यादि व्याख्या अणु शब्दः प्रत्येकं मग्रध्यते अणु शब्द छे ति को इग करे एकेक शब्द देइ मिलावणो तत' केवलोअणुरेवाणुकः परमाणु रित्यर्थः तिणहुंति इकेलोजे केवलदृष्टिए एकनो दूजो न हुवे ते अणु कहिये अणु तेहिज अणुक कहि जे तिण अणुकने परमाणुं कहिजे, इह जगतने विषे समस्त जे लोकाकाश प्रदेश तिणांमांहि जे एकाकी परमाणुं विद्यमान छे छता छे तिण परमाणुं वारो समुदाय समान जाति एकवर्गणा कहीजे, इणहीज प्रकारे अनता जे द्विप्रदेशी स्कंध तिणारे समान जातिपणा हूती दूजीवर्गणा कही, जे इणेही प्रकारे अनन्ता जे त्रिप्रदेशी स्कंध तिणरि समान जातीय पणाहुति त्रिजी वर्गणा. इणेही ज प्रकारे एकेक परमाणु वृद्धियें करनें वधावणें करनें अनता जे सख्यातप्रदेशी स्कंध तिणारे समान जातीयपणासु संख्यात वर्गणा कहिजे, इण ही प्रकारें असंख्यातवर्गणा जाणवी, अनतपरमाणु वेकर निष्पन्न हुस्या जे स्कंध तिके समान जातीयपणासुं अनतवर्गणा कही जे, इणही प्रकारे अनंतानतवर्गणा कहीजे, इणा सर्व वर्गणा प्रतें उल्लघने अभव्य हुंती अनंतगुणा सिद्धरे अनतमें भाग जे परमाणु तिणें करी नीपज्या जे स्कंध ते उदारिक शरीर लेवा जोग्यवर्गणा हुवे ॥ १ ॥ उदारिकसुं वैक्रिय सूक्ष्म २ वैक्रियमों आहारिक सूक्ष्म ३ आहरकसुं तेजस सूक्ष्म ४ तेजमसु भाषा सूक्ष्म ५ भाषासों श्वासोश्वास ६ श्वासोश्वाससुं मन ७ मनसु कर्म ८ ओ सवध टीकामें घणोहे

१ परमाणुओ २ तेमना

पण गारव भयात्त्याज्यम्, पिण पूरी १४ राजमें सूईनी अणी टिके एतो मोटुं क्षेत्र परं एहथीही असंख्यातगुण क्षेत्रही नहीं वाकी खाली न रह्यो, पछी जे जे कर्म दलीयां जीणक्षेत्र प्रत्यई भोगव खपावणा तिण तिण क्षेत्र प्रत्यइ भोगवने कर्मदलीयां अवशेष आयु स्थिति अवशेष रही ते प्रमाणे ७ तेही कर्म प्रकृतिनां अवशेष दलियां राखे, तिम कोइ मिथ्यात्वी जीव अंतगड केवली थइ मुक्तें जावावालो छे ते निश्चे शुद्ध क्षायकीज हुवे तेने अवशेष एक अंतर्मुहूर्त आयुस्थिति रही छे ने एटला कालमां सात कर्म प्रकृति तेमां, एकेकी कर्म दीठ अनंती अनंती कर्म वर्गणा खपाववी छे ते टाणे आत्मा आत्मत्व धर्मे सहित छतो आत्मा अनंत बली छतो पोताना अनंत वीर्यनी शक्ति पोताना अनंत ज्ञानादि गुण तिमज पर्याय अनंतोमां आत्मधर्म संबंधित आत्मत्व शक्तिने फोरवीने अनंती कर्म वर्गणाओमां एकेकी वर्गणा दीठ ज्ञानादि गुणना अनंत पर्याय वर्गणा दीठ फेलावीने खपावे, निस्सेस सर्वथा कर्म नाश करीने अंतर्मुहूर्तमां सिद्धे जाय विराजे ते आशये सिझाय कर्ताये पर्याय गुण परिणामें कर्तृतारे ते निज धर्म प्रसिद्ध-सिद्ध सूधी पोहचावी चूका. ए वे गाथायांमे स्वरूप ग्राहक आत्मारी शुद्धता लिखी, हिवे परपरिणमन आत्मारी वात लिखे.

परभावानुगत वीरज चेतनारे,
तेह वक्रता चाल;
करता भोक्तादिक सवि शक्तिमां रे,
व्याप्यो उलटो ख्याल ॥ सा० ॥ ३ ॥

परभावानुगत वीरज चेतनारे, परभाव नाम क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष मोह मिथ्यात्व इत्यादि स्वरूप प्रापक

आत्मारे विषे नथी, परभावमें प्रवर्त्ते आत्मारे विषे तिणरे विषे अनुगत नाम प्राप्ति हुइ वीर्य चेतना एटले परभावरे विषे आत्माये वीर्य पराक्रम फोरव्यो चेतनारे विषे वीरज फोरव्यो तिवारे आत्मा गहिलो हुवो, भांग पीधी ठहिरि, तिवारे जे आत्मा करे ते लिखे यथामदुक्तिः ॥ परपरणमन विभावे आतम अजा कृपाणी न्याये मिथ्यात्वादि हेतु आतम आपही बंध उदीरे आपही उदये सुख दुःख वेदे गत्यागति थिति मीरे ए जे चालां छे ते स्वरूप प्रापक आत्मारी नथी तेह वक्रता चाल आत्मारी वक्रता चाल ठहिरी, वांकी चाल ठहिरी. कर्त्ता भोक्ता तिवारे आत्माने विचारी जोतां थकां वीर्य आत्माए फोरवीने मिथ्यात्वादिक आत्मानुगत कीना, आत्मारे विषे कीना आत्मारे विषे तो ए नहुता अने आत्माए कीना सवि शक्तिमां रेते आत्मशक्तिए करने कीना भोगव्या पिण आत्माहीज, तिवारे कर्त्ताही आत्मा भोक्ताही आत्मा ठहिर्यो यदुक्त मागमे यः कर्त्ता कर्म भेद्रानां, भोक्ता कर्म फलस्य च, संसर्त्ता परिनिर्वाता, सह्यात्मा नाऽन्य लक्षणः १ व्याप्यो उलटो ख्याल के तो स्वरूप कर्त्ता आत्माहीज छे के विरूप कर्त्ता पिण आत्माहीज ठहिर्यो आत्मा सागीरो सागीहीज तिणे आत्माहीज उलटो ख्याल खेल्यो, आत्मारे करवा योग्य नथी ते आत्माए कीनो तेथी उलटो ख्याल ठहिर्यो ॥

क्षयोपशमिकऋजुताने उपने रे,
तेहिज शक्ति अनेक;
निज स्वभाव अनुगतता अनुसरे रे,
आर्यव भाव विवेक ॥ सा० ॥ ४ ॥

हिवे तेहीज जीवनविषे अनंता भव भ्रमण करतां थकां

अनंतो काल व्यतीत हुवो छते ते जीव जाते भव्य हुतो तेथी क्षयोपशमक क्षयोपशम भावे " खओवसमियं असंखवार होइ इति सिद्धांत वचन प्रमाणात् " ते असंख्यातीवारमां प्रथम विरियां क्षयोपशम सम्यक्त्व पाम्यां थकां वक्रता चालतो मिटि ऋजुताने उपनेरे सरळता उपनी तेहिज शक्ति अनेक ते जीवनीहीज अनेक शक्ति छे, तेहिज आत्मा शक्ति ए करने निज स्वभाव आत्मानो स्वस्वभाव ज्ञान दर्शन चारित्रादि तेहनो अनुगतता निजस्वभावमें आत्मा प्राप्ति हुवो निज स्वभावमें रमण हुवो, एटले आत्मा पोतानो स्वभाव पाम्याथी अनुसरे, ग्रहण करे. आर्जवभाव सरलतारो स्वभावीपणो ग्रहण करे, तिमहीज वली आत्मस्वभाव प्राप्ति रूप विवेक ग्रहण करे आर्यवपणेरो भाव प्रगटे एतो आत्मानो क्षयोपशम सम्यकत्वथी उत्सर्ग कथन छे.

अपवादें परवंचकतादिका रे,
एं माया परिणाम;
उत्सर्गे निज गुणनी वंचना रे,
परभावे विश्राम ॥ सा० ॥ ५ ॥

हिवे आत्मानो विशेष कथन लिखें। अपवादें विशेष कथन करनें ए आत्मा क्षयोपशम भावि छे. क्षायिकभावे नथी तेथी परवंचना अन्यने ठगणो ए कपटनो परिणाम परिणमन छे, क्षयोपशमी छे तेथी जीवमें माया परिणामी छे, परं उत्सर्गे सामान्ये आत्मगुणनी ठगाइ थाय, सामान्ये आत्मगुण ठगीजे विशेषपणे न ठगीजे कीण विरियां तेहीज जीव स्वस्वभावमें प्रवर्ततो तिण विरियां तो नही ने स्वभावमें प्रवर्ततो छतो एहिज जीव परभाव नाम आर्त रौद्रध्यान रूप विभावमें विश्राम ले, विभावे जाय, ठहिरे, तिवारे उ० निज-

गुणनी सामान्ये वंचना ठगाइ करे क्षयोपशमात् क्षयोपशम छे तेथी—

सातें वरजी अपवादें आर्जवी रे,
न करे कपट कपाय;
आतमगुण निज निज गति फोरवेरे,
ए उत्सर्ग अमाय ॥ सा० ॥ ६ ॥

पांचमी गाथामें क्षयोपशम भावथी विशेष कह्यो, हिवे छठी गाथामें क्षायिकभावें विशेषपणो कहे छे. अपवादे नाम तेहिज जीव विशेषपणें सातें वरजी सात कर्मप्रकृति अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, मिथ्यात्व मोहनी, मिश्रमोहनी, सम्यकत्व मोहनी, ए सातें वरजी तिवारें अपवादे नाम विशेप आर्जवी थाय, विशेषपणें सरळ स्वभावीपणो ग्रहण करे, कपट तो अनंतानुबंधी चोकडी क्षपायां थकां शेप रह्या जे अप्रत्याख्यानादिक तिण संबंधी माया परिणामीपणेमें न प्रवर्ते तिवारें आत्मा आत्मगुण अनंतज्ञान दर्शनादि तिणाने निज निज गति फोरवे, शक्तिमें प्रवर्तावे, ते पिण एटला सुधी ही आत्मा उत्सर्गे सामान्ये अमायी अपवादे विशेषपणे हजी सुधी आत्मा अमायी नथी, मायानी दोड दशमें गुणठाणे, रे अचरम समय सुधी छे. किम क्षपकश्रेणि हजी सुधी नथी कीनी तेथी मायाने उपशमावी छे पिण संपूर्ण क्षपावी नथी. कथं केवलज्ञान केवलदर्शन नथी पाम्यो ते पामस्ये तिवारें शुद्ध क्षायिकी थास्ये, केवलज्ञान केवलदर्शन उपज्यां सूं पहिला जे क्षायिकीपणो छे तेहनें सिद्धांतमें अशुद्ध क्षायिकीपणो कह्यो छे. यदुक्तमागमे, ननुसप्तक्षये क्षायिक इत्युक्तत्वात् सतिक्षायिके सम्यक्त्वे श्रीकृष्णवासुदेवः कथंनरकावर्नीं जगाम श्रेणिकश्च प्रथमामिति इसो प्रश्नकीयो

तत्रोत्तरमाह त्तायिकंद्विधा शुद्धमशुद्धंचेति ॥ तत्र श्री कृष्णश्रेणिकयोरशुद्धं त्तायिकं । कस्माद्धेतोः तद्धेतुआह । तस्यसपर्यवसितत्वादिति न विरोधः यदुक्तं श्री नवपद प्रकरण वृत्तौ ॥ तथाहि त्तायिकस्यशुद्धाशुद्ध भेदेन द्विभेदत्वात् ॥ तत्रापायसद्द्रव्यविकला भवस्थ केवलिना मुक्तानांचया सम्यगृदृष्टिस्तच्छुद्धं त्तायिकम् । तस्य च साद्य पर्यवसानत्वान्नास्त्येव भंगः तस्यनाम तिण त्तायकरे सादि अपर्यवसितपणाहुंति भंग नही यदाहुः गंधहस्ति ॥ भवस्थ केवलिनो द्विविधस्यसयोगायोग-भेदस्य सिद्धस्य दर्शन मोहनीय सप्तत्तयाविर्भूता सम्यगृदृष्टिः सादिरपर्यवसितेति ॥ यात्व पायसहचारिणी श्री श्रेणिकादेरिव सम्यगृदृष्टिस्तदशुद्धं त्तायिकं तिण शुद्ध त्तायकरे सादि सांत भांगो हुवे अस्तिप्रतिपातः तिण जीवरे त्तायकसुं पडणो छे किण हेते तिको हेतु श्री गंधहस्तीजी लिखे तत्रोवाच अपायसद्द्रव्यवर्त्तिनी श्री श्रेणिकादीनांच सद्द्रव्यापगमे भवत्यपायसहचारिणीसा सादिः मति ज्ञानांशकर सहित सम्यग् दृष्टि हुवे तिवारे मति ज्ञानांशकर सहित त्तायिक सम्यक्त्व प्रगट होवणेसुं सादि कहीजे, केवल ज्ञानरी उत्पत्ति हुवे छते मतिज्ञानांश त्तय हुवे तिवारे सांत कहीजे. अपाय सहचारिणी सम्यग् द्रष्टिरो अंत हुवो तिवारे सादि सांत भांगो ठहिर्यो, केवल ज्ञान उपज्यां पछे मतिज्ञानांश त्तय हुवे छते शुद्ध त्तायिकरी आदि हुई तीन कालमें जीण त्तायकरो नाश नही तिणसुं अनंत अतएव सादि अनंत भांगो शुद्ध त्तायिकमें पामें इति ॥ ६ ॥

सत्तारोध भ्रमण गति चारमें रे,
पर आधीनें वृत्ति;

वक्र चालथी आतम दुःख लहे रे,
जिम नृप नीति विरच ॥ सा० ॥ ७ ॥

जो जीव अशुद्ध चायिकीपणा माटे सचा आतम सत्ता ते आतम सत्तानें रोध-रोकने भ्रमण गति चारमेंरे चार गति चोरासी लाख जीवयोनीरो प्रवर्तणो-भमणो पर नाम जडादिकनी आधीनवृत्ति छे एटले जीव जडाधीन वृत्तिए करनें चार गतिमां परि समस्तपणें भ्रमण करे. तत्र द्रष्टांतमाह जिम कृष्ण वासुदेव अशुद्ध चायिक सम्यक्त्व पामके कालांतरे मरण पाय तीजी नरकमें सात सागरोपमरी स्थिति में उपज्यो उपज्यां पछे तीजी नरकरो आउखो सपूर्ण भोगवनें मनुष्यभव करनें पांचमें देवलोकमें दस सागरोपमरी स्थितिमें उपज्यां, तिहांथी चविकर बारमें अममजी ईसेनामे आवती चोवीसीमें तीर्थंकर हूंसी यदुक्तं श्री सघदासगणि कृति वसुदेव हिंडौ तथाहि । कहा तइ आए पुढवीए उवट्टित्ताइ हवे भारहेवासे सय दुवारे नयरे जियसुत्तस्सरणो पुत्तत्ताएउवज्जिऊणपत्त मंडलिय भावो पवज्जं पडिवज्जिय तित्थयरणाम कम्मं समुज्जणिता बंभलोए कप्पे दस सागरोवमाउण तउचुओ वारसमो अममो नामा अरहा भविस्सई ॥ ते आत्मारो विचारी जोता तो मूळस्थानक सिद्धहीज छे, पर ते आत्मा जडादिकने आधीन वृत्तियें करने परिभ्रमण करे ते आत्मानी वक्रचाल ते दुःख पामे किम स्वचालछोड पर चालमे चालवा लागो तारे पराई चालसुं आत्मा दुख पामे पोतानी चालें प्रवर्त्तता थको सिद्धसुखनोहीज भोक्ता छे, ए तो आत्मा परचाले दुःख पाम्यो तिहां द्रष्टांत जिम नृप नीति विरत्त जिम राजा राजनीतिमां प्र-

वर्ततो थको सर्व वातें साता पामें तेहिज राजा नीतिने विरत छोड्यां थकां दुःख पामे इत्यर्थः ॥ ७ ॥

ते माटें मुनिऋजुतायें रमे रे,
वमे अनादि उपाधि;
समता रंगी संगी तत्त्वना रे,
साधे आतम समाधि ॥ सा० ॥ ८ ॥

ते माटे तिण कारणें मुनिराज परभाव छोडने रुजुता सरलता आत्मिक स्वभाव संबंधीत जीणें करनें आतम स्वभावमें रमे-रमण करे दिनरात फिरी तेहिज मुनिराज. अनादि कालनो मिथ्यात्वादि उपाधिलक्षणमाह ॥ साध्य व्यापकत्वे सति साधना व्यापकत्वमुपाधिः ॥ साधवा योग्य वस्तु तिणरे विषे तो सर्वथा प्रकाररुप स्वरूपता व्यापी रही छे. व्याप रह्यां थकां तें साधन जे कारण तेने विषे अव्यापकत्वं व्यापन रही छे एटले स्वरूप कार्य साधवावालो ते साधन ठहिर्यो तेहनें विषे रुजूतापणो व्यापीने रह्यो तेहिज उपाधि, ईहां साधवा योग्य आत्मिक स्वरुप सरलता तेहने विषे व्याप रही छे साधन मुनिराज तिणरे विषे अनादि कालीन मिथ्यात्वादिक उपाधि तिणसु रुजूता नावे तिण कारणें मुनिराज रुजुताने ग्रहण कीयां स्वरुप प्राप्ति हुवे, ते कारणें उपाधि वमें दुर करे तिवारे साधुरे विषे स्वरुप ग्राहक शक्ति उपजे, सुमता रंगी शुभमति स्वरुप संबंधनी भली जे मति तिणसुं मुनिराज रक्त हुवे, अहोनिशी सुमतिमयी प्रवर्ते. संगी तत्त्वनारे शुद्धात्मतत्व तेहनो अहोनिशि चिंतवन तद्रूपे संगी हुवे तिवारे साधे आत्म समाधि ॥ समाधिश्चित्त वृत्तिरोधः ॥ मुनिराजनी चित्तनी चित्त-मन तेहनी

तिणरो कर्त्तापणो तिणारे नही रह्यो छे, कर्मरो कर्त्तापणो बाकी न रह्यो ॥ ९ ॥

साधनभाव प्रथमथी नीपजे रे,
तेहीज थाये सिद्ध;
द्रव्यत साधन विघन निवारणा रे,
नैमित्तिक सुप्रसिद्ध ॥ सा० ॥ १० ॥

कर्मरो कर्त्तावंतपणो नही तेथीज साधकभाव, आत्मिक गुण साधक स्वभाव, आतमारा आत्मिक गुणज्ञान दर्शनादि साधक साधन करणो सिद्ध करणो तिणरोभाव प्रथमथी–पहिलां हुंती एटले ए हवे आत्मा थये छते नीपजे थाय तेहिज आत्मा थाय, सिद्ध सिद्धपणे थाय पामे तो ते हवे थये आतमारे द्रव्यत साधन द्रव्यत्व साधनपणो बारा साधनपणो चारित्रादि तेहना द्रव्यत्व साधनना जे कोइ विघन ते विघनोनो निवारणारे निवारण करणो दूर करणो नैमित्तिक ए तो निमित्त कारण छे; साधरण असाधारणमांथी एकही नथी जीम कुंभकारने दंड चक्र चीवरादि निमित्त कारण घटरूप कार्य सिद्धि करतां थकां छे, तिम द्रव्यत साधन द्रव्य साधूपणारो एहवो थयो आतमा तेहनें पांचेई जे प्राणातिपाताश्रवरो निवारण द्रव्य साधुपणारे विषे प्राणातिपातादिकनो विघन न पडे, प्राणातिपात मृषावादादिक लागे तद्रुपद्रव्य साधनपणारो विघन ते विघननो निवारणो एहवे थये आतमारे सहिज निवारणो छे, तेथी नैमित्तिक कारण कह्यो, तिको नैमित्तक कारण सुप्रसिद्ध प्रसिद्धहिज छे, ए सर्व द्रव्य साधन छे, द्रव्य साधनथी तथाविध साधनता नथी.

भावें साधन जे इक चित्तथी रे,
भाव साधन निज भाव ।

भाव सिद्ध सामग्री हेतु तेरे,
निस्संगी मुनिभाव ॥ सा० ॥ ११ ॥

द्रव्य साधन कह्यो, हवे निज स्वभाव साधनथी स्वस्वरूप सिद्ध थाय ते लिखे ते भावसाधन छे, तेथी भावें साधन स्वरूपानुयायी जो भावसाधन आत्मिक स्वरूपने सिद्ध करे एहवो जे भावसाधन. जे इक चित्तथीरे जीको एक चित्तवृतियें करनें तदाकारभावपणें प्रवर्त्तवुं ते भावसाधन कहिवाय, ए लिखत शुक्लध्यानना चोथा पायानो छे. हिवे रूपातीतध्यान कहे छे, निरंजन, निर्मल, संकल्प विकल्प रहित, अभेद एक शुद्धासत्तारूप निर्मल चिदानंद तत्वामृत असंग, अखंड, अनंत गुणपर्यायरूप आत्मस्वरूपनो ध्यान ते रूपातीत ध्यान जाणवो. तेथीज सिझायकर्त्ता आगळ पदमां इम गुंथ्यो छे, भाव-साधन भावे साधन छे ते निज भाव-निज स्वभावपणो छे आत्मारो. हिवे ते जे निज भाव ते निज भावथी भावसिद्ध सा-मग्री भाव निज स्वभावनी सिद्धता निज स्वभावनो सिद्ध थाउं तद्रूप सामग्री ते सामग्री सबंधीहेतु सामग्री संबन्धि कारण छे. तेरे नाम ते कारण स्यो किस्यो निस्संगी मुनि भाव निस्संगी मुनिपणो निस्संगी मुनिभावपणो ते स्युं संग नामसंबध नाम-शरीर पुद्गलादिक पण रह्या छे, परणम्या ते पुद्गल ते पुद्गलोथी निस्संगपणो छे, पोताना पुद्गल नथी जाणता, पुद्गलोनी पर-चर्या मात्र मूकी दीधी छे, मुनिभाव नामस्वभावे मुनिराजपणो ते छे, एटले तदाकारवृत्तिपणो तेहने कहिये तेरमें गुणठाणानो अंत्य अरु चौदमो गुणठाणो हिवे थास्ये ते पोतेज कर्त्ता आ-गळ गुंथ्युं छे. तेहिज लिखे ॥ ११ ॥

हेयत्यागथी ग्रहण स्वधर्मनोरे,
करे भोगवे साध्य ।

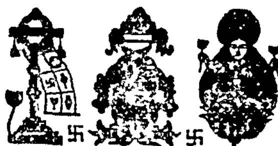
स्वस्वभाव रसिया ते अनुभवेरे,
निजसुख अव्याबाध ॥ सा० ॥ १२ ॥

हेय त्यागथी भावसाधन जिवारे सिद्ध थयो तिवारे हेय त्याग–छोडवा योग्य जीको वस्तु स्वस्वरूपरो विघनकारी जे पंच्यासी प्रकृति जूना कपडां प्राय तेहनो जे अंत करवो खपाववो तद्रूप हेय–त्यागथी, ग्रहण स्वधर्मनोरे लेवो स्वधर्मनो आत्मत्वधर्म अनंतज्ञानदर्शन चारित्रादिकनो ग्रहण करे, तद्रूप स्वरूपनो ग्रहण करे भोगवे, साध्य साधवा योग्य वस्तु स्वधर्म तेहनी सिद्धता ते जे भोगवे, लघु पांच अक्षरनो उच्चारणरो काल, तिण प्रमाणे चौदमा गुणठाणामें भोगवे, पछे स्वस्वभाव रसियाने आपरो स्वभाव पूर्वे कह्यो ते अनंतज्ञानादि तेहनो रसियो थयो छतो निज सुख अव्याबाध पीडायेंकर रहित तेहने अनंतकाल तांइ भोगवे, चौदमें गुणठाणेरे अंति में एक समयावच्छिन्ने चरम समयमें सिद्ध पुहुच्यो, पुहच्यां पछे प्रथम समय सो तो आदि छे, सिद्धमां पुहचणरी आदि छे. अनंतेकाले उठेहीज रहणो तिणसुं अनंत छे, तेथी सादि अनंत भांगो सिद्धमां छे इतिश्रेयः ॥ १२ ॥

निःस्पृह निर्भय निर्मम निर्मलारे,
करता निज साम्राज ।
देवचंद आणायें विचरतारे,
नमिये ते मुनिराज ॥ सा० ॥ १३ ॥ इति

आगली गाथारो संबंध जोरावरी मिलावणो पडे छे, सिझाय कर्त्ता महा मोटा तेथी विरुद्ध कहिवाय नहीं. प्रथम गाथानो ते संबंध अंतिम ए संबंध ते पोतेही विचारी लेज्यो. निस्पृहवांछा रहित इसा ते मुनिराज छे, निर्भय इहलोक परलो-

कादि भय तेणें कर रहित इसा ते मुनिराज छे, निर्मल गयो छे कर्ममल जे हुंती इसा थका करता निज साम्राज स्वरूप संबंधी निज राज्य-आपणो राज्य कर रह्या छे देवचंद्र आणाए विचरतारे ॥ देवेषुचंद्रइवचंद्रोदेवचंद्रः संसार संबंधी देवता विषे चद्रमारी परे कर्मरहितपणा माटे उज्वल महाइस्या ते वीतराग देव तीर्णारी आणा आज्ञा ते विषे विचरता-प्रवर्तता नमिये ने मुनिराज इसा ते मुनिराजने नमियें, ए दोय अंतिम पदारों प्रथम पक्ष संबंधित अर्थ छे हिवे द्वितीय पक्ष संबंधित होय अतिम पदारों अर्थ लिखीये छे, देवचंद्र कविराज एहवुं कहे-जिनेश्वरनी आज्ञा समय प्रमाणे प्रवर्त्तता एहवा जे मुनिराज तेने नमस्कार करीये वारवार इति सटंकः ॥ इति ज्ञानसारजी कृत स्वाध्याय वालावबोध संपूर्णम् ॥



बडी साधु वंदना.

ॐ नमः अथ तेर ढालकी बडी साधु वंदना लिख्यते॥

॥ दोहा ॥

अरिहंत सिद्ध साधु नमो, नमतां कोड कल्याण;
साधुतणा गुण गाईशुं मनमें आणंद आण. ॥ १ ॥
गुण गावुं गीरूवातणा मन मोटे मंडाण,
गीरुआ सहेजे गुण करे सिझे वंछित काम. ॥ २ ॥
इणहीज अढी द्वीपमें जयवंता जगदीस;
भाव करी वंदन करुं उल्लक मन अति लीन. ॥ ३ ॥
भावप्रधान कह्यो तिसे सबमें भावज जाण;
ते भावे सबकुं नमुं अनंत चोवीसी नाम. ॥ ४ ॥
उठ प्रभाते समरो सदा साधु वंदना सार;
गुण गावों मोटातणा पाप रोग सब जात. ॥ ५ ॥

॥ ढाल १ ली. ॥

चोपाइनी चालमें ॥

पांच भरत पांच इरवत जाण, पांच महा विदेह वखाण;
जेह अनंत हुवा अरिहंत, कर जोडी प्रणमुं ते संत. ॥ १ ॥
जेहि वडा विचरे जिणचंद, खेत्र विदेह सदा सुखकंद,
कर जोडी प्रणमुं तस पाय, आरत विघन सहु टली जाय.॥२॥
सिद्ध अनंता पनरे भेद, ते प्रणमुं मन धरी उमेद;
आचारज प्रणमुं गणधार, श्री उवझाय सदा सुखकार. ॥ ३ ॥

साधु सदा प्रणमुं केवली, काल अनादि अनंते वली;
जेहि वडा विचरे गुणवंत साधु साधवी सहु भगवंत. ॥ ४ ॥

ते सहु प्रणमुं मन उल्लास, अरिहंत सिद्ध ने साधु प्रकाम;
साधु वंदना करु हितकार, ते सांभलजो सहु नरनार. ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

इणही जंबू द्वीपमें भरतज नामे क्षेत्र,
जिनवर वचन लही करी निर्मल कीधा नेत्र. ॥ १ ॥

तिहां चोवीसे जिण हुवा रीषभादीक महावीर,
पूर्व भाव करी प्रणमीये पांमीजे भवतीर. ॥ २ ॥

पूर्वभव चक्रवर्त्ति थया, रिषभदेव नरइंद,
अजितादिक तेवीस जिण, राजा सहु मडलीक. ॥ ३ ॥

व्रत लेई पूर्व चवदे रीषभ भण्या मनरंग,
पूर्वभव तेवीस जिण भण्या अग्यारे अंग. ॥ ४ ॥

वीस स्थानक तिहां सेवीया, बीजे भव सुरराय,
तिहांथी चवी चोवीस जिण, ते हुवा प्रणमुं पाय. ॥५॥

॥ ढाल २ जी. ॥

नमणी रमणी ॥ ए देशी ॥

श्री चक्रवर्त्ति पूर्वभव जाण, वैर नाम तिहा नाम वखाण;
ऋषभदेव प्रणमुं जग भाण, गुण गावतां हुवे जन्म प्रमाण. ।१।
वीमराई पूर्वभव नाम, अजित जिणेसर करुं प्रणाम;
विमलवाहन पूर्वभव राय, श्री संभव प्रणमुं चीत लाय. ॥२॥
पूर्वभव धर्मसी राजान, अभिनंदन प्रणमुं शुभ ध्यान;
पूर्वभव थया सुमति प्रसिद्ध, सुमति जिणेसर प्रणमुं सिद्ध. ॥३॥

पूर्वभव राजा धर्ममित, पद्मप्रभुजीने वांदु नित्य;
पूर्वभव जे सुंदरबाहुं, तेह सुपास प्रणमुं जगनाहूं. ॥४॥
पूर्वभव इगबाहु मुनिस, चंदाप्रभु प्रणमुं निसदीस;
जगबाहु पूर्वभव जीव, प्रणमुं सुबद जिणंद सदीव. ॥ ५ ॥
लठबाहु पूर्वभव जास, श्री शीतल प्रणमुं उल्लास;
दीनरांई कुलतिलक समान, प्रणमुं श्री श्रेयांस प्रधान. ॥ ६ ॥
इंद्रदत्त मुनिवर गुणवंत, वासुपूज्य वांदु भगवंत;
पूर्वभव सुंदर बडभाग, वांदू विमल धरी मन राग. ॥ ७ ॥
पूर्वभव जे राय महिंदर, तेह अनंतजिन प्रणमुं सुखकर;
साधु शीरोमण सिंहरथराय. धर्मनाथ वांदू चित लाय ॥ ८ ॥
पूर्वभव मेघरथ गुणगाउं, शांतिनाथ जिनवर चित लाउं;
पूर्वभव ऋषीमुनि कहीये, कुंथुनाथ प्रणम्यां सुख लहीये. ॥९॥
रायसुदर्शन मुनि विख्यात, वांदु अर्जुन त्रिभुवन तात;
पूर्वभव नंदन मुनिचंद, ते प्रणमुं श्री मल्लिजिणंद. ॥१०॥
सिंहगिरी पूर्वभव सार, मुनिसुव्रतजिण जगदाधार,
अदीन शत्रु मुनिवर शिव साथ, करजोडी प्रणमुं नमिनाथ. ११
संखनरेसर साधु सुजाण, रहनेमि प्रणमुं गुणखाण;
राय सुदर्शन जेह मुनिस, पार्श्वनाथ प्रणमुं निसदीस. ॥१२॥
छठे भव पोटिल मुनि जाण, कोडि वरस चारित्र प्रमाण;
चोथे भव नंदन राजान, कर जोडी प्रणमुं वर्द्धमान. ॥ १३ ॥
चोविसे जिनवर भगवंत, ज्ञानदर्शन चारित्र अनंत;
वारंवार करुं परणाम, अष्टकर्म क्षय करवा काम. ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

मेरु थकी उत्तर दिसे, एहिज जंबु द्वीप,
इरवषेत्र सोहामणो, जिणविध मोती सीप, ॥ १ ॥

जिहां चोवीसे जिण हूवा, चंद्रानन वारिषेण,
एही चोवीसीमें सही, ते प्रणमुं समसेण. ॥ २ ॥

॥ ढाल ३ जी ॥

राग वेलावली ॥ ए देशी ॥

चंद्रानन जिण प्रथम जिणेसरु, दुजा श्री सुचंद भगवंतके;
अगीयसेण तीजा तीर्थकर, चोथा श्री अर्थीनंदिषेण अरिहतके;
त्रिकरण सुद्ध सदा जिण प्रणमुं. ॥ १ ॥

ईरवखेत्र तणारे चोवीस के ऋषभादिक स्वामी अनुक्रम हूवा;
एकसमे जिन हूवा जगदीसके त्रि० ॥ २ ॥

पांचमा निसीदिन थुणीजे, नलिहारी छठा जिणरायके;
सोमचंद सातमा जिन समरु, युतिसेण आठमा सुखसायके. ।३।

नवमे अजीयसेण जिन प्रणमुं, दसमा श्री सीवसेण उदारके;
देवसमा इग्यारमा ध्याउ, वारमा निपत सहित सुखकारके. त्रि० ४

तेरमा असजल जिणतारके, चौदमा श्री जिणनाथ अनंतके;
पंनरमा उपसांत नमिजे, सोलमा श्री गुप्तसेण महंतके. त्रि० ५

सत्तरमा अतिपास सुणीजे, प्रणमुं अठारमा श्री सुपासके;
उगणीसमा मरुदेव मनोहर, वीसमा श्रीधर प्रणमु हुल्लासके. त्रि. ६

इकवीसमा समकोट सुहंकर, बावीसमा प्रणमुं अगीसेणके;
तेवीसमा अगीपुत्र अनोपम, चोवीसमा प्रणमु वारीखेणके त्रि, ७

चोथे अंग थकी ए भाख्या, अडतालीस जिणेसर नामके;
छठे अंग कह्या मुनिसुव्रत, सुखविपाक जगबाहु स्वामके त्रि. ८

तीण पचास ए प्रवचन वचने, एम हुवा अनंत अरिहंतके;
विहरमान वली जिनवर विचरे, केवली साधु सहु भगवंतके. ६

॥ उलाली ॥

गुणनिधि नवसे कोडसागर अंतरे जे केवली,
तेह प्रणमुं भावस्युं ए दुःख जावे सहू टली;
श्री चंद्रप्रभुदीन गणधर सती समणा ध्याईये,
नेउं सागर कोड अंतरे केवली गुण गाईये. ॥ ६ ॥

॥ ढाल ५ मी ॥

सफल संसार अवतार ए हु गिणुं ॥ ए देशी ॥

सुविधि जिणेसर मुनिवरा ए,
साहुणी वंदिये चित्त उछाह ए;
अंतरे कोड नव सागर सहु जिहां,
कालिकसूत्रनी त्रीह भाष्यो तिहां. ॥ १ ॥

स्वामी शीतल जिण साधु आणंद ए,
सती सुलसा नमू चित आणंद ए;
एककोड सागर तणो अंतरो कह्यो,
एकसो सागर उणो कर संगृह्यो. ॥ २ ॥

सहस छवीस साठ लाख उपरे,
कालिकसूत्रनी छेद ईण अंतरे;
श्री श्रेयांस मुनि गोथ वधाईये,
धारणी साहूणी वले वर्णवी चित्त लाईये. ॥३॥

पूर्वभव गुरु साधु कहु संभूतए,
वीस नंदी वली सुगुण संयुत ए;
अचल मुनिधर नमुं पढम हलधरा ए.
बंधव नृप केसव सीरधरा ए. ॥ ४ ॥

चोपन सागर वीच थया केवली,
वंदीये सूत्रनी त्रीहभाष्यो वली;

इंम विछेद विच सात जिण अंतरे,
   जाणीये शांति जिणवर लखे इखपरे. ॥ ५ ॥

स्वामी वासुपूज्य जिण साधुश्री धर्मधर,
   साहुणी वली जिहां धर्णी उपद्रवहर;
सुगुरु सुभद्र सुबंधव वखाणियेे,
   बीजे मुनि बंधव त्रिपृष्ट हरि जाणीये. ॥ ६ ॥

तीस सागर वीच अंतरे जे थया,
   केवली वंदीये भाव भगतेसया;
विमलजिन वंदीये साधु सीमंधर वली,
   समणी धरणी धरा आगम सांभली. ॥ ७ ॥

गुरु सुदरसण मुनि सागरदत्त ए,
   भवहर बंधव भद्र सिवपत्त ए;
नव सागर वीच अतरे केवली,
   जे थया ते सहु वंदीए वलीवली. ॥ ८ ॥

स्वामी अनंतजिण प्रणमीये जसुगणी,
   समणी प्रेमे नमु सुगुरु श्रेयंसमुनि;
सीस अशोकसु प्रणमुं प्रभयती,
   भ्रात पुरुपोतम केसव नृपति. ॥ ९ ॥

सागर चारनो अंतरो भाखीये,
   केवली वंदीने सीव सुख चाखीये,
जिणवर धर्म औरठ गणधर कहू,
   सती समणा सेवा चांदी सिव सुख लहू. ॥१०॥

पूर्वभव कृष्णगुरु ललतसु सीस ए,
   राम प्रणमुं सुद्रसण नीसदीस ए;

रायश्री महाउपमचक्री वांदु कर जोडी,
समुद्र गुरु अपराजीयो ए गाउं मनमोडी;
राम रूषीश्वर वंदीयेए नाम पौम जेह,
केसव नारायण तणोए बंधव कहुं तेह. ॥ १० ॥

लही केवल मुक्ते गया आठ बलदेव,
नवमो सुरसुख अनुभव लहेसे शिवसुख हेव,
मुनि सुव्रत नमी अंतरो ए वर्ष लाख छ होइ,
केवली सिद्धा तेह प्रणमुं सूत्र जोइ. ॥ ११ ॥

॥ ढाल ७ मी ॥

॥ श्री नवकार जपी मनरंगे ॥ ए देशी ॥

एकवीसमा श्रीनमिजिन वांदु, गणधर सुभपरधानरी माई;
समणी अमीला गुणगावंता, सफल हुवे निज ज्ञानरे माई. ॥१॥

श्री जिन शासन मुनिवर वंदु ॥ ए आंकणी ॥

भक्ति निज शीर नामरी माई, कर्म हणीने केवल पाम्या;
पहुत्या शीवपुर ठामरी माई, श्री नवनिध चौदे रैणजिण त्यागी;

चक्री श्री हरिसेणरी माई, आश्रव छंडी संवर मंडी;
बेगेवरी सिवजैनरी माई. श्री० ॥ २ ॥

वरस वलि इहां पंचलख अंतर, तिहां चक्री जयरायरी माई.
वली अनेरा मुक्ति पहोत्या, ते वंदु मन लायरी माई. श्री० ॥३॥

गौतम समुद्र सागर गाउं, गंभीर थंभीर उदाररी माई;
अचल कंपील अत्नोभ प्रसेण, दशमो विष्णुकुमाररी माई. श्री०॥४॥

पोसम प्रणमुं श्री नेमीश्वर, समण ते सहस अठाररी माई;
वरदत्त आदि मुनि पनरे, वांदु केवल धाररी माई. श्री० ॥५॥

अचोभ मागर समुद्र वंदु, हेमवंत अचल सुचंगरी माई;
धरणि पुरिय अभिचंद आठमो, मएया इग्यारे अंगरे माई. श्री० ॥६॥

....

अंधक विष्णुसुत धारणी अंगज,मुनिवर एह अठाररी माई श्री०॥७॥
वसुदेव देवकी अंगज छऊं, आणीमेण अणंतसेणरो माई;
अजिसेण ने अगिहयरिपु, देवमेण मनुसेणरो माई. श्री० ॥८॥
सुलसाना घरे सुरजोगे, वधीरमन ऋत्तीसरी माई;
छंडी छठ तप चउदश पूर्वी, मंयम वरसे वीसरी माई. श्री० ॥९॥
वसुदेव देवकी अंगज आठमो, मुनिवर गजसुकुमालरी माई;
सहि परिसहो मुक्ति पहोत्यो, ते वंदु त्रिकालरी माई. श्री० ॥१०॥
सारुण दारुण कुमर अणाढी, चउदे पूर्व धाररी माई;
वीस वर्ष संयम आराधी, कीधो कर्म संहाररी माई. श्री० ॥११॥
जाली मयाली ने उवयाली, पुरिमसेण वारीसेणरी माई;
बारे अगे मोला वरसे, पाल्यो संयम तेणरी माई. श्री० ॥१२॥
वसुदेव धरणी अंगज आठे, रमणी तजी पचासरी माई;
सुमता भावे शिवपुर पहोत्या, प्रणमु तेह उल्लासरी माई. श्री०॥१३॥
सुमुख दुमुख ने कुवर ए वंदु, बलदेव धारणी पुतरी माई;
वीस वरस सयमधर सीध्या, चउदे पूरव सुतरी माई. श्री० ॥१४॥
रुपमणी कृष्ण कहु कुमर प्रद्युम्न, जंबूवती सुत सांबरी माई;
प्रद्युम्न सुत अनिरुद्ध अनोपम, जासवेदरवी अवरी माई. श्री०॥१५॥
समुद्रविजय शिवादेवीरानंदन, सचनेमी दढनेमरी माई;
बारे अंगे मोला वरसे, रमणी पचासे तेमरी माई. श्री०॥१६॥
समुद्रविजय सुत मुनि रहनेमि, ए सहु राजकुमाररी माई;
कर्म हणीने मुक्ते पहोत्या, [illegible] प्रणमु वारंवाररी माई. श्री०॥१७॥

आरज्यां जखणी आददेसि त्तणी, समणी सहस चालीसरी माई,
साधव्यां सिद्धी तीन सहस ते, वंदु कुमति टालरी माई. श्री०॥१८॥
पौमा गौरीने गंधारी, लखमणा सुमां नांमरी माई;
जंबूवती सतभामा रुखमणी, हररमणी अभिरामरी माई. श्री०॥१९॥
मूलसरी मूलदत्ता विउ, संव कुमररी नाररी माई;
अंतगढ अंगे ए सहू भाखो, पामी भवनो पाररी माई. श्री० ॥२०॥
उत्तराध्येन राजेमती सती, संयम सीलरी खाणरी माई;
प्रतिबोधी रहनेमि पाम्यो, सासता सुख निरवाणरी माई. श्री० २१

॥ ढाल ८ मी ॥

गौतम समुद्र कुमार सागर गंभीरा ॥ ए देशी ॥

थावच्चा सुत सुखसे लग आद दे, पंथक प्रमुख मुनि पांचसो ए,
मास संलेषणा करी तप अति घणां, पुंडरीक गिरी सिवपुर वर्यो ए;
युधिष्ठिर भीम अति बली, अर्जुन नीकुल सहदेवजी ए,
राय श्रीपरिहरी, सुध संयम धरी, साधुजी शीवपदवी भजीए ॥१॥
चौद पूर्व धरी थीवर धर्मघोष, धर्मरुचि सीस गुण भर्यो ए,
नागश्री ब्राह्मणी वीष दीयो पापणी, तुंबानो मास पारणो कीयोए;
सर्वार्थ सिद्ध अवतरी तद नर भव करी, क्षेत्र विदेहमे सिव गयोए,
ते मुनि वंदतां कर्मवली नंदतां, जन्म जीवीत सफलो थयो ए. ॥२॥
समणी गुवालीया तीण सुख मालीयां दीषोयाता सहुगुण भणुए,
तीम वली सुव्रता द्रौपदी संयता, नेम सासण गुण थुंणुए;
विमल जिन अनंत अंतरे राय महि, बलदेव पदमावतीए,
तासते अंगए कुमर विरङ्ग ए, तरुणी बत्तीस तरुणी पत्तीए ॥३॥
ताम सिद्धत्थ गुरु पास संयम वरु, ब्रह्मलोके सुर उपन्यो ए,
चवी बलदेव घरे रेवती उपद्रव रे, निषढ नाम सुत संपनी ए;

नेम पाई अनसरी अथिरघन परहरी, रमणी पंचास तजी व्रत अह्योए,
करी बहु समदम वरस नव संयमे, पालीने सर्वार्थ सिद्ध लह्योए ॥४॥

क्षेत्र विदेहमे केवल सयम, सिद्धही मोले ते मुनी ए,
इण परि अनीवह दोए गतीस सहु यति कहु गुण थूणीए;
दमरइ द्रढ रहे महा धनुतेह, सतधनु गुण सुज मन वस्याए,
नवधनु दसधनु सहि धनु मुनि एह भारवीयो सूत्र वन्हही दशाए ॥५॥

पूरव भव इगगुरु नाम दुसमसेण, ललत नाम ते पूरवभवे ए,
राम बलदेव वली नवमो हलधार, ब्रह्म लोके सुर अनुभवे ए;
चविजिण तेरमो नाम निकसाय, थाय सीसही सुरतरु समोए,
बंधव केशव एक अवतार, अमम होसी जिण बारमो ए ॥६॥

सहसबले त्यांमिया सातमे भापीयां वरस पंचास इहां अंतरोए;
तिहां वले चित्तमुनि सिद्ध मंपत्तसु, नाम लेईने कीरत करुं ए,
पूर्वभव बधव चक्री ब्रह्मदत्त, सातमी नरक गयो मरी ए,
ईण अंतरे वली नमु बहु केवली वेगेसिव सुंदरी ज्यां वरीए ॥७॥

॥ ढाल ९ मी ॥

॥ रामचद्रके बागमें चम्पो मोरी रहोरी ॥ ए देशी ॥

तेवीसमा जिन तारक, पुरसा दाणीय पास,
मुनिवर सोले सहस, गणधर आठ हुलास,
आज दिने सुभ सुभ घीक, वादु वासठ नाम,
वली ब्रह्मचारी सोमल, श्रीधर करू प्रणाम ॥ १ ॥

वीरमइ जस आदि, सिद्धा सहस प्रमाण,
तेह मुनिवर वंदतां, होवे परम कल्याण;
साधवी संख्या सहु अडतीस सहस वखाणुं,
पुष्प चूलादि सहस दो, सिद्धी ते मन आणु ॥ २ ॥

समणी सुपासी यासी भुसी, भासी धर्म चौजाम,
ए अधिकार कह्यो, श्री ठाणांग सुठाम;
चउदस पूर्वी वली, चौनाणी केसी कुमार,
परदेशी प्रतिबोधियो, कीधो बहु उपगार. ॥ ३ ॥

वरस अढाई सो अंतरो सिद्धा साधु अनेक,
ते सौ वंदु सुविनयसु, आणी चित्त विवेक;
मुनिवर चौदे सहस गुरु, प्रणमुं श्री महावीर,
सातसो केवली वंदीये, गणधर एकादस धीर. ॥ ४ ॥

इंद्रभूति अग्निभूति, तीजा वांदु वायुभूति,
विगत सुधर्मा वंदतां, ममगति निर्मल होई;
मंडीपूत मोरी पूत, प्रकंपित नित सीवदास,
अचल आतमेतार्य, प्रणमुं श्री प्रभास. ॥ ५ ॥

वीर गए वीर जसा नृप, संजइणी जनेय,
सेतन संब उदायण, नरपत संख कहाय;
वीर जिणेसर आठेइ, दिक्षा राई जाण,
मुनिवर पोटिल वांदतां, गोत्र तीर्थंकर ठाण. ॥ ६ ॥

पालक श्रावक पुत्र ते, वांदु समुद्र पाल,
पुन्य ने पाप दो क्षय करी, सिध्या साधु दयाल;
नयरी सावत्थी दोउ मिल्या, केसी गौतमस्वामी,
शिक्षारि संका काढने, पंच महाव्रत लहवरिया शीरनामी.।७।

॥ ढाल १० मी ॥

॥ अरणक मुनिवर चाल्या गौंचरी ॥ ए देशी ॥

महा कुंड नयरिनो अधिपति, नाहण कुल नाम चंदोजी;
वीर जिणेसर तात जगगुण नीलो, ऋषभदत्त मुणिंदोजी. ॥ १ ॥

नितनित वांदु मुनिवर ए सहु, त्रिकरण सुध त्रिकालोजी;
विधसु देई तिन प्रदक्षिणा, करु अंजलीनिज भालोजी. नि० ॥२॥
राई उदाई सिंह दम विरनो, निर्मल संजम धारोजी;
सेठ सुदर्शन मुनि मुगते गयो, सुणी महाबल अधिकारोजी. नि०॥३॥
काल संवेगी गंगायो गणी, पिंगल ने शिवराजोजी,
काम उदये ऐवंतो मुनि, वंदता मीजे काजोजी. नि० ॥ ४ ॥
मकाई मुनिकिंकम वंदीये, अरजुन माली हुल्लासोजी;
काशव मघ घर जाणीये, केवलरूप कैलासोजी. नि० ॥ ५ ॥
मुनि हरीचंद बारतिये वली, सुदर्शन पूरण मेदोजी;
साध समण भद्र समता आदरे, सुपईठ समय मंदोजी. नि० ॥ ६ ॥
मेघ मुनीश्वर ऐवंतो मुनि, राय ऋषी अलक्षोजी;
श्री जिण सीस ए सहु मुगते गया, सेवे सुरनर सकोजी. नि०॥७॥
सहस छत्तीसे समणी चंदणा, आदे चउदसे सिधीजी;
देवानंदा जननी वीरनी, केवलज्ञाने समिदीजी.
नितनित वंदु समणी ए सहु नि० ॥ ८ ॥
समणी जैवती पढम सिम्यातरी, सिद्धा केवल पामीजी;
नदा नंदवती नंदीतरा, वली नंदसेणीया नामोजी. नि० ॥ ९ ॥
मरुतस मरुता महामरुता नमु, मरुदेवा वली जाणीजी;
भद्रा सुमद्रा सुजया जिनतणी, पाली निर्मल आणीजी. नि० ॥१०॥
समणो समणी सुइदीना नमुं, राणी श्रेणकरायजी;
मास संलेपणा तेरे सिद्ध थई, प्रणम्या पातीक जायजी. नि० ॥११॥
काली सुकाली महाकाली नमुं, कन्या सुकन्या तीमोजी;
महा कन्या वीर कन्या साहुणी, राम कन्या शुद्ध नेमोजी. नि०।१२।
प्रियसेण कन्या महासेण कन्या, ए दश श्रेणिक नारीजी;
निजनिजनंदन काल सुणे करी, लीधो सयम भारीजी. नि० ॥१३॥

ए दश समणी ते पेरणावली, आदे दश प्रकारोजी;
लहि केवल ए सऊ मुक्ते गई, ते वंदु बहुवारोजी. नि० ॥ १४ ॥

॥ ढाल ११ मी ॥

सुखकारण भवियण समरी नीत नवकार ॥ एहनो देशी ॥

श्री धर्मथोक मुनीश्वर, महियल गुरु सुतधार;
जिण पूछयो रे हो, लोकालोक विचार. ॥ १ ॥
वेसाले सावए, पिंगल नाम निहंत;
पर वायक पूछया, खंधक समय पहंत. ॥ २ ॥
काली पुत्र मेहल, आणंद ऋषयो ज्ञान;
वले कासव चोथी, थिवरां पास संतान. ॥ ३ ॥
मुनि तीस कुरुदत्त, वली नियंतो पुत्त;
धन नारद पुत्र मुनि, साम हती संयुत्त. ॥ ४ ॥
मुनि चत्र सर्वण मुइ, चीपर कही आणंद;
जिन सीसो न्याधो, धन धन सिही मुणिंद. ॥ ५ ॥
वली पुछया जिनने, लेश्यादिक बहु भेद;
गुण गाउं महा मुनि, मार्कंडो पुत्र उमेद. ॥ ६ ॥
हवे श्रेणिक सुत कहु, जाली कुवर मयाली;
उवयालि पुरसमेण, वारिसेण आपदा टाली. ॥ ७ ॥
देह दंतने लठ दंत, धारणी नंदण होय
वेहलने वेधास, चेलणा अंगज होय. ॥ ८ ॥
ईक नंदा नंदण, मुनिवर अभय महंत;
देहसेणने महासेण, लठदंतने गुढदंत. ॥ ९ ॥
सुध दंत कुमर हल, द्रुमने द्रुमसेण;
गुण गाऊं महा द्रुमसेण, सिंहने सिंहसेन. ॥ १० ॥

मुनिवर महासेन, पुन्यसेन परधान;
ए धारणी अंगज, तेजे तरुण समान. ॥ ११ ॥
नृप श्रेणिक नंदन, इय दस तेरे कुमार;
आठ आठ रमणी तजी, अनुत्तर सुर अवतार ॥ १२ ॥
तिण अवसर नयरी, काकदी अभिराम;
तिण पूरव देशे भद्रा, सारथवाही नाम. ॥ १३ ॥
तसु नंदन धन्नो, सुंदर रूप निधान;
तिन परणी तरुणी, बत्तीस रंभ समान. ॥ १४ ॥
जिन वयण सुणीने, लीधो संयम जोग;
मुनि तरुणपणेमे, छंड्या रसना भोग. ॥ १५ ॥
नित छठ तप पारणो, आंबीले भुत्त भात;
जस समणवणी मग, कांई न वछे तिलमात. ॥ १६ ॥
अति दुक्कर तपस्या, आराधी नव माम;
एक मास सथारे, सर्वार्थ सिद्ध वास. ॥ १७ ॥
काकदी मुणि चत्त, राजगृही सरीदास;
पेलक ए वेउं, एकण नगर हुल्लास ॥ १८ ॥
राम पुत्रने चंद्रमा, साकेतपूर वर ग्राम;
पुटीमां पेढा ले, पुत्र वाणीयां ग्राम. ॥ १९ ॥
हथणापुर पोटिल, सहु ए धना समान;
तरुणी तप जिणनी, संयम वर सीमान. ॥ २० ॥
हवे वहल कुमर कहु, राजगृही आवास;
सर्वार्थ सिद्ध पहुतो, धर संयम छई म्मास ॥ २१ ॥
एक भव शिवगामी, ए श्री जिनवर सीस;
सहु नवमे अंगे, माख्या मुनि तेवीस. ॥ २२ ॥

हवे पौम महा पौम, भई सुभद्र वखाण;
पौमभद्र ने पौमसेन, पौम गुप्त मन आण. ॥ २३ ॥
नलिणी गुल्म आणंद, नंदन एह मुनिजान;
कालादिकना सुत, कप्पवडंसीया ठाण. ॥ २४ ॥
मुनि उदग पूछया, गौतमने पचखाण;
चौ जामथकी कीयो, पंचतणी परिमाण. ॥ २५ ॥
जिणे जिन मत मांडी, छंडो कुमत अनेक;
ते आर्द्र कुमर मुनि, धन धन बुद्ध विवेक. ॥ २६ ॥
गर्व भाली बोध्यो, संजयी नृप अणगार;
मुनि चत्री भाख्या, बहुविध अर्थ प्रकार. ॥ २७ ॥
मही मंडल विचरे, विगत मोह अमाथ;
गुण गावंता अहोनिस, संपजे शिवपुर साथ. ॥ २८ ॥
नृप श्रेणिक नंदन, मुनिवर मेघ सुजाण;
तज आठ अंतेउर, उपन्यो विजय विमाण. ॥ २९ ॥
अपमाणी रैणा, आदर्यो संयम जेह;
जिन पालक मुनिवर, सोहम सुर थयो तेह. ॥ ३० ॥
हरि चोर चीलायतो, सुसमा तात ते धन्नो;
आराधी संयम सोहम, सुर उपन्नो. ॥ ३१ ॥
श्री वीर जिणेसर, सासण मुनिवर नाम;
निज भक्ते गाउं, तेहतणा गुण ग्राम. ॥ ३२ ॥

॥ ढाल १२ मी ॥

॥ विशालीआ पिंगल ॥ ए देशी ॥

धर्मघोष गुरु सीसदत्त, मासने पारणे तेह सुपुत्त,
प्रतिलाभ्यो शुभ चित्त, सुमुख थयो भव विय सुबाहु;
सुर थयो संजम ग्रही साहू, गुण तसु गाउं नित्त. ॥ १ ॥

श्री जुगबाहु जिणवर आवे, विजय कुमर प्रति लाभ्यो भावे,
बीजे भव भद्र नंदी, भोगवजी थयो साधु मुणींद;
करी सलेषणा लह्यो सुख वृंद, गुण तसु गात आणद. ॥ २ ॥
ऋषभदत्त पहिले भव संत, तिन प्रति लाभ्यो मुनि पुष्पदत,
तिहांथी थयो सुजात, तृण सम जाणी सहु रिद्ध वात;
आदरी आठे प्रवचन मात, भवियण तसु गुण गात. ॥३॥
पूर्वभव नृपति धनपाल, वीमषण भद्र ने दान रसाल;
देई शिवा सीव थाय, सयम लेई ते मुनिराय;
लहि केवल ने शिवपुर जाय, ते वंदु मन लाय ॥ ४ ॥
पूर्वभव मेघरथ राजन, सुधर्म मुनिने देई दान;
बीजे भव जिनदास, संवर पाली जे थया सिद्ध;
केवल दर्शन ज्ञान समिद्ध, वादु तेह उल्लास. ॥ ५ ॥
मित्राई पूर्वभव जाण, सयुत विजयने दोनुं वखाण,
कुमर ते धनपत होई, वीर समीपे संयम लीधो;
ततक्षण कर्म हणीने सिधो, दिन प्रति वंदु सोई. ॥ ६ ।
पूर्वभव नागदत्त धनेसर, प्रतिलाभ्यो इंद्रपुर मुनिसर,
महाबल नाम कुमार, संयम लेई कारज सार्या,
भवसायरथी चेतन तार्या, ते वदु बहु वार. ॥ ७ ॥
गृहपति हुतो धर्मघोष, तिन प्रतिलाभ्यो अति संतोष,
नाम मुनि धर्म्मसिंह, बीजे भव थयो भद्रनंदी;
मुक्ति गयो भव बधन छंदी, ते वदु मुनि इह ॥ ८ ॥
पूर्वभव जितशत्रु नरेसर, प्रतिलाभ्यो धर्मव्रत सुलेसर,
महिचंद नाम कुमार, तिण छंडी बहुराई कुमार;
पांचसे अपछरा नेउणीहार वदु केवलधार. ॥ ९ ॥

विमलवाहण नामे राजान धर्मरुचिने देई दान,
वरदत्त हुवो भव बीजे संयम लेई सुरश्री पामी;
कल्प अंतर जे शिवपुरगामी कीरति तेहनी कीजे. ॥ १० ॥
पूर्वभव दान देई उदार बीजे भव थया रायकुमार,
त्यां तजी पांचसे नार सहु थया वीणजिणेसर शिष्य;
सुखविपाके एह मुनेस पंचमहाव्रतधारी. ॥ ११ ॥
नामे मातंग ने सीमल गाउं रामगुतिसुदर्शण ध्याउं,
नमु जमाली भोगाधि किंकम पेलक कालो ये तीजी;
अंतगढ अंगे वाहिण बीजी घणां अंग संभाली. ॥ १२ ॥
पूर्वभव महा पौम ते बीजे तेतली पुत्र मुनि प्रणमीजे,
महापौम पुंडरीक तात वली वंदु जितशत्रु सुबुद्ध;
कर्म हणी तिण करी विशुद्धी ते वंदु विख्यात. ॥ १३ ॥
मुनि जयघोष विजयघोष वांदु वली श्री नाम मृगा पुत्र वांदु
कमलावती इक्षुकार पुत्र पुरोहित वली तसु नार;
नामजसा संवेगे सारी वंदनां नित्य जयकारी. ॥ १४ ॥

॥ ढाल १३ मी ॥

॥ चतुर विचारीयेरे ॥ ए देशी ॥

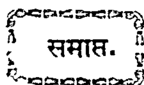
मुनिदास ने धन्नो वली वखाणीएरे सुणीखत्तकित्तीयसंयुत्त,
संगण सालभद्र आणंद तेतलीरे दशार्णभद्र एवंत. ॥ १ ॥
मुनि गुण गाईयेरे गावंतां परमाणंद सिवसुख साधणे करी,
अहोनिस संपजेरे भाजेभव भवदंद. मु० ॥ २ ॥
अणुत्तर अंगनी एहीज बीजी वाचनारे एदस मुनिवर नाम;
नंदिसूत्रमे साधुसुभद्दपणे कह्यारे नंदीसेण अभिराम. मु० ॥३॥
विषम नंदीफल अधिकार धन्नो मुनिरे धन्नो देव दिनतात;
सुव्रता समणी गुरुणी सिष्यणी पोटलारे पुंडरिक कुंडरिकन भ्रात.।४

गुरुणी सुभद्रा केरी समणी सुव्रतारे पूर्णभद्र सुचंग, ॥५॥
मांणभद्रने दत्तशीवनल मुनिरे तिण तज्या लोभ सताप;
इद्र परीक्षा अवसर उपशम आदरोरे, नमो नमावे आप मु० ॥६॥
सुरवर सेवत श्रीहरि केमो वलमुनिरे, सचर धार सुलेस;
सक्रने प्रे (हो?) डी प्रतिमयम आदर्योरे, दशार्णभद्र नरेस मु० ॥७॥
मुनि करकंडराजा देश कलिंगणोरे, दुमुही पंचभूपाल;
वली विदेही नृपति नमि नामे व्रतिरे, निग्घाई गधार रसाल.मु० ॥८॥
सेतवीजे ने महिवल ए सहु राजवीरे, व्रत लेई थया अणगार;
कामकपाय निवारी सीतल आतमारे, थिवरते ग्रक गणधार. मु०।९।
हवे श्रीवीर जिणेश्वर सीस सुहमगणीरे ताम परंपर एह;
जंवू प्रभव वलि मय्यभव जाणीयेरे, मनगपीया मुनितेह. मु०॥१०॥
श्रीजसोभद्र ने मुनि सभूतवीजे वलीरे, भद्रबाहू थूलभद्र;
एम अणेरा जिणवर आणमांही हुवारे, ते मुनि गाउं समुद्र.॥मु०।११।
काल अनवे मुनिवर मुक्ते गयारे, सप्रति विचरे तेह;
नाणदर्शन ने चर्णकर्ण धुरधरारे, श्रीदेवचदे तेह. मु० ॥१२॥

॥ कलश ॥

इम चोवीम जिणवर प्रथम गणधरचक्री हलधर जे हुवा,
ससारतारक केवली वली समणसमणी संथुवा.
मवेग श्रुतधर साधु सुखकर आगम वचने जे सुण्या,
दीपचद गुरु सुपमाये श्री देवचद्रे संथूण्या. ॥ १३ ॥

॥ इति श्री वडी माधु वदना तेर ढालकी चोपाई संपूर्णम् ॥





आ ग्रन्थना कर्ता श्रीमद् देवचंद्रजीनुं स्वर्गगमन शहेर अमदावादमां दोशीवाडानी पोळमां-डहेलानो उपाश्रय जेने ते वखते देवचंद्रजीनी डहेली कहेता तेमां संवत १९११ (मारवाडी १८१२) ना भादरवा वद ०)) ना रोज थयुं. तेमनो अग्नी संस्कार शहेर अमदावादमां हरीपुरामां करवामां आवेलो. एम तेमनुं जीवन चरित्र नामे देवविलास जे तेमना शिष्ये बनावेल छे तेमां जणावेल छे.

हाल तपास करतां अमदावाद हरीपुरामां देरासरना मुख्य द्वार सामे उपाश्रयना मकानमां एक देरीमां तेमनी पादुका स्थापन करेल छे ते उपर नीचे मुजब लेख कोतरेलो छे.

श्रीमद् जीनचंद्रसूरि शाखायां श्रीखरतरगच्छे संवत् १८१२ वर्षे माहावद ६ दिने उपाध्याय श्री दीपचंद्रजी शिष्य उपाध्याय श्री देवचंद्रजीनां पादुके प्रतिष्ठिते.



श्री अध्यात्मज्ञानप्रसारक मंडळ.



स्व० श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजी ग्रंथमाळामा प्रगट थयेला ग्रंथो.



ग्रंथांक		पृष्ट	किंमत
	१ अध्यात्म व्याख्यानमाळा	२०६	०-४-०
*	२ भजनसंग्रह भाग २ जो	३३६	०-८-०
*	३ भजनसंग्रह भाग ३ जो	२२५	०-८-०
*	४ समाधिशतकम्	६१२	०-८-०
*	५ अनुभवपचिशी	२४८	०-८-०
*	६ आत्मप्रदीप	३१५	०-८-०
*	७ भजनसंग्रह भाग ४ थो	३०४	०-८-०
	८ परमात्मदर्शन	४००	०-१२-०
	९ परमात्मज्योति आवृत्ती २	५००	१-८-०
*	१० तत्त्वबिंदु	२३०	०-४-०
	११ गुणानुराग (आवृत्ति बीजी)	२४	०-१-०
*	१२-१३ भजनसंग्रह भाग ५ मो तथा ज्ञानदीपिका	१००	०-६-०
	१४ तीर्थयात्रानु विमान (आ बीजी)	छपाय छे	
*	१५ अध्यात्मभजन संग्रह	१९०	०-६-०
	१६ गुरुबोध (आ बीजी)	२५०	०-८-०
	१७ तत्त्वज्ञानदीपिका आ २	१२८	०-१०-०
	१८ गहूंलीसंग्रह भा १ आ २	११२	०-६-०
	१९-२० श्रावकधर्मस्वरूप भाग १-२	४०-४०	०-१-०
*	२१ भजनपदसंग्रह भाग ६ ठो	२०८	०-१२-०
*	२२ वचनामृत	८३०	०-१४-०
	२३ योगदीपक	३०८	०-१४-०
	२४ जैन ऐतिहासिक रासमाळा	३०८	१-०-०

२५ आनंदघनपद (१०८ संग्रह आ. २.	८०८	३-०-०
२६ अध्यात्मशांति (आवृति त्रीजी)	१३२	०-३-०
२७ काव्यसंग्रह भाग ७ मो.	१६६	०-८-०
२८ जैनधर्मनी प्राचीन अने अर्वाचीन स्थिति	६६	०-३-०
* २९ कुमारपाल (हिंदी)	२८७	०-६-०
३० थी ३४ सुखसागर गुरुगीता.	३००	०-४-०
५३ षड्द्रव्यविचार आवृत्ती ३	२४०	०-४-०
*।·३६ विजापुर वृत्तांत.	९०	०-४-०
× ३७ साबरमती गुणशिक्षण काव्य.	१९२	०-६-०
* ३८ प्रतिज्ञापालन.	११०	०-५-०
३९-४०-४१ जैनगच्छमतप्रबंध, संघप्रगति, जैनगीता.	३०४	१-०-०
४२ जैनधातुप्रतिमा लेखसंग्रह भा. १.		१-०-०
* ४३ मित्रमैत्री.	१७०	०-८-०
* ४४ शिष्योपनिषद्.	४८	०-२-०
४५ जैनोपनिषद्.	४८	०-२-०
४६-४७ धार्मिक गद्यसंग्रह तथा पत्र सदुपदेश भाग १ लो.	६७६	३-०-०
४८ भजनसंग्रह भा. ८	६७६	३-०-०
४९ श्रीमद् देवचंद्र भा. १ आ. २	१०२८	२-८-०
४९ श्रीमद् देवचंद्र भा १ ना चार कडका जुदा पाका बांधेला		३-०-०
× ५० कर्मयोग.	१०१२	३-०-०
* ५१ आत्मतत्वदर्शन.	११२	०-१०-०
·।·५२ भारतसहकारशिक्षण काव्य.	१६८	०-१०-०
५३ श्रीमद् देवचंद्र भाग २ आ. २	१२००	२-८-०
५४ गहुंली संग्रह भा. २ आ. २	१३०	०-६-०
५४ गहुंली संग्रह भा. १-२ भेगा पाका बांधेला		०-१२-०
*. ५५ कर्मप्रकृतिटीका भाषांतर.	८००	३-०-०
५६ गुरुगीत गहुंलीसंग्रह.	१६०	०-१२-०
५७-५८ आगमसार	४७०	०-६-०
* ५९ देववदन स्तुति स्तवन संग्रह.	१७६	०-४-०

६० पूजासग्रह भा १ लो	४१६	१-०-०
६१ भजनपदसग्रह भा ६	५८०	१-८-०
६२ भजनपदसग्रह भा १०	२००	१-०-०
६३ पत्रसदुपदेश भा २	५७६	१-८-०
६४ धातुप्रतिमा लेखसग्रह भाग २	१८०	१-०-०
६५ जैनदृष्टिए ईशावास्योपनिषद भावार्थ विवेचन	३६०	१-०-०
६६ पूजासग्रह भाग १-२	४१५	२-०-०
६७ स्नात्रपूजा		०-२-०
६८ श्रीमद् देवचद्रजी अने तेमनु जीवनचरित्र		०-४-०
६९-७२ शुद्धोपयोग वि सस्कृत ग्रथ ४	१८०	०-१२-०
७३-७७ सघकर्तव्य वि सस्कृत ग्रथ ५	१६८	०-१२-०
७८ लाला लजपतराय अने जैनधर्म	१०८	०-४-०
७९ चिन्तामणि	१२०	०-४-०
८०-८१ जैनधर्म अने खिस्ति धर्मनो मुकाबलो तथा जैनखिस्ति सवाद	२२०	१-०-०
८२ सत्यस्वरूप	२००	०-६-०
८३ ध्यानविचार	८५	०-८-०
८४ आत्मशक्तिप्रकाश	१४०	०-४-०
८५ सावत्सरिक क्षमापना	८०	०-३-०
८६ आत्मदर्शन (मणीचद्रजीकृत सज्झायो) नु विवेचन	१५०	०-४-०
८७ जैनधार्मिक शकासमाधान	५५	०-२-०
८८ कन्याविक्रय निषेध	२००	०-६-०
८९ आत्मशिक्षा भावनाप्रकाश	११५	०-७-०
९० आत्मप्रकाश	५६५	१-८-०
९१ शोक विनाशक ग्रथ	८०	०-१-०
९२ तत्त्वविचार	१२५	०-६-०
९३-९७ अध्यात्मगीता वि सस्कृत ग्रथ	२०५	१-०-०
९८ जैनसूत्रमा मूर्तिपूजा	६६	०-३-०
९९ श्री यशोविजयना निबध	२१०	०-६-०
१०० भजनपदसग्रह भाग ११	२२०	०-१२-०
१०१ ,, भाग १ ला ४ थी	२००	०-८-०

१०२	गुजरात बृहद विजापुर वृत्तांत.	३००	१-४-०
१०३	श्रीमद् देवचंद्रजी विस्तृत जीवनचरित्र तथा देवविलास	२३०	०-१२-०
१०५	मुद्रितजैन श्वे. ग्रंथगाइड	३८०	१-८-०
१०६	कक्कावली-सुबोध.	४६०	१-४-०
१०७	स्तवन संग्रह (देववंदन सहित)	२७५	०-१०-०
१०८	पत्र सदुपदेश भाग ३	१००	०-६-०
१०९	श्रीबुद्धिसागर सूरीश्वर स्मारक ग्रंथ (सचित्र)	२३०	०-१२-०
११०	प्रेमगीता संस्कृत		०-६-०

ग्रंथो मळवानां ठेकाणां:—

१ वकील मोहनलाल हीमचंद-पादरा (गुजरात).

२ शा. आत्माराम खेमचंद-साणंद.

३ शा. नगीनदास रायचंद भाखरीया-महेसाणा.

४ शा. चंदुलाल गोकळभाइ-विजापुर.

५ शा. रतीलाल केशवलाल-प्रांतिज.

६ श्री बुद्धिसागरसूरि जैन समाज-पेथापुर.

७ श्री अध्यात्म ज्ञान प्र. मंडळ—
हेड ओफीस-चांपा कांटा-मुंबइ.

८ एन. एम. त्रीपाठी कुं०
प्रीन्सेस स्ट्रीट, कालबादेवी-मुंबइ.

९ जैन सस्ती वांचनमाळा-भावनगर.

---

* आ निशानीवाळा ग्रंथो शिलकमां नथी.

× आ ग्रंथो ब्रिटिश केळवणी खाताए मंजुर करेला छे.

+ आ ग्रंथो श्रीमंत गायकवाड सरकारना केळवणी खाताए मंजुर करेला छे.